श्री बटुक भैरव साधना

4687
Q2:23/276

डा. रुद्रदेव त्रिपाठी

श्रीबटुक-भैरव-साधना

[श्री बटुक-भैरव की साधना से सम्बद्ध सर्वाङ्गीण परिचय तथा नित्यकर्म-प्रयोग-विधि, अष्टोत्तरशत-नामावली, तान्त्रिक पाठ, हृदय, कवच, हिन्दी नामावली, सहस्रनाम स्तोत्र, मन्त्र-यन्त्र-तन्त्र, शान्ति, षट्कर्म, दीपदान (विस्तृत विधि) तथा स्वर्णाकर्षण-भैरव और आकाश-भैरव के शास्त्रीय प्रयोगों का अपूर्व, अनुपम एवं अद्‌भुत संग्रह]

●

लेखक एवं सम्पादक

डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी, साहित्य-सांख्य-योग-दर्शनाचार्य

एम० ए० (संस्कृत एवं हिन्दी), पी-एच० डी०, डी० लिट्० आदि।

[मन्त्र-यन्त्र-तन्त्र-योग-स्तोत्र एवं विविध साहित्य ग्रन्थों के प्रसिद्ध लेखक]

प्रकाशक

मेघ प्रकाशन

बी-५/२६३, यमुना विहार दिल्ली-११००५३

© मेघ प्रकाशन . दिल्ली-110053

All rights reserved.
No part of this publication shall be reproduced or transmitted in any form or by any means without written permission of the publisher.

संस्करण : 1997

मूल्य : 80.00 रुपये

आवरण :
श्रीबटुकभैरव सर्वसिद्धिप्रद यन्त्र

साधना में सफलता साधक की योग्यता पर निर्भर है। जिसे गुरु-परम्परा से ज्ञात करना भी अत्यावश्यक है। अतः योग्य साधकों से मार्ग-दर्शन प्राप्त करते हुए भक्तिपूर्वक साधना में प्रवृत्ति बढ़ायें।

Printed by: AMIR SINGH PARASHAR
at Parashar Printers, Delhi, Phone : 2264875

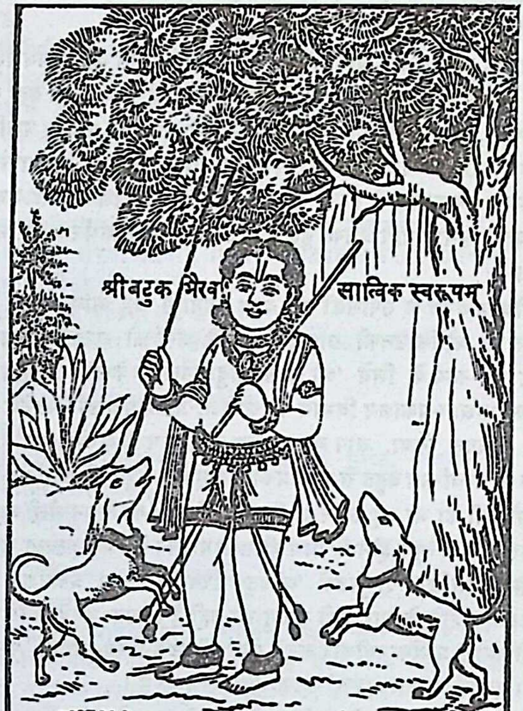

प्रस्तुति

"जीवन जीने के लिये है" चाहे दुःख से जिएँ अथवा सुख से। दुःख भी यदि शाश्वत हो, तो उसकी उपेक्षा की जा सकती है। किन्तु सामान्य प्रयास से उसका निवारण सुलभ हो, तो कौन ऐसा होगा जो उससे मुक्त होना नहीं चाहेगा ? दुःख से छुटकारा पाने के लिये ही प्राणी प्रयत्नशील रहता है, उन प्रयत्नों में त्रिविध उपाय शास्त्रों में उपलब्ध होते हैं। १. आधिभौतिक, २. आधिदैविक और ३. आध्यात्मिक। सांख्यदर्शन में इन तीनों प्रकारों को दुःखत्रय कहकर उनसे मुक्त होने के लिए प्रकृति और पुरुष का ज्ञान आवश्यक बतलाया है। साधना-मार्ग में 'आधिदैविक' उपाय दुःख-मुक्ति का सबसे सरल साधन है। यही उपाय आज के व्यस्त-जीवन के लिये भी अत्यन्त उत्तम है।

हमारी दैनिक-जीवन प्रक्रिया में कुछ समय उपासना में अवश्य लगना चाहिये। उपासना में अन्तस्तत्त्व और बाह्यतत्त्व दोनों का सुमधुर सम्मिश्रण रहता है। बाह्य-

पूजा-स्मरणादि के माध्यम से आन्तर चिन्तन-मननादि के कपाट उद्‌घाटित होते हैं और एक अनुपम प्रकाश प्राप्त होता है, जिससे हमारी तिमिरावृत मति का आवरण हटकर निर्मलता, तेजस्विता आदि प्राप्त होते हैं।

साधना की विभिन्न धाराओं में स्थूल रूप से स्तुति का आश्रय लिया जाता है। शब्दजननी वाणी की कृपा से ही स्तुति सुलभ होती है। परात्पर ब्रह्म अव्यक्त, अज्ञेय और स्वयम्भू है। ब्रह्म सच्चिदानन्द-स्वरूप होता है। उसका सत्‌रूप प्रकृति के उपादानों में आनन्दरूप शरीरस्थ आत्मा में और चिद्‌रूप समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त होकर अखण्ड चेतना के रूप में प्रकट होता है। यही प्रकटीकरण अथवा प्रकाशन-क्रिया अवतार कहलाती है। ऐसे अवतार हमारे यहां अनेक हुए हैं। उन्हीं में श्रीबटुकभैरव भी भगवान् शिव के अवतार हैं।

श्रीबटुकभैरव के उपासकों की बहुत दिनों से यह मांग रही है कि कोई ऐसी पुस्तक प्राप्त हो, जो कि उनकी साधना के सभी अंगों को सरलता से समझाते हुए पूर्ण करें। हमने इस कार्य के लिये 'श्री लालबहादुर शास्त्री केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली के अनुसन्धान-प्रकाशन विभाग के अध्यक्ष, प्राध्यापक डॉ० रुद्रदेव त्रिपाठी से इस सम्बन्ध में निवेदन किया, आप मन्त्र, यन्त्र और तन्त्र के अच्छे ज्ञाता हैं। आपके द्वारा तन्त्र-शास्त्र से सम्बन्धित बहुत से ग्रन्थ प्रकाशित होकर बहुत ही ख्याति को प्राप्त हुए हैं। हमारे सहयोगियों का भी यह कथन था कि डॉ० त्रिपाठी की लेखन शैली मधुर, स्पष्ट और शास्त्रीय तत्त्वों से परिपूर्ण होने के साथ ही सभी पाठकों के लिये अत्यन्त उत्तम है। आपके द्वारा इससे पूर्व लिखित दो पुस्तकें 'श्रीबटुकभैरव-स्तोत्र' पर प्रकाशित भी हो चुकी हैं और वे लोकप्रिय होने के कारण ही अत्र सुलभ नहीं हैं। अतः हमने उनसे निवेदन किया और उन्होंने हमारी प्रार्थना स्वीकार करके यह "श्रीबटुक-भैरव-साधना" पुस्तक प्रकाशनार्थ प्रदान की। एतदर्थ 'मेघ प्रकाशन' उनका पूर्ण आभारी है।

प्रस्तुत पुस्तक को सर्वाङ्गपूर्ण बनाने के लिये बहुत से दुर्लभ विषय जोड़े गये हैं तथा साधकों की सुविधा के लिए दुर्लभ चित्रों का समावेश करते हुए श्रीस्वर्णाकर्षण भैरव तथा श्रीशरभेश्वर भैरव की साधना का भी संक्षिप्त किन्तु सारभूत साहित्य प्रकाशित किया है।

डॉ० त्रिपाठीजी के द्वारा लिखित अन्य पुस्तकों में—१. श्री हनुमत्-साधना, २. श्रीमहागणपति-साधना, ३. श्री दुर्गासप्तशती साधना जैसी कुछ पुस्तकों का प्रकाशन भी हम शीघ्र कर रहे हैं।

यह पुस्तक पाठकों को समर्पित करते हुए हम यह आशा करते हैं कि यह सभी के लिये उपयोगी सिद्ध होगी और सभी साधक तथा साधना के इच्छुक इससे लाभ उठाकर भगवान् श्रीबटुकभैरव की कृपा प्राप्त करेंगे।

स्नेहाभिलाषी
अशोक जैन

मेघ प्रकाशन
बी-५/२६३ यमुना विहार, दिल्ली-११००५३

विषयानुक्रमणिका

[परिचय-खण्ड]

मङ्गलाचरणम् ८

१. साधना की विविधता और श्रीबटुक भैरव-साधना ९-१७

भगवान् रुद्र ही भैरव हैं, ब्रह्म और भैरव, तन्त्र और पुराणों में श्रीभैरव के अवतार (शक्तिसङ्गम तन्त्र, शिवपुराण, कूर्मपुराण, स्कन्द पुराण, वामन पुराण, ब्रह्मवैवर्तपुराण तथा कालिका पुराण आदि से उद्धृत)

२. भैरव शब्द की व्युत्पत्ति, निरुक्ति और परिभाषायें १७-२३

भैरव-शब्द मीमांसा, बटुक शब्द विचार, शक्ति उपासना का अविभाज्य का अंग 'भैरवोपासना', विविध शक्तियों के भैरव, रुद्रयामल के अनुसार चौंसठ भैरव

३. अवतार :: शब्दार्थ, प्रक्रिया एवं प्रयोजन २३-२५

ध्यान की विशिष्टता और उसकी प्रक्रिया, ध्यान और मन्त्र का सम्बन्ध, सात्त्विकादि ध्यान-विचार

४. साधना के दस अंग और नामावली-स्तोत्र २६

५. स्तोत्र-विद्या २६-२८

स्तोत्र-साहित्य का विराट्रूप, स्तोत्र-विद्या की सृष्टि, वाङ्मय में स्तोत्र-साहित्य का स्वरूप,

६. श्रीबटुक भैरव-महिमा २८-३३

अष्टोत्तरशतनामयुत भैरव-स्तोत्र, कितने पद्यों का यह 'नामावली-स्तोत्र' है ? पुष्पिका अथवा फलश्रुति,

७. स्तोत्र-पाठ के प्रकार ३३-३९

सामान्य-पाठ, त्रिरावृत्ति-पाठ, सृष्टि, स्थिति और संहार-पाठ, अनुलोम-विलोमाक्षर रूप पाठ, पद्य-पाठ और नाम पाठ, मन्त्र सम्पुटित नामावली-पाठ, सम्पुटादि-पाठविधि, कतिपय अन्य रहस्यपूर्ण पाठ-प्रकार,

८. दुर्गा सप्तशती के साथ भैरव-नामावली के प्रयोग ३९

९. भैरव-तन्त्र में निर्दिष्ट प्रस्तुत नामावली के कुछ प्रयोग, ३९-४०

१०. नामावली-पाठ का पुरश्चरण ४०-४१

११. भगवान् बटुकभैरव की पूजा में दैनिक नैवेद्य ४१

१२. 'नामावली' के नामों पर कुछ विचार ४१-४३

१३. संक्षिप्त नाम-मन्त्रार्चन ४३

१४. भैरव-सहस्रनाम :: महत्त्व, अपेक्षा और प्रयोग ४३-४४

१५. श्रीभैरव-साधना-सम्बन्धी साहित्य ४४-४६

स्वर्णाकर्षण-भैरव-साधना सम्बन्धी साहित्य, श्री शरभेश्वर साधना-सम्बन्धी साहित्य

[प्रयोग-खण्ड]

श्रीबटुक-भैरव-प्रातःस्मरणम् ४८

१. श्रीबटुक-भैरव-नित्यकर्म प्रयोग-विधि ४९

१. गुरुस्मरणम्, २. गणपतिस्मरणम्, ३. सङ्कल्पः, ४. भू-शुद्धिः,

(आसन-शुद्धिः, शिखावन्धनम्, दिग्बन्धनम्, भूतापसारणम्, भूशुद्धिः, भैरव नमस्कारः), ५. भूत-शुद्धिः, ६. आत्मप्राण प्रतिष्ठा
२. अन्तर्मातृकादि-न्यासाः, बहिर्मातृका-न्यासः ५६-६०
३. श्रीवटुक-भैरव-पूजा-विधानम् (भैरव-नामावली के अनुसार) ६१
४. श्रीवटुक भैरव-मन्त्र जपविधिः (न्यासादि-सहित) ६३
५. नामावली-पाठ विधिः ६५-७२
विनियोगः, ऋष्यादिन्यासः, करन्यासः, हृदयादिषडङ्गन्यासः, नामावलीन्यासः, विविधानि ध्यानानि, शापविमोचनम्, वटुक-शापोद्धार-स्तवः, वटुकभैरवोत्कीलन-मन्त्रः (न्यासादि सहितः), वटुकोत्कीलन-पञ्चरत्नस्तोत्रम्
६. श्रीमदापदुद्धारक-वटुक-भैरव-नामावली ७३-८०
पाठ-सम्बन्धी निवेदन, मूल नामावली पाठ से पूर्वोक्त उपक्रम पद्य ४२, मूल नामावली-पाठः, फलश्रुति-पाठः
७. सृष्टि-स्थिति-संहार रूपस्त्रिक पाठः ८१-९०
१. सृष्टि-क्रम-पाठः, (त्रिकरूपः), २. स्थिति-क्रम-पाठ (त्रिकरूपः), ३. संहार-क्रम-पाठः (त्रिकरूपः)
८. ॐ ह्रीं सहित-चतुर्थ्यन्त-नमोन्तनामसंवलितः श्रीवटुक भैरव नामावली-पाठः ९१-९६
१. सृष्टि क्रम पाठ;, २. स्थिति क्रम पाठः, ३. संहारक्रम पाठः
९. विलोमगर्भं वटुकमन्त्रसम्पुटितं श्रीवटुकभैरवस्याष्टोत्तर शतनाम स्तोत्रम् ९६-१००
१०. श्रीवटुक भैरव अष्टोत्तर शत-नामावली (हिन्दी पाठ ६ प्रकार के ध्यान से युक्त) १०१-१०४
११. श्रीवटुक भैरव अष्टोत्तर शत-नामावली (अनुलोम-विलोमरूप हिन्दी पाठ ध्यानादि सहित) १०५-१०७
१२. कष्टहरं श्रीभैरवाष्टकस्तोत्रम् १०८
१३. श्रीवटुक-भैरव-रहस्यम् (हिन्दी सारार्थ सहित) १०९-१११
१४. श्रीवटुक-हृदयम् (हिन्दी सारार्थ सहित) ११२-११३
१५. श्रीवटुक-भैरव-ब्रह्म-कवचराजः, भैरव तन्त्रोक्तं श्रीवटुक-भैरव-कवचम् ११४-११५
१६. श्रीवटुक भैरव।सहस्त्रनाम-स्त्रोतम् ११६-१२८
१७. प्रतिनाम-नमस्कारयुतं श्रीवटुक भैरव-सहस्त्रनाम स्तोत्रम् १२९-१४४
१८. श्रीक्षेत्रपाल-भैरवाष्टक-स्तोत्रम् (विश्वसारोद्धार तन्त्रोक्त) १४४-१४५
१९. श्रीवटुक-भैरव-मन्त्र साधना (८ प्रकार) १४६-१४७
२०. श्रीवटुक भैरव-यन्त्र साधना (पूजा यन्त्र, यन्त्र-प्राणप्रतिष्ठा तथा सर्व-विघ यन्त्र पूजनविधि सहित) ५ प्रकार के यन्त्र विधान १४८-१५९
२१. श्रीवटुक भैरव-तन्त्र-साधना (वीर शान्ति, पुत्रप्रद, षट्कर्म तथा हवन सामग्री प्रयोग सहित) १६०-१६२
२२. श्रीवटुक भैरव-दीपदान-विधिः (सम्पूर्ण विधि एवं तत्सम्बन्धी विसण परिचय के साथ) १६३-१७६
२३. श्रीस्वर्णाकर्षण-भैरव-साधना (सचित्र, परिचय, मन्त्र, स्तोत्र विधान) १७७-१८३
२४. श्रीपक्षिराज-शरभेश्वर-आकाश भैरव-साधना (सचित्र, परिचय, मन्त्र एवं स्तोत्र विधान सहित) १८४-१९०
२५. अपराध-क्षमापन-स्तोत्रम् (१२ पद्यात्मक) १९१-१९२

परिचय-खण्ड

मंगलाचरणम्

भजन्ते यद्भर्ग-प्रभव - भुवनाभोग-भरितं,
प्रभाभिर्भास्वन्तं भगवति भवे भावित-तनुम्।
भयार्त्ता भक्ता यं भुवन-भय-भङ्गाय भुवि तं,
भजे भव्यैर्भावैर्भव-भयहरं "भैरव"महम्॥१॥

बिभेति क्लेशोऽस्मादथ जगदिदं भीषणतमाद्,
भयं विन्ते किं वा त्रिदिव-पतयो बिभ्यति यतः।
रवं भीमं कृत्वा दितिज-गणमामर्दयति यः,
स 'भूतानां नाथः' किरतु करुणादृष्टिकिरणान्॥२॥

समूहं दुःखानां परिहरति यो भैरव-वरो,
भिया सर्वान् भीरून् रवयति तथा रोदयति च।
बिभर्ति स्वात्मानं भरति च जगत् सोऽतिमतिमान्,
विधत्तां 'भूतात्मा' मतिमतितमां तच्चरणयोः॥३॥

प्रभुर्बालो दीप्तः स्फटिकसदृशः कुन्तलरुचा,
स्फुरद्वक्त्रो दिव्यैर्नवमणिगणैर्भूषिततनुः।
त्रिशूलं दण्डं च स्वकरयुगले धारणपर—
स्त्रिनेत्रो भक्तेभ्यो वितरतु शिवं "क्षेत्रद" इह॥४॥

सदोद्यत्सूर्याभस्त्रिनयनयुतः पाणिषु दधन्,
कपालं शूलं चाभय-वरदयुग्मं स्मितमुखः।
अलङ्कारै रम्यैरपि विलसितः शोणवसनः,
क्षतात् त्रातुं सद्यो भवतु सदयः "क्षत्रिय"वर॥५॥

सृणिं खड्गं पाशं डमरुमभयं नागममलं,
कपालं घण्टां च स्वकरकमलैर्बिभ्रदनिशम्।
नृमुण्डानां मालां शशिशकलकं पिङ्गचिकुरान्,
दधानो दिग्वासाः सकलसुखदाताऽवतु "विराट्"॥६॥

श्रीमद्विद्यारण्यगुरोः कारुण्यकणिकाञ्चितः।
रुद्रदेवः कृतिमिमां निरमात् सर्वतुष्टये॥७॥

—रुद्रदेव त्रिपाठी

साधना की विविधता और श्रीबटुकभैरव-साधना

गीता का वचन है कि—'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्'—जो जिस रूप से मेरी शरण में आते हैं, मैं उसी रूप में उन्हें अपनाता हूं। इस उक्ति के अनुसार कोई भी अपनी मानसिक प्रसन्नता, अपने सम्प्रदाय एवं कुल-क्रमागत संस्कारों के अनुरूप गुरु-प्रदत्त उपदेश प्राप्त कर साधना में प्रवृत्त हो सकता है। अर्चना में 'उत्साह' सबसे पहली आवश्यकता है जिसके सहारे आगे बढ़ता हुआ मानव आत्मकल्याण के मार्ग को चुनता है। दूसरी आवश्यकता है 'श्रद्धा'। जब तक हृदय में श्रद्धा का उदय नहीं होता किसी भी कार्य में मन लगता ही नहीं है। और मन ही उन्मन बना रहे तो अन्य सभी व्यर्थ हो जाते हैं। इन दोनों के साथ तीसरी आवश्यकता है 'विश्वास' की। उत्साह से प्रवृत्त होकर श्रद्धा-पूर्वक कुछ करना आरम्भ किया जाए, पर चञ्चलता, सन्देह और अनिश्चितता मन में आकर स्थिर होने में बाधक बनते रहें तो ये भी सफलता तक ले जाने में विघ्न उत्पन्न करते रहेंगे, फिर सिद्धि की बात ही क्या ?

परमदयालु आचार्यों ने मानव की प्रकृति को पहचान कर उसके विविध-लक्षी स्वभाव के अनुसार ही अनन्त देवताओं की अनन्त-साधना के द्वार उद्घाटित किये हैं। जो जिस प्रकार चाहे, जिस देव की चाहे, जिस रूप में चाहे साधना कर सकता है। 'नदीमुखेनेव समुद्रमाविशत्' की तरह विभिन्न नदियों का नीर जिस प्रकार अन्ततः समुद्र में ही पहुंचता है, उसी प्रकार भिन्न-भिन्न नामरूपात्मक उपास्यदेवों के चरणों में भक्ति-पूर्वक की गई वन्दना समुद्ररूप सर्वान्तर्यामी परब्रह्म-परमात्मा के चरणों में ही पहुंच जाती है।

भगवान् रुद्र ही भैरव हैं—

विश्व के विकास का स्रोत है 'सकल-ब्रह्म'। उसकी यह स्थिति सृष्टि-रचना-विषयक सङ्कल्प के समय होती है। इससे पूर्व वह 'निष्कल' निर्गुण-निराकार-परमात्मा कहलाता है। वह वाणी और मन की पहुंच से परे है, उसमें द्रव्य, गुण आदि छहों प्राकृत भाव-पदार्थों का सर्वथा अभाव है। विश्वसृष्टि के पूर्व वह नाम—रूप आदि भेदों से भी रहित है। वैखरी वाणी के द्वारा लक्षित जो परा वाक् है तथा श्रुति ने 'सत्, चित् एवं आनन्द'—इन तीनों शब्दों से जिसके स्वरूप की ओर सङ्केतमात्र किया है, वही वह 'निष्कल-ब्रह्म' है। उसी का शुद्ध प्रकाश परा-संवित् पूर्णाहन्ता तथा चिति आदि शब्दों के द्वारा अभिहित किया गया है। वेदों में उसी का नाम 'रुद्र' है तथा तन्त्रशास्त्रों में वही 'भैरव' नाम से वर्णित हुआ है—

> भयादस्याग्निस्तपति भयात् तपति सूर्यः।
> भयादिन्द्रश्च वायुश्च मृत्युर्धावति पञ्चमः॥ (कठ. २।३।३)
> भीषाऽस्माद् वातः पवते। भीषोदेति सूर्यः।
> भीषाऽस्मादग्निश्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावति पञ्चमः॥ (तैत्ति. २।८।१)
> महद्भयं वज्रमुद्यतम्। (कठोपनिषद्-२।३।२)

इसीके भय से अग्नि एवं सूर्य तपते हैं, इसीके भय से इन्द्र, वायु एवं पाँचवें मृत्यु-देवता अपने-अपने काम में तत्पर हैं, इसीके भय से वायु चलती है, इसीके भय से सूर्य उदित होता है, इसीके भय से अग्नि, इन्द्र एवं पाँचवां मृत्यु—ये सब अपने-अपने कार्य में प्रवृत्त हो रहे हैं।' 'उठे हुए वज्र के समान जो महान् भयस्वरूप परमात्मा को जानता है।' इत्यादि श्रुतियाँ जिस सहस्रशीर्ष महाभयङ्कर वेदपुरुष का वर्णन करती हैं वही तन्त्रों में 'भैरव' नाम से वर्णित है। इसी वेदपुरुष का वर्णन 'रौद्र' तथा 'सौम्य' दोनों रूपों से वेदों तथा तन्त्रों में उपलब्ध है।

रौद्ररूप का वर्णन ऊपर दिखाया है अब सौम्यरूप की झाँकी भी देखिये—

नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च,
नमः शिवाय च शिवतराय च॥ (शुक्ल यजु० सं० १६।४१)

अर्थात् मोक्ष एवं संसार दोनों ही स्वरूपवाले, संसार के सभी सुख देनेवाले, कल्याणकारी परम मङ्गलमय शिव को नमस्कार है।

या ते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपापकाशिनी।
तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि॥ (शु. य. १६।२)

कैलास पर्वत, वेदवाणी अथवा मेघमण्डल में विराजमान होकर प्राणियों को सुख देनेवाले हे रुद्र! आपका जो शान्त (मङ्गलमय) और अघोर (विषमभाव से रहित अथवा सौम्य) तथा अपापकाशी—पुण्यफल को प्रकाशित करने वाला शरीर है, उसी अतिशय सुखप्रदान करनेवाले शरीर से तुम मेरी ओर देखो। (मुझे सुख पहुंचाने के लिये मुझ पर कृपा-दृष्टि करो)।'

जिस प्रकार वेदों में सौम्यरूप का वर्णन है, उसी प्रकार तन्त्रों में भी 'शान्तः शान्तजनप्रियः प्रशान्तः शान्तिदः शङ्करः विष्णुः' आदि सौम्यरूप के बोधक नाम दृष्टि-गोचर होते हैं। 'श्रीवटुकभैरव अष्टोत्तर शतनाम-स्तोत्र' के अन्त में विष्णु नाम है और 'पाञ्चरात्र आगम' में भगवान् विष्णु का एक नाम भैरव दिया है।

यजुर्वेदान्तर्गत 'रुद्राष्टाध्यायी' में 'नमो दुन्दुभ्याय' पद आता है। बृहस्पति के साठ संवत्सर चक्र के अन्तर्गत ५६ वें संवत्सर का नाम 'दुन्दुभि' है; जिसके अभिमानी देवता भैरव हैं। इनको विष्णुस्वरूप ही माना गया है—

पुष्करद्वीपमासाद्य दुन्दुभिः प्लक्षसन्निधौ।
ध्यायन् वसति निःशङ्को विष्णुं वै विश्वरूपिणम्॥

—पुष्कर द्वीप में पहुंचकर वह दुन्दुभि प्लक्ष—विष्णु के आश्रय अथवा प्रतीक-रूप पाकड़ के वृक्ष के निकट विश्वरूप भगवान् विष्णु का ध्यान करता हुआ वहां निर्भय निवास करता है।

वेदों में परमात्मा के रौद्र रूप के लिए जो 'कालाय नमः' पद आता है, वही 'कालः कपालमाली' (बटुक भैरव स्तोत्र) तथा 'गीता' में 'कालोऽस्मि' के रूप में बताया गया है। अस्मि पद में जो पूर्णाहन्ता है वही भैरव है।

'अहमात्मा गुडाकेश' 'अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च' इत्यादि वाक्य कालभैरव के द्योतक हैं।

ब्रह्म और भैरव

वृद्धि अर्थ वाले 'बृंहि' धातु से 'ब्रह्म' शब्द बना है, जिसका अर्थ है बढ़नेवाला तथा बढ़ानेवाला। 'बृंहति वर्धते बृंहयति वर्धयति वा' यह ब्रह्म शब्द की व्युत्पत्ति है। वेदान्त में चार महावाक्य हैं—'१. अयमात्मा ब्रह्म, २. योऽसौ सोऽहम्, ३. तत्त्वमसि तथा ४. अहं ब्रह्मास्मि'। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण वाक्य 'अहं ब्रह्मास्मि' माना गया है। इसके द्वारा निर्दिष्ट ब्रह्म 'सकल' स्वरूप का बोधक है।

'अहं' शब्द 'अ' तथा 'ह' इन दो अक्षरों से बना है। इसी 'अहं' से समस्त पदार्थ ओत-प्रोत हैं—

अकारः सर्ववर्णाग्र्यः प्रकाशः परमः शिवः।
हकारोऽन्त्यकला ज्ञेया विमर्शाख्या प्रकीर्तिता।

'अकार' वर्णों में सर्वप्रथम और 'हकार' अन्तिम वर्ण है। अकार परमप्रकाश, कल्याणमय शिव है तथा हकार विमर्शाख्या कला शक्तिस्वरूप है। ये शक्ति और शिव ही शब्दरूप एवं अर्थरूप को धारण करते हैं—

शब्दरूपमशेषं तु धत्ते शङ्करवल्लभा।
अर्थस्वरूपमखिलं धत्ते मुग्धेन्दुशेखरः॥

यही 'अहं' शब्द ऋग्वेद के वागाम्भृणी सूक्त में, तैत्तिरीयोपनिषद् में, कठरुद्रोपनिषद् में तथा गीता में अनेकबार प्रयुक्त हुआ है। 'अहं' से निर्दिष्ट 'तत्' पद (तत्त्वमसि) ही तन्त्रों में 'परशम्भुनाथ' भैरव के रूप में वर्णित है। इनके मन्त्रों में 'अहमहम्' पद विशेष रूप से विद्यमान रहता है।

'योऽसावादित्यः सोऽहमस्मि'[1]—जो यह आदित्य है, वह मैं हूं—इसमें जो 'अहमस्मि' पद है, वह 'पूर्णाहन्ता ही भैरव' है। तन्त्रों में श्रीभैरव का एक नाम 'कामी' भी है। ऋग्वेद में इसका उल्लेख—'कामस्तदग्रे समवर्तत मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्' (१९।५२।१) इस मन्त्र में प्राप्त है। इसी प्रकार 'विराट्' का निर्देश 'शतपथब्राह्मण' में 'दशाक्षरो वै विराट्' पद से हुआ है। 'गीता' में 'अनादिमत् परं ब्रह्म' कह कर जिसका

---

१. हिरणमयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्। योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहं ॐ खं ब्रह्म॥ —यजुर्वेद संहिता (४० अ. अन्तिम मन्त्र)

वर्णन हुआ है, वही तन्त्रों में भैरवरूप से वर्णित है। गीता में ही 'भूत-भर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च' यह वाक्य श्रीभैरव के सृष्टि-स्थिति-संहार करनेवाले रूप की अभिव्यक्ति करता है।

इस प्रकार भैरव ब्रह्मरूप हैं—परब्रह्मरूप हैं—पूर्णरूप हैं। निष्कलरूप में—वाङ्मनसागोचर, विश्वातीत, स्वप्रकाश, सर्वत्राभासशील, सर्वम्भरिताकार सर्वव्यापक-सत्ता, पूर्णाहम्भाव आदि से—भैरव का ही वर्णन हुआ है अतः यही 'परभैरव' है। सकलरूप में वेदोक्त—भीम, घनाघन, क्षोभण, मन्यु एवं सद्योजात, वामदेव, तत्पुरुष, अघोर तथा ईशान (पञ्चमुख) और अष्टमूर्ति[1]—शर्व—पृथ्वी, भव—जल, रुद्र—अग्नि, उग्र—वायु, भीम—आकाश, महादेव—सोम, ईशान—सूर्य तथा पशुपति—यजमान रूप भी भगवान् भैरव के ही विभिन्न स्वरूपात्मक नाम हैं। इनके ध्यान तथा पूजा-विधान तन्त्रों में उपलब्ध होते हैं।

तन्त्र और पुराणों में श्रीभैरव के अवतार

'शक्तिसङ्गम-तन्त्र' के 'कालीखण्ड' में भैरव की उत्पत्ति के बारे में वर्णन है कि 'आपद्' नामक राक्षस ने कठोर तपस्या करके वर प्राप्त कर लिया था, जिसके कारण वह सभी देवी-देवताओं से अजेय बन गया। उसने अपनी मृत्यु पांच वर्ष के विशिष्ट रूप, तेज एवं गुणों से सम्पन्न बालक के हाथों से चाही थी और वह वर उसे प्राप्त हो चुका था। इसके फलस्वरूप उस महाबली, पर्वताकार एवं अतिक्रूर राक्षस के आसुरी अत्याचारों से तीनों लोकों में उत्पीडन मच गया और 'त्राहि-त्राहि' की पुकार उठने लगी। देव-वर्ग उसके अत्याचारों से बहुत भीत और त्रस्त था। इस घोर-संकट से त्राण पाने एवं त्रिलोकी को उबारने के लिए सभी देवता एकत्र होकर 'आपद्' के वध का उपाय सोचने लगे।

अकस्मात् उन सब के देह से एक-एक तेजोधारा निकली और प्रत्येक देव-युगल के सम्मिलित (रजत एवं श्वेत) 'तेजस्' के मिलन-बिन्दु पर एक-एक पञ्चवर्षीय 'बटुक' का आविर्भाव हुआ; जो उस-उस युगल का 'वटुक' कहा जाता है। इन असंख्य बटुकों के उद्भव के बाद भी वह तेजोधारा और आगे बढ़ी तथा एक निश्चित बिन्दु पर पुञ्जीभूत हो गई। विभिन्न-विभिन्न देव-युगलों के तेज से वैसे ही एक अन्य 'पञ्चवर्षीय बटुक' का प्रादुर्भाव हुआ जैसे सप्तशती-वर्णित 'महालक्ष्मी' का देवताओं के तेज से हुआ था। इस बटुक ने 'आपद्' राक्षस को मारकर देवताओं को सङ्कट से मुक्त किया और त्रैलोक्य की रक्षा की। इसी कारण इन्हें 'आपदुद्धारक-बटुक भैरव' कहा जाता है।

---

१. पुष्पदन्त कृत 'महिम्नःस्तोत्र' का 'भवः शर्वोरुद्रः' आदि पद्य तथा कालिदास के 'या सृष्टिः स्रष्टुराधा' इत्यादि 'अभिज्ञानशाकुन्तल' का पद्य भी इन्हीं नामों का सूचक है।

शिवपुराण के अनुसार भैरवावतार

भगवान् शङ्कर के अवतारों में भैरवावतार का अपना एक विशिष्ट महत्त्व है। इनकी कथा के साथ भगवान् शिव की उत्कर्ष-कथा संलग्न है। 'शिवमहापुराण' में भैरव को परमात्मा शङ्कर का पूर्णरूप बतलाया है—

भैरवः पूर्णरूपो हि शङ्करस्य परात्मनः।
मूढास्ते वै न जानन्ति मोहिताः शिवमायया ॥३।८।२॥

तथा वहीं इनके अवतार की कथा इस प्रकार वर्णित है—

एक बार सुतत्त्व की जिज्ञासा से सभी देव तथा ऋषिगण सुमेरुपर्वत पर ब्रह्माजी के पास गये और उनसे 'अव्यय-तत्त्व' के बारे में पूछा। ब्रह्मा ने स्वयं को सर्वातिशायी परमतत्त्व रूप बतलाया। जब यह बात विष्णु को ज्ञात हुई तो उन्होंने ब्रह्मा को अज्ञानी कहकर अपने को ही 'परमतत्त्व' प्रतिपादित किया। किन्तु जब वेदों से पूछा गया तो उन्होंने शिव को ही सर्वश्रेष्ठ 'परमतत्त्व' बतलाया। इस पर भी ब्रह्मा और विष्णु ने मोहवश उनके कथन का खंडन कर दिया। तब उसी समय वहां एक तेजःपुञ्ज के बीच एक पुरुषाकृति दिखलाई पड़ी जिसे देखकर ब्रह्मा का पञ्चम सिर कोप से प्रज्वलित हो उठा। ब्रह्मा जब तक उस आकृति को देखते हैं तब तक महापुरुष नील-लोहित के रूप में दिखलाई दिया। उसे देखकर ब्रह्मा ने कहा—'चन्द्रशेखर! डरो नहीं। पूर्वकाल में तुम मेरे भालस्थान से उत्पन्न हुए हो। मैंने ही तुम्हारा 'रुद्र' नाम रखा था। तुम मेरे पुत्र हो। अतः मेरी शरण में आओ।' विधाता की इस गर्वपूर्ण उक्ति से भगवान् शिव को बहुत क्रोध आया और उन्होंने एक अत्यन्त भीषण पुरुष को उत्पन्न करके कहा—

"काल की भांति शोभित होने के कारण आप साक्षात् 'कालराज' हैं। भीषण होने से 'भैरव' हैं। आप से काल भी भयभीत होगा अतः आप 'कालभैरव' हैं। दुष्टात्माओं का मर्दन करने से आप 'आमर्दक' कहलाएंगे। काशी के आप अधिपति होंगे।"

शिव के इन वरों को प्राप्त कर श्रीभैरव ने अपनी वामांगुली के नखाग्र से ब्रह्मा के उस अपराधकर्ता पंचम सिर को काट दिया। लोकमर्यादा-रक्षक शिव ने तदनन्तर भैरव को ब्रह्महत्या से मुक्त होने के लिए कापालिकव्रत धारण करके वाराणसी में निवास करने का आदेश दिया। और वे वहीं कालभैरव के रूप में विराजमान हैं। इत्यादि।"

यहां विशेषरूप से यह कहा गया है कि—

विश्वेश्वरस्य ये भक्ता न भक्ताः कालभैरवे।
ते लभन्ते महादुःखं काश्यां चैव विशेषतः ॥३।९।६८॥

अर्थात् शिव के भक्त होकर यदि कालभैरव की भक्ति नहीं रखते हैं तो वे महान् दुःख को प्राप्त करते हैं और यह बात काशी में विशेष रूप से ध्येय है।

इसी पुराण में 'कापालिक' का वर्णन 'उत्तरवायवीय-संहिता' के ३१वें अध्याय में हुआ है, जिनमें चार प्रकार के शैवों में कापालिक शैवों के आराध्य भैरव की अपूर्व महिमा बतलाई है। कापालिकसम्प्रदाय का मूलाधार भैरव ही है।

भगवान् शिव के दस अवतारों में 'भैरव'

भक्तों के हितकारक शिव के अमित अवतार हो चुके हैं उनमें दस अवतार अति-महत्त्वपूर्ण हैं। ये अवतार शक्ति-सहित इस प्रकार हैं—

(१) महाकाल और महाकाली, (२) तार तथा तारा, (३) बाल भुवनेश एवं बाला भुवनेशी, (४) षोडश श्रीविद्येश और षोडशी श्रीविद्या, (५) भैरव तथा भैरवी गिरिजा, (६) छिन्नमस्तक एवं छिन्नमस्ता, (७) धूमवान् तथा धूमवती, (८) बगलामुख और बगलामुखी, (९) मातङ्ग तथा मातङ्गी और (१०) कमल एवं कमला। इन दस अवतारों का माहात्म्य सर्वकामप्रद है। ये अवतार तन्त्रशास्त्र में दस महाभैरव तथा दस महाविद्याओं के रूप में पूजित हैं। खलों को दण्ड देना तथा ब्रह्मतेज की वृद्धि करना इनके मुख्य कार्य हैं—(शिव० १३।१७।१६)

एकादश रुद्र और भैरव

कश्यप एवं सुरभी के पुत्र 'एकादश-रुद्र' भी भैरव के रूप में पूजित हैं—उनके नाम हैं—१. कपाली, २. पिङ्गल, ३. भीम, ४. विरूपाक्ष, ५. विलोहित, ६. शास्ता, ७. अजपाद्, ८. अहिर्बुध्न्य, ९. शम्भु, १०. चण्ड तथा ११. भव।[1] ये रुद्र महान् बली और पराक्रमशाली हैं। देवताओं की सहायता एवं दैत्यों का संहार करते हुए ये ईशान कोण में विराजमान हैं।

'कूर्मपुराण' के अनुसार—अन्धकासुर-संहर्ता-भैरव

यहां वर्णन आता है कि—हिरण्याक्ष का पुत्र 'अन्धक' दैत्यों का राजा बना। तब वह महेश्वर शिव की परमशक्ति पार्वती के रूप पर मोहित होकर उनका अपहरण करने की इच्छा से अवसर की प्रतीक्षा करने लगा। एक समय जब भगवान् शिव ब्राह्मणों के हित के लिए भूमण्डल में भ्रमणार्थ चले गये तो उसने अवसर पाकर कैलास पर आक्रमण कर दिया। इधर भगवान् विष्णु पार्वती की सहायता के लिए स्त्रीरूप धारण कर पार्वती की सखी के रूप में वहां रहने लगे। नन्दीश्वर और गणपति द्वारपाल के ... रक्षक

---

१. (क) कपाली पिङ्गलो भीमो विरूपाक्षो विलोहितः।
शास्ताऽजपादहिर्बुध्न्यः शम्भुश्चण्डो भवस्तथा॥ (शिव० ३।१८।२६)

(ख) इन नामों के अन्तर्गत बहुत से नाम भैरवनामावली में पठित हैं।

नियुक्त थे। अन्धक को उस समय तो इन्होंने परास्त कर दिया किन्तु दूसरी बार पुनः विशेप तैयारी करके आक्रमण किया तब भगवान् विष्णु ने शिव से कहा कि आप इस दुष्ट राक्षस का संहार करें। आपके विना यह अन्य किसी से नहीं मारा जाएगा। तव शिव ने 'भैरव' का रूप धारण किया तथा भीषण युद्ध के पश्चात् उसका वध कर दिया। तभी से शिव—अन्धकारि, अन्धकान्तक, अन्धकरिपु आदि नाम से विख्यात हुए।

अन्य पुराणों में श्रीभैरव

'स्कन्दपुराण' के अन्तर्गत 'शंकर-संहिता' तथा 'भैरव-खण्ड' भी भैरव-चरित्र का वर्णन करते हैं। 'वह्मवैवर्त-पुराण' के प्रकृतिखण्डान्तर्गत 'दुर्गोपाख्यान' में भी आठ पूज्य भैरवों का निर्देश है।[1] इनमें—

१—महाभैरव[2], २—संहारभैरव, ३—असिताङ्गभैरव, ४—रुरुभैरव, ५—कालभैरव, ६—क्रोधभैरव, ७—ताम्रचूडभैरव तथा ८—चन्द्रचूडभैरव के नाम हैं तथा इनकी पूजा करके मध्य में नवशक्तियों की पूजा करने का आदेश है। वहीं 'गणपति-खण्ड' के ४१वें अध्याय में सात और आठ संख्यावाले भैरवों के स्थान पर 'कपाल-भैरव' और 'रुद्रभैरव' का नामोल्लेख हुआ है। 'तन्त्रसार' में—१—असिताङ्ग, २—रुरु, ३—चण्ड, ४—क्रोध, ५—उन्मत्त, ६—कपाली, ७—भीषण तथा ८—संहार' नामक आठ भैरवों का वर्णन है।

'कालिका-पुराण' में शिवजी के—१—नन्दी, २—भृङ्गी, ३—महाकाल, ४—वेताल तथा ५—भैरव ये गण वतलाये गये हैं। ये भगवान् शिव के अङ्गरूप हैं तथा अपने तपोवल से गणाध्यक्ष बने हैं—

नन्दी भृङ्गी महाकालो वेतालो भैरवस्तथा।
अङ्गं भूत्वा महेशस्य वीतभीतास्तपोधनाः॥
ये मानुषशरीरेण प्रापिरे तपसो बलात्।
गणानामाधिपत्यन्तु ते जानन्ति हरं परम्॥

वहीं ४४वें अध्याय में एक अन्य कथा का भी वर्णन हुआ है जिसमें—

करवीरपुर के राजा चन्द्रशेखर की पत्नी तारावती के गर्भ से महादेव के दो पुत्र हुए। ये पार्वती के शाप से वानर-मुख थे। नारदजी ने इनका नामकरण किया और बड़े का नाम 'भैरव' रखा गया जो कि भीरु (पार्वती के भय से भीत-शिव ?) को भयङ्कर पुत्र

---

१. आदौ महाभैरवश्च संहारभैरवस्तथा।
असिताङ्गो भैरवश्च रुरुभैरव एव च॥
ततः कालो भैरवश्च क्रोधभैरव एव च।
ताम्रचूडश्चन्द्रचूडस्तथाऽन्ते भैरवद्वयम्॥

२. ये महाभैरव ही 'शरभ' गणाध्यक्षभैरव हैं। कालिकापुराण ४४वां अध्याय।

था। और दूसरा जो वेताल के समान काले शरीरवाला था उसका नाम 'वेताल' रखा गया।[1]

इसी प्रकार प्रस्तुत पुराण के ७७वें अध्याय में महाविद्याओं के भैरवों का निरूपण भी हुआ है। तदनुसार—१. कालिका के भैरव महाकाल, २. तारा के अक्षोभ्य, ३. महात्रिपुरसुन्दरी के पञ्चवक्त्र शिव, ४. भुवनसुन्दरी के त्र्यम्बक, ५. भैरवी के दक्षिणामूर्ति, ६. छिन्नमस्ता के कबन्ध, ७. धूमावती (विधवा है) ८. बगला के एकवक्त्र महारुद्र, ९. मातङ्गी के मतङ्ग, १०. कमला के विष्णु, तथा अन्नपूर्णा के दशवक्त्र महेश्वर और दुर्गा के नारद भैरव का भी यहां निर्देश किया गया है। तन्त्रों में इन नामों में कहीं-कहीं कुछ अन्तर भी दिखाई देता है। इसी पुराण के ६०वें अध्याय में भैरव को विष्णुरूप में भी प्रस्तुत किया है।

'वामन-पुराण' में अन्धकासुर की कथा वर्णित है। उसमें कहा गया है कि—

"अन्धकासुर ने उछलकर महायोगी, सर्वाधार, प्रजापति भगवान् शिव के वक्षःस्थल पर गदा से प्रहार किया। उस समय शिवजी के शरीर से जो रक्तधारा निकली, उसके चार प्रवाह थे। उन्हीं में से पूर्वदिशा की धारा से अग्नि के समान तेजस्वी 'भैरव' की उत्पत्ति हुई और अन्धक का उन्हीं भैरव ने संहार किया।[2] यहीं अन्य सात और भैरवों की उत्पत्ति का भी वर्णन है जिनमें असिताङ्गादि भैरव हैं।

क्षेत्रपाल और भैरव

जनसाधारण में क्षेत्रपाल और भैरव को पृथक्-पृथक् रूप में पहचाना जाता है। वस्तुतः यह नाम कर्म-विशेष की दृष्टि से भिन्न रूप से निर्दिष्ट है! उनपचास क्षेत्रपालों का अकारादि अक्षरों के आधार पर नाम-संयोजन[3] भी प्राप्त होता है। भैरवनामावली में क्षेत्रपाल को भैरव के रूप में ही पूज्य माना है। प्रयोगसार में कहा गया है कि—

क्षेत्रपालमसम्पूज्य यः कर्म कुरुते नरः।
तस्य कर्मफलं हन्ति क्षेत्रपालो न संशयः॥

---

१. प्रविवेश ततो देवी स्वयं तारावती सती।
महादेवोऽपि तस्यां तु कामार्थं समुपस्थितः।
श्रेष्ठो भैरवनामाऽभूद् भीरोः पुत्रो भयङ्करः।
वेतालसदृशः कृष्णो वेतालोऽभूत्तथापदः॥ इत्यादि।

२. दैत्याधिपः समुत्पत्य हरोरसि गदां क्षिपन्।
संस्थितस्तु महायोगी सर्वाधारः प्रजापतिः॥
गदापातक्षताद् भूरि चतुर्धाऽसृगथापतत्।
पूर्वधारा-समुद्भूतो भैरवोऽग्निसमप्रभः॥ इत्यादि।

३. क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट् इत्यादि।

ये क्षेत्रपाल भी भिन्न-भिन्न रूप से संख्याओं में वर्णित हैं। इनके नाम अकारादि क्रम से मातृकावर्णों के आधार पर बने हुए हैं। अतः कहीं ४९, कहीं ५१ और कहीं इससे भी अधिक बताये गये हैं।

'भैरव' शब्द की व्युत्पत्ति, निरुक्ति और परिभाषाएं

(१) 'तन्त्रालोक' और 'विज्ञान-भैरव' में भैरव शब्द की सिद्धि भयार्थक 'भी' धातु से निष्पन्न 'भी' शब्द और 'अव' धातु से निष्पन्न 'अव' शब्द के योग से मानी है। व्युत्पत्ति है—'भैर्भीमादिभिः (साधनैः) अवतीति भैरवः' अर्थात् भीमादि-भीषण साधनों से रक्षा करनेवाला भैरव है।

(२) अन्यत्र 'भी' धातु से औणादिक 'डैरव' प्रत्यय लगने से 'भैरव' शब्द की निष्पत्ति मानी है और व्युत्पत्ति दी है—'बिभेति क्लेशो यस्मादिति भैरवः'—जिससे क्लेश डरता है वह भैरव। अथवा 'बिभ्यति लोकेशा यस्मादिति' किंवा 'बिभेति लोको यस्मादिति' इन व्युत्पित्तियों से भी 'भैरव' शब्द की रचना दिखाई है।[1]

(३) इसी भी धातु से बने भी-शब्द के साथ 'रु' धातु का योग करके बने हुए 'भीरु' शब्द से स्वार्थ में अण्-प्रत्यय होने पर आदि वृद्धि करने से भैरु शब्द बनाकर गुण तथा अवादेश करके 'भैरव' शब्द बनाया है। भीर्भयजनकं रौतीति भीरुः। स्वार्थेऽणि, आदिवृद्धौ गुणावादेशयोश्च। भैरवो भयङ्कर-शब्दकारी साधकानां सिद्धिदत्वात् तद्-द्वेषिणां च भयदत्वात्' ऐसी व्युत्पत्ति भी की गई है।

(४) 'भी' और 'रव' से भी 'भैरव' शब्द बनाया है। भीः भयङ्करो रवो यस्य स भैरवः।

(५) अन्यत्र 'भी' और 'रु' धातु से 'भेरु' शब्द बनाकर उसका अर्थ दुःखसमूह बतलाया है और इससे 'स्वादेः कन्' सूत्र से कन् प्रत्यय करके 'भैर' शब्द बनाकर 'वा' धातु के 'व' शब्द का योग किया है तथा "भैरं दुःखसमूहं वाति हिनस्तीति भैरवः" यह सिद्ध किया है।

(६) एक स्थान पर 'भिया सर्वान् रवयतीति भैरवः' ऐसी व्युत्पत्ति दिखाकर 'भय से सबको रुलाने वाला' ऐसा अर्थ भी किया है।

(७) 'भीरूणां समूहो भैरवम्' यह भी व्युत्पत्ति कहीं-कहीं प्राप्त होती है।

(८) 'तन्त्रालोक' की 'विवेकटीका' में भृ धातु से 'डैरव' प्रत्यय करके भैरव शब्द बनाया है। और व्युत्पत्ति दी है—'भरति विश्वमिति भैरवः' अथवा "बिभर्ति धारयति पुष्णाति रचयतीति भैरवः" अर्थात् सृष्टि-स्थिति-संहारकारी।

(९) तान्त्रिक पद्धति से 'भैरव' शब्द की निरुक्ति भी दर्शनीय है। 'वामकेश्वर-

---

१. श्रीमदापदुद्धारकबटुकस्तोत्रम् पर वंशीधरीटीका में तथा 'अभिनव-संस्कृत-टिप्पणी' में।

तन्त्र' के एक भाग की टीका—'योगिनीहृदयदीपिका' में अमृतानन्दनाथ ने कहा है कि—"विश्वस्य भरणाद् रमणाद् वमनात् सृष्टि-स्थिति-संहारकारी परशिवो भैरवः।" इसमें "भ-र-व" इन तीन वर्णों के अर्थ भरण, रमण, और वमन से सम्बन्धित आद्याक्षर-समुदाय से 'भैरव' शब्द सिद्ध किया है।

'श्रीतत्त्वनिधि' और अन्य तन्त्रों में इन तीनों अक्षरों के ध्यान का वर्णन इस प्रकार बतलाया है—

'भ'—भाख्या तु श्यामला चैकवक्त्रा भद्रासने स्थिता।
उद्यद्रविनिभा धत्ते शर-चाप-वराभयान्॥

'भ' नामवाली जो भैरव-मूर्ति है, वह श्यामला है, भद्रासन पर विराजमान है तथा उदयकालिक सूर्य के समान (सिन्दूरवर्णी) उसकी कान्ति है। उसके एक मुख है और उसने चार हाथों में धनुष, बाण, वर तथा अभय धारण कर रखे हैं।

'र'—रेफाख्या रेचिका श्यामा सिंहस्था लोहितांशुका।
पञ्चास्याष्टकरा धत्ते दक्षवामकरैस्तु सा॥
खड्ग-खेटाङ्कुशगदा — पाशशूल—वराभयान्।

'रेफ' नामवाली भैरव-मूर्ति श्यामवर्ण है, वह रेचिका कही गई है। उसके वस्त्र लाल हैं, वह सिंह की पीठ पर आरूढ है। उसके पाँच मुख और आठ हाथ हैं। वह अपने दाहिने और बायें हाथों में खड्ग, खेट (मूसल), अंकुश, गदा, पाश, शूल, वर तथा अभय धारण करती है।

'व'—वाख्या परायणी देवी स्फटिकाभरणांशुका।
स्फुटपद्मासना धत्ते पद्मद्वय-वराभयान्॥

'व' नामवाली भैरवी शक्ति के आभूषण और वस्त्र स्फटिक के समान श्वेत हैं, वह देवी लोकों का परम आश्रय है। विकसित कमल-पुष्प उसका आसन है। वह चार हाथों में क्रमशः दो कमल, वर एवं अभय धारण करती है।

इनमें सिन्दूर, श्याम तथा श्वेत वर्ण क्रमशः रजस्, तमस् तथा सत्त्वगुणों के द्योतक हैं। तन्त्रों में श्रीभैरव के सात्त्विक, राजस और तामस—तीनों प्रकार के ध्यान तथा पूजा के विधान मिलते हैं। इन ध्यानों के फल भी 'शारदातिलक' और 'मेरुतन्त्र' में उपलब्ध हैं जिनकी चर्चा आगे की जाएगी।

(१०) 'नित्याषोडशिकार्णव' की 'सेतुबन्ध' नामक टीका में श्रीभासुरानन्दनाथ ने 'भैरव' शब्द के निम्नलिखित अर्थ किये है—१. 'भैरवः सर्वशक्तिभरितः।' और 'सर्वशक्ति' शब्द से—'इच्छा, ज्ञान, क्रिया एवं वामा, ज्येष्ठा, रौद्री'—इन तन्त्रवर्णित शक्तियों का ग्रहण किया है। तथा इन्हीं से परा, स्वाभाविकी, ज्ञान, बल और क्रिया'—इन श्रुति-

वर्णित शक्तियों का प्रतिपादन हुआ है। २. भैरवः-भयङ्करः-सर्वनियन्ता। ३. भिया सर्वान् रवयति इति भैरवः। ४. तथा—

उद्यमोन्तःपरिस्पन्दः पूर्णाहम्भावनामकः।
स एव सर्वशक्तीनां सामरस्यादशेषतः॥
विश्वतो भरितत्वेन विकल्पानां विभेदिनाम्।
अलं कवलनेनापीत्यन्वर्थादेव भैरवः॥

अर्थात्—वही भैरव देवगणसहित सब शक्तियों के अन्तःपरिस्पन्दनात्मक उद्यम-स्वरूप पूर्णाहम्भाव नामवाले हैं, विश्व का भरण एवं वुद्धिभेद के जनक विकल्पों का अशेष-रूप से कवलन करने में समर्थ होने के कारण 'भैरव' यह अन्वर्थ नाम धारण करते हैं।

इसी प्रकार अन्यान्य तन्त्रग्रन्थों और उनकी टीका-प्रटीकाओं के परिशीलन से और भी व्युत्पत्ति एवं परिभाषाएँ प्राप्त हो सकती हैं।

'बटुक' शब्द-विचार

वेष्टनार्थक 'वट' धातु से 'कटिवटिम्याञ्च' इस औणादिक सूत्र से 'उ' प्रत्यय तथा स्वार्थ में 'कन्' प्रत्यय लगने से 'वटुक' शव्द वनता है। श्रीवंशीधरीटीकाकार विद्वद्वर पं० वंशीधरजी ने इसकी व्युत्पत्ति—'वट्यते वेष्टयते सर्वं जगत् प्रलयेऽनेनेति वटुकः' की है। अर्थात्—प्रलयकाल में सम्पूर्ण जगत् को आवेष्टित करने के कारण अथवा सर्वव्यापी होने से भैरव को 'वटुक' कहा जाता है। वैसे 'ववयोरभेदः' व और ब में अभेद मानकर वटुक के स्थान पर बटुक कहने की पद्धति अधिक प्रचलित है। ऐसी स्थिति में इसकी व्युत्पत्ति "बटून् ब्रह्मचारिणः कायत्युपदिशतीति बटुको गुरुरूपः'—अर्थात् ब्रह्मचारियों को उपदेश देनेवाला गुरुरूप होने से भैरव को 'बटुक' कहा जाता है। इस नाम में श्रीबटुक को बटु और 'कै-शब्दे' धातु के योग से गुरुरूप सिद्ध किया गया है। 'अनेकार्थवाग्विलास' में 'वटुर्वर्णी वटुर्विष्णुः' कहा गया है, अतः वटुक का एक अर्थ विष्णु भी होता है जो वामना-वतार की ओर संकेत करता है।[1]

'आम्नाय-सप्तविंशतिका' के अन्तर्गत दक्षिणाम्नाय में अष्टभैरवों के नाम इस प्रकार हैं—१. मन्थानभैरव, २. चक्रभैरव, ३. फट्कारभैरव, ४. एकान्त भैरव, ५. रवि भैरव (पाठभेद से रविभक्ष्य भैरव), ६. चरण भैरव, ७. नभोनिर्मल भैरव तथा ८. भ्रमर-भास्कर भैरव।

इसी ग्रन्थ में दस वीरभैरवों का उल्लेख इस प्रकार हुआ है—

---

१. श्रीमद् भागवत के द्वितीय स्कन्धस्थ प्रथमाध्याय के 'क्षुद्रविराट्-स्वरूप' तथा 'ब्रह्मवैवर्तपुराण' के प्रकृति खण्ड में नारायणोक्त 'महाविराट्-स्वरूप' का वर्णन इसके लिये द्रष्टव्य है।

१. सृष्टि वीर भैरव, २. स्थिति वीर भैरव, ३. संहार वीर भैरव, ४. रक्त वीर भैरव, ५. यम वीर भैरव, ६. मृत्यु वीर भैरव, ७. भद्र वीर भैरव, ८. परमार्क वीर भैरव, ९. मार्तण्ड वीर भैरव तथा १०. कालाग्नि वीर भैरव।

अन्य तन्त्रों में जो दस भैरवों के नाम हैं, वे इनसे भिन्न हैं। यथा—

१. हेतुक भैरव, २. त्रिपुरान्तक भैरव, ३. वेताल भैरव, ४. अग्निजिह्व भैरव, ५. काल भैरव, ६. कराल भैरव, ७. एकपाद भैरव, ८. भीमरूप भैरव, ९. अचल भैरव, तथा १०. हाटकेश्वर भैरव।

शक्ति उपासना का अविभाज्य अङ्ग 'भैरवोपासना'

शास्त्रों में कहा गया है कि शक्ति-उपासना के विना भैरवोपासना और भैरवोपासना के विना शक्ति-उपासना परिपूर्ण नहीं होती है, अतः दोनों एक दूसरे के अविभाज्य एवं अच्छेद्य अङ्ग हैं। अनिष्ट-निवृत्ति तथा अभीष्ट-पूर्ति के लिये इन दोनों की साधना का विधान बताया गया है। 'यतिदण्डैश्वर्य-विधान' में कहा गया है कि—

शक्तयः सर्वदा सेव्याः साधकैर्भैरवार्चिताः।
अतोऽन्यथा न सिद्धिः स्यात् कल्पकोटिशतैरपि॥

इसी प्रकार अन्यत्र स्पष्ट कहा गया है कि शक्ति की उपासना में श्री भैरवजी की उपासना अनिवार्य है। इसके विना शक्तिमन्त्र सिद्ध नहीं होते।

केवलं यो जपेच्छाक्तं मन्त्रं शैवं न योजयेत्।
कोटिजन्मजपेनापि न मन्त्रः सिद्धिभाग् भवेत्॥
यस्या देव्यास्तु यो देवः शिवस्तस्याः शिवो भवेत्।
तेन विद्या महादेवि कलौ सिद्ध्यति सत्वरम्॥ (रुद्रयामल)

'जो साधक शिवमन्त्र को छोड़कर केवल शक्तिमन्त्र का जप करता है, उसको कोटि जन्म पर्यन्त जप करने से भी मन्त्रसिद्धि की प्राप्ति नहीं होती है। जिस देवी के जो शिव हैं, वे उसके उसी रूप में मङ्गलकारी होते हैं। हे महादेवि ! कलियुग में उससे शक्ति-मन्त्र विद्या की सिद्धि शीघ्र प्राप्त होती है।

'शक्तिसङ्गम-तन्त्र' में भी इस कथन की पुष्टि इस प्रकार की गई है—

क्रोधभैरव-संयोगाद् यक्षिण्यः सिद्धिदा यथा।
तथा विद्याः प्रसिद्ध्यन्ति पुंयोगादेव पार्वति॥

'हे पार्वती ! जिस प्रकार क्रोध भैरव के संयोग से यक्षिणियाँ शीघ्र फलदायिनी होती हैं, उसी प्रकार पुंयोग से ही शक्ति-विद्याएँ शीघ्र सिद्धिदायिनी होती हैं।

अतः श्री भैरव की साधना सभी शक्ति के उपासकों के लिये अत्यावश्यक है, तथा जो भगवान् शिव के उपासक हैं, उनके लिये तो श्रीभैरव शिवरूप होने से उपास्य हैं ही।

श्रीभैरव और भैरवी की सामूहिक उपासना भी होती है। उनके स्वरूप का स्मरण करते हुए वन्दनं किया जाता है कि—

जपा-कुसुम-सङ्काशौ मदघूर्णित-लोचनौ।
जगतः पितरौ वन्दे भैरवी-भैरवात्मकौ॥

'जपा-कुसुम के समान कान्ति वाले, मदविह्वल नेत्र, संसार के माता-पिता श्री-भैरवी और भैरव को मैं वन्दन करता हूं।'

विविध शक्तियों के भैरव

विविध शक्तियों के अपने-अपने भैरवरूपों का वर्णन तन्त्रों में प्राप्त होता है। ब्राह्मी आदि शक्तियों के तथा असिताङ्गादि भैरवों के नाम दिये जा चुके हैं। अब दश महाविद्याओं एवं उनके भैरवों के नाम 'रुद्रयामल' तथा अन्य तन्त्रों के आधार पर प्रस्तुत किये जाते हैं—

कालिकाया महाकालः सुन्दर्या ललितेश्वरः।
तारायाश्च तथाऽक्षोभ्यश्छिन्नाया विकरालकः॥
भुवनाया महादेवो धूम्रायाः कालभैरवः।
नारायणो महालक्ष्म्या भैरव्या वटुकः स्मृतः॥
मातङ्ग्यास्तु मतङ्गः स्यादथवा स्यात् सदाशिवः।
मृत्युञ्जयश्च बगलाविद्यायाः परिकीर्तितः॥

इसके अनुसार निम्न तलिका द्रष्टव्य है—

दश महाविद्याएँ	दश भैरव
१. कालिका, २. सुन्दरी, ३. तारा, ४. छिन्ना, ५. भुवना, ६. धूम्रा, ७. महालक्ष्मी, ८. भैरवी, मातङ्गी तथा १०. वंगला	१. महाकाल भैरव, २. ललितेश्वर भैरव, ३. अक्षोभ्य भैरव, ४. विकरालक भैरव, ५. महादेव भैरव, ६. काल भैरव, ७. नारायण भैरव, ८. वटुक भैरव, ९. मतङ्ग अथवा सदाशिव भैरव तथा १०. मृत्युञ्जय भैरव।

ये ललितेश्वर, त्रिपुरभैरव, विकराल, क्रोधभैरव तथा घोर काल भैरव रूप से अन्य तन्त्रों में भी प्रसिद्ध है। अन्य तन्त्रों में महाविद्या के 'दश भैरव' इस रूप में भी बतलाये हैं—

दश महाविद्याएं	दश भैरव
१. काली, २. तारा, ३. त्रिपुर-सुन्दरी, ४. भुवनेश्वरी, ५. धूमावती,	१. काल भैरव, २. अक्षोभ्य भैरव, ३. ॱॱन्चवक्त्र रुद्र भैरव,

६. बगलामुखी (वल्गामुखी), ७. मातङ्गी, ८. कमला, ९. छिन्नमस्ता तथा १०. भैरवी।

४. त्र्यम्बक भैरव, ५. शून्य पुरुष भैरव, ६. एक वक्त्र रुद्र भैरव, ७. मतङ्ग भैरव, ८. सदाशिव भैरव, ९. कबन्ध भैरव तथा १०. दक्षिणामूर्ति भैरव।

रुद्रयामल के अनुसार चौंसठ भैरव

असिताङ्गो विशालाक्षो मार्तण्डो मोदकप्रियः।
स्वच्छन्दो विघ्नसन्तुष्टः खेचरः सचराचरः॥
रुरुश्च क्रोडदंष्ट्रश्च तथैव च जटाधरः।
विश्वरूपो विरूपाक्षो नानारूपधरः परः॥
वज्रहस्तो महाकायश्चण्डश्च प्रलयान्तकः।
भूमिकम्पो नीलकण्ठो विष्णुश्च कुलपालकः॥
मुण्डपालः कामपालः क्रोधो वै पिङ्गलेक्षणः।
अभ्ररूपो धरापालः कुटिलो मन्त्रनायकः॥
रुद्रः पितामहाख्यश्च व्युन्मत्तो वटुनायकः।
शङ्करो भूतवेतालस्त्रिनेत्रस्त्रिपुरान्तकः॥
वरदः पर्वतावासः कपालः शशिभूषणः।
हस्तिचर्माम्बरधरो योगीशो ब्रह्मराक्षसः॥
सर्वज्ञः सर्वदेवेशः सर्वभूतहृदि स्थितः।
भीषणाख्यो भयहरः सर्वज्ञाख्यस्तथैव च॥
कालाग्निश्च महारौद्रो दक्षिणो मुखरोऽस्थिरः।
संहारश्चातिरिक्ताङ्गः कालाग्निश्च प्रियङ्करः॥
घोरनादो विशालाङ्गो योगीशो दक्षसंस्थितः।

अर्थात्—१. असिताङ्ग, २. विशालाक्ष, ३. मार्तण्ड, ४. मोदकप्रिय, ५. स्वच्छन्द, ६. विघ्नसन्तुष्ट, ७. खेचर, ८. सचराचर, ९. रुरु, १०. क्रोडदंष्ट्र, ११. जटाधर, १२. विश्वरूप, १३. विरूपाक्ष, १४. नानारूपधर, १५. नर, १६. वज्रहस्त, १७. महाकाय, १८. चण्ड, १९. प्रलयान्तक, २०. भूमिकम्प, २१. नीलकण्ठ, २१. विष्णु, २३. कुलपालक, २४. मुण्डपाल, २५. कामपाल, २६. क्रोध, २७. पिङ्गलेक्षण, २८. अभ्ररूप, २९. धरापाल, ३०. कुटिल, ३१. मन्त्रनायक, ३२. रुद्र, ३३. पितामह, ३४. उन्मत्त, ३५. वटुनायक, ३६. शङ्कर, ३७. भूतवेताल, ३८. त्रिनेत्र, ३९. त्रिपुरान्तक, ४०. वरद,

४१. पर्वतावास, ४२. कपाल, ४३. शशिभूषण, ४४. हस्तिचर्माम्बरधर, ४५. योगीश, ४६. ब्रह्मराक्षस, ४७. सर्वज्ञ, ४८. सर्वदेवेश, ४९. सर्वभूतहृदिस्थित, ५०. भीषण, ५१. भयहर, ५२. सर्वज्ञ, ५३. कालाग्नि, ५४. महारौद्र, ५५. दक्षिण, ५६. मुखर, ५७. अस्थिर, ५८. संहार, ५९. अतिरिक्ताङ्ग, ६०. कालाग्नि, ६१. प्रियङ्कर, ६२- घोरनाद, ६३. विशालाक्ष तथा ६४. दक्षसंस्थितयोगीश ।

इन ६४ भैरवों की शक्तियाँ ६४ योगिनियां प्रसिद्ध हैं। युगलस्वरूप की साधना के अभिलाषी साधक प्रत्येक भैरव-नाम के साथ योगिनी के नामों का संयोजन करके पूजन-आराधन करते हैं जो कालिकापुराण के ५३ तथा ६३वें अध्यायों में ब्रह्माणी, चण्डिका आदि नामों से बतलाई हैं। स्कन्दपुराण में काशीखण्डान्तर्गत ४५वें अध्याय में गजानना, सिंहमुखी आदि ६४ योगिनियों का निर्देश है जबकि 'बृहन्नन्दिकेश्वर पुराणोक्त देवीपूजा पद्धति' में नारायणी, गौरी आदि वर्णित हैं जो भगवती की सखियां, आवरण-देवता एवं द्वार-पालिका आदि हैं।

अवतार : : शब्दार्थ, प्रक्रिया, एवं प्रयोजन

अवतार शब्द का अर्थ है—'किसी उच्च स्थान से नीचे के स्थान पर उतरने की क्रिया अथवा उतरने का स्थान।' यह सामान्य अर्थ है जबकि इस शब्द का विशिष्ट अर्थ है—"किसी लोकातिशायी ऐश्वर्य-सम्पन्न भगवत्पदाभिधेय सत्ता अथवा देवता का उर्ध्व-लोक से भूतल पर उतरना तथा अपनी इच्छानुसार मानव, अतिमानव अथवा अमानव रूप को धारण करना।" यह क्रिया तीन रूपों में सम्पन्न होती है। यथा—१. कार्यवश (किसी भक्त की रक्षा के लिये), २. रूप-परिवर्तनार्थ (किसी प्रसंगवश स्वरूप का परित्याग करके नवीन रूप धारण करने के लिये) तथा ३. नवीन जन्म धारणार्थ (सामान्य प्राणी के समान मातृगर्भ में रहकर जन्म लेने के लिए)। भगवान् शिव ने विभिन्न अवसरों पर बिना रूप परिवर्तन किये ही अवतार लिये हैं।

धर्मनियमन, धर्मसंस्थापन एवं भक्तरक्षण ही अवतार के मुख्य प्रयोजन हैं। भगवान् शिव के अवतारों का प्रयोजन धर्म एवं भक्त का संरक्षण ही रहा है और यही सर्वशक्तिमान् शिव की विशिष्ट शक्ति का विलास भैरवावतार में भी परिलक्षित होता है। समय एवं कार्य के अनुरूप ही अवतार में भी विभिन्नता आती है। कर्म-विशेष के कारण ही 'शरभ, स्वर्णाकर्षण, मार्तण्ड, मञ्जुघोष, दुन्दुभि, आनन्द, दीपनाथ, वीरभद्र, काल-भैरवादि, अवतार हुए हैं और वैसे कर्मों की सिद्धि के लिये साधक भी तदनुरूप ही ध्यान एवं मन्त्र का प्रयोग करते हैं तथा फल प्राप्त करते हैं।

ध्यान की विशिष्टता और उसकी प्रक्रिया

शास्त्रों में कहा गया है कि 'ध्यानं विना भवेन्मूकः'—ध्यान के बिना साधक मूक

के सदृश है। अतः इष्टदेव का ध्यान परम आवश्यक है। जिससे उपास्यतत्त्व अपने समस्त गुणों को प्रकट कर साधक के अभीष्ट को पूर्ण करता है, उसे 'ध्यान' कहते हैं। श्रीबटुक भैरव के सात्त्विक, राजस तथा तामस—तीनों रूपों का वर्णन अनेक तन्त्रों में है। 'शारदा-तिलक' और मेरुतन्त्र' आदि में तीनों ध्यान भिन्न-भिन्न प्रकार से वर्णित हैं, मन्त्र एक ही है, रूप उपासना-भेद से फल भिन्न हैं। जैसाकि कहा गया है—

यथा कामं तथा ध्यानं कारयेत् साधकोत्तमः।

जैसा कार्य हो, साधकोत्तम वैसा ही ध्यान करे।

विशेष फल की दृष्टि से भी बताया है कि—

सात्त्विकं ध्यानमाख्यातमपमृत्युनिवारणम्।
आयुरारोग्य — जननमपवर्ग — फल—प्रदम्॥
राजसं ध्यानमाख्यातं धर्मकामार्थ-सिद्धिदम्।
तामसं शत्रुशमनं कृत्याभूत-प्रहास्पदम्॥

—'सात्त्विक ध्यान' अपमृत्यु का निवारक, आयु-आरोग्य का कारण तथा मोक्ष-फल का देने वाला है। धर्म, अर्थ काम की सिद्धि देने वाला 'राजस-ध्यान' है। कृत्या-भूत-ग्रहादि के द्वारा शत्रु का शमन करनेवाला 'तामस-ध्यान' कहा गया है।[1] इस दृष्टि से हमने तीनों प्रकार के ध्यान नामावाली के प्रारम्भ में दिये हैं। यहां श्रीबटुक भैरव के ध्यान के आधार पर बने हुए चित्रों को भी प्रकाशित किया है जिससे साधक को ध्यान में सरलता प्राप्त हो।

ध्यान और मन्त्र का सम्बन्ध

इष्टदेव के ध्यान और मन्त्र अनेक प्रकार के हैं। ध्यान और मन्त्र का घनिष्ठ सम्बन्ध है। देवता के ध्यान में केवल निर्विकल्प-भाव की उपासना 'ध्यान' नहीं कही जा सकती। ध्यान का अर्थ है—देवता का सम्पूर्ण आकार एक क्षण में मानस-पटल पर प्रति-बिम्बित होना। मन्त्र के दो धर्म होते हैं, १. मनन और २. त्राण। मन्त्र नित्य होते हैं; साथ ही देवता के सूक्ष्म शरीर भी। मन्त्र में नाद शक्ति होती है। मातृकाओं से मन्त्र बनते हैं। मन्त्र से देवता का शरीर बनता है, न्यास में मातृकाओं के विन्यास से देवता का स्वरूप ज्ञान होता है। विन्यास में मातृकाओं का वैचित्र्य पाया जाता है। प्रत्येक देवता के न्यास में अन्तर होता है। मन्त्र स्थूल दृष्टि से अक्षर-समुदाय होते हैं, उनमें नाद और प्रकाश अभि-

---

१. अन्यत्र यह भी कहा गया है—

शान्तिके सात्त्विकं ध्यानं वश्यादौ राजसं मतम्।
मारणादौ तामसं तद्देवं ध्यायेन्महेश्वरम्॥

व्यक्त होते हैं। जप, ध्यान आदि के प्रयास से साधक के चित्त में नाद प्रकाशरूप में परिणत होकर साकार देवता के रूप में स्फुरित होता है। मन्त्रोपासना में नाद और प्रकाशरूप तथ्य प्रतिपादित हैं। एक ही क्षण में ध्यान और मन्त्रोच्चार करने से देवता का साक्षात्कार होता है। मन्त्रशास्त्र में न्यास का जितना महत्त्व है, उतना ही ध्यान का भी है। ध्यान एकतानता के साथ एक अखण्ड-स्वरूप का होना चाहिये। मन्त्रजप से इष्टदेव के साकार-स्वरूप की धारणा के साथ-साथ चरण से मस्तक तक का सावयव समग्रचित्त उपस्थित होना चाहिये। यह तभी सम्भव है जबकि साधक की धारणाशक्ति अखण्डता को प्राप्त कर लेती है। यह शक्ति अन्तर्लक्ष्य और बहिर्दृष्टि से अर्थात् निमेष और उन्मेष से वर्जित बाह्य दृष्टि को स्थिर रखते हुए लक्ष्य—सम्पूर्ण ज्ञानगत मूर्ति—को अपने मानसपटल पर लाना है। काल की दृष्टि से उन्मेष सृष्टि है और निमेष संहार है। इनके मध्य की खाई को पाटकर ही अखण्ड ध्यान सम्भव है।

सात्त्विक ध्यान इस प्रकार है—स्फटिक के समान शुभ्रवर्ण, कुण्डलों से देदीप्यमान, दिव्य मणिगण, किंकिणी और नूपुर से भूषित, तेजस्वी प्रसन्नवदन, त्रिनेत्र, दोनों हाथों में शूल और दण्डधारी बालस्वरूप श्रीबटुकभैरव को मैं प्रणाम करता हूं।

राजस ध्यान का स्वरूप इस प्रकार है—उगते हुए सूर्य के समान अरुण वर्ण, त्रिनयन, लालपुष्पों की माला धारण करने वाले, प्रसन्नमुख; हाथों में वरद, कपाल, अभय और शूलधारी, नीलग्रीव, उदारभूषण से युक्त, चन्द्रकला से विभूषित एवं लालवस्त्र वाले भयहारी श्रीभैरवनाथ का मैं सदा ध्यान करता हूं।

तामस ध्यान का वर्णन इन शब्दों में हुआ है—नील पर्वत के समान, चन्द्रकलाधर, मुण्डमालाधारी, महेश, दिगम्बर, दीपशिखा के समान रंगवाले केशों से युक्त, डमरू, अंकुश, खड्ग, पाश, अभय, नाग, घण्टा एवं कपालरूप आयुधों को आठ हाथों में लिये हुए, विकराल डाढ़ों वाले, त्रिनेत्र तथा मणिमय किंकिणी और नूपुरों से विभूषित भगवान् भैरव का मैं ध्यान करता हूं।

अन्य ध्यानों में 'विश्वाकर्षण दशभुज बटुक' का ध्यान भी है जिसमें "शान्त, पद्मासनस्थ, चन्द्रमुकुटधर, मुण्डमालाधारी, शूल, खड्ग, वज्र, परशु, मुसल को दक्षिणांग में तथा नाग, घण्टा, कपाल, अंकुश तथा पाश को वामाङ्गस्थ करकमलों में धारण करने वाले, विभिन्न अलंकारों से युक्त, स्फटिकमणि के समान गौरवर्ण, बालस्वरूप भगवान् को मैं नमन करता हूं।" यह कहा गया है।

ऐसे अन्य अनेकविध ध्यान-पद्यों के आधार पर ही विविध साधनाओं के लिये श्रीभैरव के विविधरूपों का निर्धारण होता है। साधना के लिये निश्चित समयों में—१. प्रातः, २. मध्याह्न, ३. सायं, ४. अनाख्या (तुरीय काल) एवं ५. भासा काल की गणना होती है। इस दृष्टि से भी ध्यानों में परिवर्तन-परिवर्धन होते हैं।

कहीं-कहीं फल में न्यूनाधिकता भी वर्णित है।

साधना के दस अङ्ग और नामावली स्तोत्र

'श्रीबटुक-पटल' में कहा गया है कि—हे पार्वती ! मैंने प्राणियों को सर्वविध सुख-देनेवाला वटुकरूप धारण किया है। अन्य देवता तो समय आने पर फल देते हैं किन्तु भैरव तो सेवित होने पर तत्काल प्रसन्न होते हैं। दुःख में सेवा करने पर शीघ्र दुःख का नाश और सुख में सेवा करने से नित्य सुख की अभिवृद्धि के लिये श्रीबटुक भैरव का स्मरण, पूजन, स्तोत्रपाठ, सहस्र नाम पाठ, मन्त्र-जप, यन्त्रपूजा एवं यन्त्र धारण, तन्त्रात्मक हवन और दीपदान आदि कर्म सदा करने चाहिये।

साधना के लिये देवता के पञ्चाङ्ग का ज्ञान तथा प्रयोग अपेक्षित है। क्योंकि—

कवचं देवतागात्रं पटलं देवताशिरः।
पद्धतिर्देवहस्तौ तु मुखं साहस्रकं स्मृतम्।
स्तोत्राणि देवतापादौ पञ्चाङ्गं पञ्चभिः स्मृतम् ॥

कवच देवता का शरीर है, पटल देवता का सिर है, पद्धति देवता के हाथ हैं, सहस्रनाम मुख है और स्तोत्र देवता के पाद हैं। इन पांच अंगों के साथ ही जप, होम, तर्पण, मार्जन और ब्राह्मण भोजन इन पांच से मिलकर दशाङ्ग पूर्ण होते हैं।

नित्यकर्म विधि में ब्राह्ममुहूर्त में गुरुस्मरण, नित्यकर्म और न्यासादि का महत्त्व है। तदनन्तर इष्टदेव की पूजा, मन्त्रजप और स्तोत्र पाठ का विधान है। इसी पद्धति का अनुसरण करते हुए यहां 'प्रयोग-खण्ड' में गुरुस्मरण-पूर्वक 'नित्यकर्म-प्रयोग-विधि' का उल्लेख हुआ है।

श्रीबटुक-भैरव की अष्टोत्तरशतनामावली' का पाठ आपदुद्धारण एवं अन्यान्य सभी प्रकार के कार्यों की सिद्धि के लिये अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना गया है। इसके तान्त्रिक पद्धति से जो पाठ होते हैं वे अद्भुत चमत्कारी हैं। अतः यहां इस नामावलीस्तोत्र के सम्वन्ध में विशेष जानकारी देना आवश्यक समझ कर विस्तार से परिचय दे रहे हैं। साधकगण इसका पूर्ण परिचय प्राप्त करके अनुष्ठान करें, अवश्य ही तत्काल लाभ होगा।

स्तोत्र-विद्या

स्तोत्र-साहित्य का विराट्रूप—भारतीय साहित्य में वैदिक-वाङ्मय से लौकिक प्रार्थनाओं तक यदि निर्णायकदृष्टि से विचार किया जाए तो परिणाम, प्रकार-विशेष और कवि-कृति के रूप में सर्वाधिक साहित्य स्तोत्र के रूप में ही उपलब्ध होता है। वैदिक मंत्र-द्रष्टाओं ने सूक्तों के रूपमें देव औरप्रकृति की स्तुतियाँ की हैं। संहिता-ग्रन्थों में ऐसे अनेक स्तोत्र हैं जिनका विचार ब्राह्मण और आरण्यकों में विस्तार से हुआ है। उपनिषदों में भी देव-देवी-स्तोत्र स्वयं उपनिषद् के नाम से व्यवहृत हैं। पुराण स्तुतियों के आगार हैं। कुछ पुराणों में तो प्रत्येक प्रसङ्ग में स्तुति की गई है, जिनकी संख्या शताधिक हो जाती है।

तन्त्रशास्त्रों ने इन स्तुतियों की परम्परा का इतना उपवृंहण किया है कि जिसके फलस्वरूप प्रत्येक उपास्यदेव की स्तुति में 'गुण, कर्म, स्थान, अवतार, आकृति, प्रसंग' आदि के सन्दर्भ को लक्ष्य में रखकर अनेकता प्रस्तुत हुई है। कुछ युगलस्तुतियां हैं तो कुछ तान्त्रिक स्तुतियाँ[1], कुछ दार्शनिक स्तुतियाँ हैं तो कुछ नाम-स्तुतियाँ, कुछ शास्त्रपरक हैं तो कुछ सम्प्रदाय-परक, कहीं आभाणक का समावेश है तो कहीं मन्त्र-यन्त्रादि का। इस प्रकार स्तोत्र-साहित्य वस्तुतः भगवान् के विराट् स्वरूप के समान ही विराड्रूप है।

स्तोत्र-विद्या की सृष्टि—मानव जन्म से पूर्व मातृगर्भ में जब पीड़ा का अनुभव करता है, जन्म के समनन्तर ही शीतवातातपजन्य कष्टों का अनुभव करता है, सांसारिक दुःखों की परिधि में घिरा हुआ बेचैनी से विकल बनता है और असहायावस्था में किंकर्तव्यविमूढ बनकर अशरण-शरण प्रभु की शरण में पहुंचता है तब बरबस उसकी वाणी जिस रूप में शब्द-देह धारण करती है, वही 'स्तुति' है। वह कथन-प्रकार ही शत-शतरूपों में आविर्भूत होकर प्रभु को कृपा करने के लिये विवश करना चाहता है, उसमें स्तोता की दयनीयता, अकिञ्चनता, असमर्थता और स्तोतव्य की दयालुता, सर्वसम्पन्नता एवं सुसमर्थता का आख्यान स्तोत्र का प्रकार-विशेष कहा जा सकता है। भारतीय परम्परा में प्रत्येक वस्तु की उत्पत्ति के सम्बन्ध में दो दृष्टियाँ प्रसिद्ध हैं। पहली दृष्टि में—जो भी वस्तु-प्रक्रिया है, वह स्वयं प्रभु द्वारा लोकहिताय प्रकाशित है और दूसरी दृष्टि में—जो भी प्रक्रिया प्रचलित है वह प्रभु के लिये मानवद्वारा विहित एक पारम्परिक प्रयास है। वस्तुतः इन दोनों बातों को स्वीकृत करने में किसी को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये, क्योंकि इसमें केवल तृतीया और चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग ही भेदक है, परन्तु जब हम ईश्वर को ही कर्ता, धर्ता और हर्ता मानते हैं तो उसमें मानव का अपना कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं रहता।

वाङ्मय में स्तोत्र-साहित्य का स्वरूप—वैदिक काल से ही स्तोत्र-विद्या का निखरा हुआ रूप हमारे समक्ष प्रस्तुत होता है। ऋग् शब्द स्तोत्र का ही पर्यायवाची है, सामगान भी स्तुति की पूर्ति करता है और यजुष् शब्द की सार्थकता भी स्तोत्र के द्वारा ही साध्य है। आथवर्ण-स्तुतियाँ भी कम नहीं हैं। हमारे ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् भी उसी एक परब्रह्म की महिमा का गान करते हैं। तन्त्र-विद्या स्तुति का साक्षात् उपदेश देती है, पुराण अपने आख्यानों में पद-पद पर स्तुतियाँ प्रस्तुत कर रहे हैं, महाकाव्य, खण्डकाव्य और मुक्तक भी स्तुतियों से अछूते नहीं हैं। साधकों, भक्तों और आर्तजनों द्वारा स्तोत्रों की जो परम्परा प्रवाहित की गई है, उसकी इयत्ता का निर्धारण कौन कर सका है? ये स्तोत्र अथवा स्तुतियाँ अनेकरूप में उपलब्ध हैं जिनका वर्गीकरण पूर्णतः कथमपि संभव नहीं है, तथापि कुछ अंशों में हम इस रूप में पहचान सकते हैं—१. द्रव्यस्तोत्र, २. कर्मस्तोत्र, ३. विधिस्तोत्र तथा ४. अभिजनस्तोत्र। इनमें भी प्रत्येक के १. आराधना स्तोत्र,

---

१. ऐसी कुछ स्तुतियों के सविधि-परिचय एवं मूलपाठ हमारी "स्तोत्र-शक्ति" नामक पुस्तक में शीघ्र ही प्रकाशित हो रहे हैं। कृपया वहीं देखें।

२. अर्चनास्तोत्र और ३. प्रार्थनास्तोत्र इस तरह तीन-तीन भेद होते हैं। आराध्य के प्रति भक्ति तथा उनके ऐश्वर्य, रूप और गुण का विस्तृत वर्णन जिसमें हो, वह 'आराधनास्तोत्र' है। द्रव्य-मूलक पूजा के प्रकारों के साथ ईश्वर के कृतित्व और कर्तृत्व का जिसमें विश्लेषण हो, वह 'अर्चनास्तोत्र' कहलाएगा और आराध्यविषयक प्रशंसा, आराधक की दयनीयता और हीनता के प्रदर्शन द्वारा विशेष अनुकम्पा की भावना जिससे व्यक्त हो, वह 'प्रार्थनास्तोत्र' है। इनके अतिरिक्त भी स्तोत्रों के अनेक प्रकार बताये गये हैं जिनमें मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र-भेषज-प्रयोगगर्भ, नामगर्भ-स्तोत्र आदि तान्त्रिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। भैरव-नामावली को हम 'नामगर्भ' स्तोत्र कह सकते हैं।

श्रीबटुकभैरवमहिमा

श्रीबटुकभैरव की शास्त्रों में वर्णित महिमा अपार है। तन्त्रों में पृथक्-पृथक् आगमों की गणना में 'भैरवागम' का विशेष स्थान हैं। शैवागम और रुद्रागम में भी भैरवागम का समावेश है। इनकी संख्या ६४ बताई गई है। आगम के चार पाद १. ज्ञान, २. योग, ३. चर्या और ४. क्रिया में सभी प्रकार की साधनाओं का समावेश हुआ है। यह निर्देश 'श्रीकण्ठी-संहिता' में मिलता है कि उपर्युक्त १४ भैरवागम अद्वैतसिद्धान्त के प्रतिपादक हैं इसके साथ ही भैरवाष्टक, यामलाष्टक, मत्ताष्टक, मंगलाष्टक, शुक्राष्टक, बहुरूपाष्टक, वागीशाष्टक और शिखाष्टक इन आठ अष्टकों में भी वटुकभैरव के विभिन्न नाम, रूप, गुण, कर्मादि के आधार पर भैरवोपासना का वर्णन किया है।

६४ तन्त्रों में ५ से १२ तक की संख्या वाले तन्त्र—१. सिद्ध, २. वटुक, ३. कङ्काल, ४. काल, ५. कालाग्नि, ६. योगिनी, ७. महाभैरव और ८. शक्तिभैरव हैं और ये ऐहिक फल देने में उपयोगी बताये हैं।

वैसे सर्वत्र यह स्पष्ट है कि भगवती महाभैरवी है और भगवान् शिव महाभैरव हैं। अतः भैरव की उपासना से सर्वसिद्धि सुलभ है।

रुद्रयामल में कहा गया है—आपदुद्धारक श्रीभैरव के सहस्र, दशसहस्र और अर्बुद नाम हैं। उन्हीं का सार-संग्रह करके १०८ नामों का संग्रह बनाने की भगवती पार्वती ने शिवजी से प्रार्थना की थी—

तस्य नाम-सहस्राणि प्रयुतान्यर्बुदानि च।
सारमुद्धृत्य तेषां वै 'नामाष्टशतकं' वद॥

तदनुसार सङ्कीर्तन-मात्र से सर्व कामनाओं को पूर्ण करनेवाला, सर्वपापहर, पुण्य, सर्वापत्तिनिवारक, साधकों को सुखप्रद, आयुष्कर, पुष्टिकर, श्रीकर और यशस्कर यह 'अष्टोत्तरशतनामयुत भैरवस्तोत्र' कहा गया है। इससे यह स्पष्ट है कि इसमें आये हुए १०८ नाम भैरव के अनन्तनामों का एक वैज्ञानिक साररूप संग्रह है।

प्राचीनकाल में ऐसे नामों को क्रमशः स्मृति में रखने तथा पाठादि की सुविधा के

लिये श्लोकबद्ध किया जाता था। अतः इस नामावली के अनुष्टुप् में संकलित पद्य ही पाठ में प्रचलित हो गये। इसी प्रकार का एक स्तोत्र कालसङ्कर्षिणी-तन्त्र में भी प्राप्त होता है।[1] उसमें भी १०८ नाम श्रीवटुकभैरव के सङ्कलित हैं। सम्भवतः भैरवपूजा-विधानों में इन नामों का कहीं-कहीं मिश्रण भी हो गया है। फिर भी अधिकांश प्रचलित एवं सद्यः-सिद्धिदायक यही स्तोत्र माना गया है। अतः इसी का विवेचन इस पुस्तक में किया गया है। 'भैरवसहस्रनाम' में भी इसी प्रकार ग्रन्थों और तन्त्रों में पाठ-प्रभेद हो जाने से कुछ पाठान्तर हैं। इससे फलप्राप्ति में तर-तमता का आजाना स्वाभाविक ही है। अतः योग्य गुरु-परम्परा की नितान्त आवश्यकता रहती है।

'वेशमा' नामक प्रसिद्ध विश्वामित्रपुर के 'व्याघ्रपाद प्रकाशक यन्त्रालय' तथा वाराणसी के 'सुधानिवास यन्त्रालय' से प्रकाशित प्रतियों में यह स्तोत्र शिलायन्त्र में छपा है। इसके अतिरिक्त अनेक पद्धतिग्रन्थों में और 'श्रीवटुकोपासना' के नाम से मुद्रित ग्रन्थ में यह स्तोत्र केवल नाममय और पूर्वापर पद्यों सहित प्राप्त होता है। रुद्रयामलोक्त विश्व-सारोद्धार तन्त्रगत इस स्तोत्र के आरम्भ में कहीं ४२ और कहीं ४४ पद्य दिये गये हैं उनमें अर्धपद्यों सहित ४२ पद्यों का सारार्थ इस प्रकार है—

मेरुपृष्ठ पर विराजमान शिव से पार्वती ने पूछा कि—सर्व शास्त्र एवं आगमों में आपदुद्धारक तथा सर्वसिद्धिकर मन्त्र सुनने की मेरी इच्छा है अतः न्यास-सहित उसका वर्णन कीजिये। उत्तर में शिवजी ने मन्त्र-माहात्म्य और—'ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं' यह मन्त्र बतलाया। तदनन्तर एक अन्य प्रश्न के उत्तर में भैरव के अरबों नामों के साररूप एक सौ आठ नाम बतलाते हुए उसकी महिमा, ऋषि, छन्द, देवता, शक्ति, बीज और कीलक, अंगन्यास, करन्यास, देहन्यास, दिशान्यास, करन्यास, नामाङ्गन्यास तथा ध्यान का वर्णन है। इनके पश्चात् तन्त्रान्तर से संगृहीत सात्त्विकादि ध्यान भी दिए गए हैं जिन्हें मूल पाठ से पूर्व दिया है।

नामावली के अन्त में 'अष्टोत्तरशतं नाम्नां' से 'धनधान्यमवाप्नुयात्' तक १३-१/२ पद्य मूलपाठ के अन्त में पृ० १९-२० में छपे अनुसार हैं। किन्तु वाराणसी वाली पुस्तक में ये पद्य अधिक मिलते हैं—

धनं पुत्रांस्तथा दारान् प्राप्नुयान्नात्र संशयः।
\+ \+ \+ \+
निगडैश्चापि यो बद्धः कारागृहनिपातितः।
शृङ्खलाबन्धनं प्राप्तः पठेच्चैव दिवानिशम्॥
\+ \+ \+ \+

---

१. भैरवतन्त्रोक्त 'कालाग्नितन्त्र' में भी एक 'अष्टोत्तरशतनामावली-स्तोत्र' मिलता है।

अश्वत्थमूलेऽर्कवारे स्थित्वा पठति यः पुमान्।
अचलां श्रियमाप्नोति संग्रामे विजयी भवेत्॥
इति श्रुत्वा ततो देवी नामाष्टशतमुत्तमम्।
सन्तोषं परमं प्राप्य भैरवस्य महात्मनः॥
जजाप परया भक्त्या सदा सर्वेश्वरेश्वरी।
भैरवोऽपि प्रहृष्टोऽभूत् स्वयं चापि महेश्वरः॥

इस प्रकार कुल १८ पद्यों की फलश्रुति हो जाती है। इसमें विधि एवं प्रयोगों का भी सङ्केत दिया गया है जिसके आधार पर इस स्तोत्र की महिमा का पूरा आभास मिलता है और साक्षात् सर्वेश्वरेश्वरी के द्वारा इसका जप किया जाना इसके सर्वोच्च गौरव का सूचक भी है।

कितने पद्यों का यह 'नामावली-स्तोत्र' है ?

संस्कृत भाषा में यह विशेषता है कि इसका प्रत्येक स्वर अथवा वर्ण अपने स्वतन्त्र अर्थ से पूर्ण है और शब्दों की परस्पर मिलावट (सन्धि) कुछ इस प्रकार की होती है कि यदि उचित विच्छेद न भी किया जाए तो भी अर्थ-प्राप्ति में विशेष कष्ट नहीं होता। इस स्तोत्र में जो नामों की योजना है उसमें भी यही स्थिति है। कहीं १३-१/२ पद्य पाठ के लिए बताए हैं तो कहीं १४, कहीं १४-१/२ पद्यों का भी निर्देश है। ये निर्देश स्तोत्र की पाठविधि में इस प्रकार है :—

(१) पञ्चादि दशपर्यन्तं पठित्वादि-चतुष्टयम्।
एकादशादि—त्रितयं ऽार्धं सम्यक् पठेत्ततः॥

और कहीं चतुर्थ चरण में—

(२) सार्धकं सम्पठेत् ततः।

इनके अनुसार प्रथम पद्य १३-१/२ पद्य का संकेत करता है जब कि द्वितीय पाठ १४-१/२ पद्य का संकेत करता है।

प्राचीन प्रचलित स्थिति-पाठ में ५-६-७-८-९-१०, १-२-३-४ तथा ११-१२-१३ और अर्धश्लोक का पाठ १३-१/२ ही रहा होगा जैसाकि वंशीधरीसम्मत पाठ है।[1] दूसरी

---

१. श्रीमदभागवत-महापुराण के प्रसिद्ध टीकाकार श्री वंशीधरजी, खरड़—पंजाब के निवासी द्वारा निर्मित "भैरवनामावली" की टीका का सम्पादन-प्रकाशन हमने 'निगमागमानुसन्धान-केन्द्र-दिल्ली' के माध्यम से किया था। पुस्तक का नाम 'श्रीमदापदुद्धारक-बटुक-भैरव-स्तोत्रम् है।

प्रक्रिया में—'जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः' यह अर्धाली जोड़ देने पर १४ और लोम-विलोम-पाठ की अन्य प्रतियों में 'एवमेकादशावृत्त्या तरेद् दुस्तरसङ्कटात् ।' इस अर्ध-श्लोक की भी आवृत्ति होने से इसे सम्मिलित कर लेने पर १४-१/२ पद्य का यह स्तोत्र बन जाता है।

बहुधा यह स्पष्ट है कि स्तोत्र के साथ पुष्पिका का पाठ आवश्यक नहीं माना जाता किन्तु कुछ निर्देश ऐसे भी मिलते हैं कि 'पुष्पिका भी मन्त्ररूप ही है, जैसाकि श्रीसूक्त में 'यः शुचि प्रयतो भूत्वा' इत्यादि ऋचा का पाठ, गणपत्यथर्वशीर्षादि में आए फलदर्शक पदों का पाठ एवं अन्यान्य स्तोत्रों के फलसूचक पद्यों का पाठ प्रायः प्रचलित है।'[1] अतः १४-१/२ पद्यों का पाठ भी किया जा सकता है।[2]

किन्तु मेरी अपनी यह धारणा है कि इस नामावली स्तोत्र के चौदह पद्य १४ ही पाठ के लिए पर्याप्त हैं और वे बटुक-भैरव-पद्धति अथवा इस पुस्तक में प्रदत्त 'अभिनव संस्कृत-टिप्पणी'[3]—सम्मत पाठ-पद्य के अनुसार उचित हैं। इस विचार की पुष्टि सार्धकं में सार्ध शब्द का अर्थ 'साथ' मानने से हो जाती है। 'साकं सार्धं समं सह' ये अमरकोष में समानार्थक हैं तथा यदि व्याकरणगत विसङ्गति होती हो तो उसे ऋषिभाषित मानकर समाधान कर लें। इस प्रकार पाठ के लिए १४ पद्यों का पाठ ही उत्तम लगता है अतः इस स्तोत्र के आरम्भ के ४२ अथवा ४६ तथा अन्त के १३ अथवा १४ पद्यों को छोड़कर मूल नामावली के रूप में १४ पद्यों का पाठ मानना चाहिए।

पुष्पिका अथवा फलश्रुति

स्तोत्र-साहित्य में अतिप्राचीन काल से यह परम्परा चली आई है कि स्तोत्र-समाप्ति के पश्चात् एक अथवा उससे अधिक पद्यों में उसकी पुष्पिका अथवा फलश्रुति दी जाती है। वैसे इसका मूल वैदिक मन्त्रों के पूर्व प्रयोग में लिए जाने वाले ऋषि, छन्द, देवता और कर्म-विनियोग में ढूंढ़ा जा सकता है। ये प्रायः आधुनिक स्तोत्रों में कर्ता के नाम एवं स्तोत्रपाठ से प्राप्त होने वाले फल का सूचन करने से "फलश्रुति" कहलाते हैं जबकि प्राचीन स्तोत्रों में मात्र फल का संकेत अथवा स्तुति-पद्यों की महत्ता प्रदर्शित करने से पुष्पिका अथवा चूलिका कहलाते हैं।

पौराणिक अथवा तान्त्रिक स्तोत्रों में उपर्युक्त फलश्रुति आदि में अनेक प्रयोगों

---

१. जैन सम्प्रदाय के 'णमो अरिहंताणं' आदि नवकारमन्त्र में 'एसो पच णमुक्कारो' आदि चूलिका पद्य को भी मन्त्रमय माना है।

२. लेखक को श्रीकाशीनाथजी शास्त्री (हिमाचल प्रदेश के प्रखर तान्त्रिक विद्वान्) ने बताया था कि फलश्रुति के पाठ से स्तोत्र भी प्रसन्न होता है और वह शीघ्र फल देता है। अतः पाठ करना उचित है।

३. यह टिप्पणी भी हमने उपर्युक्त पुस्तक में प्रकाशित की है।

तथा पाठ-प्रकारों का भी संकेत रहता है। उदाहरणार्थ हम 'ललितासहस्रनाम' को लें, इसमें अनेक-विध प्रयोगों का सूचन है। ऐसी फलश्रुतियों के आधार पर स्तोत्र की महिमा का जो ज्ञान होता है उसमें भी एक विशेषता रहती है और वह है स्तोत्र के निर्माण की। हम देखते हैं कि कतिपय वैदिक स्तुतिरूप सूक्त हैं जिनकी रचना—"अस्य निःश्वसितं वेदाः' उस परब्रह्म परमात्मा के निःश्वास से प्रसृत वेद हैं, इसके आधार पर—न होकर आविर्भाव हुआ है और उनमें बताए गए पाठ-फल सिद्ध सत्य हैं।[१] अथर्वशीर्षों के अन्त में भी यही बात है।[२] वहाँ देवता के महत्त्व का वर्णन होने के पश्चात् फलश्रुति है और वह वेदवत् है। तन्त्रों में ऐसे स्तोत्र देव और देवांश के संवाद के रूप में प्रकट हुए हैं। संवादों में प्रायः यह कहा गया है कि—कोई महत्त्वपूर्ण, सारंरूप स्तोत्र, नामावली, कवच, हृदय, रहस्य अथवा पटल आदि कहिए, तब उसके उत्तर में आत्मीयता दिखाते हुए कथन किया जाता है तथा उसी के अन्त में उसकी महिमा, विधि अथवा कर्तव्यों का निर्देश रहता है।[३] पुराणों में इस पद्धति के अतिरिक्त एक नवीन प्रकार मिलता है जिसमें किसी आख्यान के प्रसङ्ग में देवताओं, ऋषियों अथवा भक्त-विशेष के द्वारा अपनी रक्षा, कार्यसिद्धि किंवा किसी आवश्यक उपलब्धि के लिए स्तुति की जाती है और तब इष्टदेव प्रसन्न होकर वर-दान देते हैं और साथ ही उस समय की गई स्तुति को भविष्य के लिए ऐसे कार्यों की साधिका के रूप में उपयोगी घोषित कर देते हैं।[४] कहीं-कहीं स्तोता स्वयं प्रार्थना करके भी वर माँग लेते हैं कि—'हमारे द्वारा की गई इस स्तुति का जो भी, जब भी विधिपूर्वक प्रयोग करे, आपकी कृपा से उसके सभी कार्य सिद्ध हों' तब देवता अपनी स्वीकृति एवं वर-प्रदान कर उसमें अपना तेजोंश निहित करते हैं। लौकिक कवि-भक्तों द्वारा बनाए हुए स्तोत्रों के अन्त में भी ऐसी ही उक्तियाँ रहती है जिनमें पाठफल के स्पष्ट संकेत दिए जाते हैं। इन संकेतों के आधार सम्भवतः स्तोता के अनुभव ही होते हैं। यह अवश्य है कि रच-यिता स्वयं अपने द्वारा निर्मित स्तुति का पाठ न करते हुए भी उसका जो माहात्म्य कहता है उसमें उसके अनुभवों की भावना के साथ-साथ उसकी प्रसिद्धि का भी अंश रहता है। निष्कर्ष है कि वैदिक, तान्त्रिक, पौराणिक एवं लौकिक स्तोत्रों में क्रमशः उत्तरोत्तर फल-वत्ता परिलक्षित होती है तथा स्तोता की महनीयता एवं स्तोतव्य की दयालुता, आशु-

---

१. 'श्रीसूक्त' के अन्त में सूक्त द्वारा हवन तथा उससे होने वाले लाभों के बारे में विशेष सूचन हैं।

२.—गणपति, देवी, सूर्य, शिव आदि के अथर्वशीर्षों में यह प्रक्रिया देखी जा सकती है।

३. सभी तान्त्रिक स्तोत्र, कवच, हृदयादि इसके प्रमाण हैं। इनका विवेचन हम आगे भी कर रहे हैं, वहीं देखें।

४. दुर्गासप्तशती में शक्रादिस्तुति और नारायणीस्तुति एतदर्थं दर्शनीय हैं तथा बारहवें अध्याय में भगवतीवाक्य से भी यह स्पष्ट है।

तोषिता, कर्मनैपुण्य आदि को समझकर श्रद्धा और विश्वास से विधिपूर्वक पाठ से ही उक्त फलश्रुतियाँ फलवती होती हैं। 'श्रीवटुकभैरवनामावली' साक्षात् भगवती पार्वती द्वारा पूछे जाने पर भगवान् शिव द्वारा प्रोक्त होने से इसकी फलश्रुति के अनुसार यह एक सिद्ध स्तोत्र माना गया है।

स्तोत्र-पाठ के प्रकार

किसी भी स्तोत्र का पाठ करने से पूर्व उसके सम्बन्ध में दिए गए निर्देशों को अवश्य समझ लेना चाहिए। क्योंकि गीता में कहा गया है—

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य, वर्तते कामचारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति, न सुखं न परां गतिम् ॥

—जो शास्त्रविधि को छोड़कर स्वेच्छानुसार कार्य करता है, वह न सिद्धि, न सुख और न परमगति को प्राप्त करता है।

अतः केवल भक्ति-भाव-मूलक स्तोत्रों के पाठ तो सर्वत्र केवल उच्च स्वर से अर्थानुसन्धानपूर्वक, नित्यकर्म के अन्त में किये ही जाते हैं किन्तु तान्त्रिक स्तोत्रों के पाठ की साधना प्रणाली कुछ भिन्न है फिर भले ही वे चरित्र-स्तोत्र हों अथवा मिश्र-स्तोत्र। इस दृष्टि से 'दुर्गासप्तशती' के पाठ-विधान में जिस प्रकार अनेकता है वैसे ही इस स्तोत्र के पाठों के प्रकार भी अनेक हैं, जिनमें से कुछ प्रकारों का विवेचन यहां दे रहे हैं।

सामान्य-पाठ—

इस पाठ में ॐ ह्रीं 'भैरवो भूतनाथश्च' से आरम्भ करके 'प्रभविष्णुरितीव हि' तक १४ पद्यों का पाठ किया जाता है। इसके पाठ से पूर्व पूर्वाङ्गविधि करनी आवश्यक है। पुरश्चरण अथवा एक से अधिक पाठ एक साथ करने पर आदि और अन्त की विधि एक-एक वार ही करनी चाहिए।

स्तोत्र का पाठ उच्चस्वर से करने का निर्देश इस प्रकार है—

मनसा यः स्मरेत् स्तोत्रं, वचसा वा मनुं जपेत्।
उभयं निष्फलं देवि ! भिन्नभाण्डोदकं यथा।

(कुलार्णवतन्त्र, उल्लास १५)

त्रिरावृत्ति-पाठ

इस पाठ के सम्बन्ध में लिखा है कि—

अनुलोमेन तत्रादौ पठेत् पश्चाद् विलोमतः।
पुनः स्यादनुलोमेन पाठः सिद्धिकरः शुभः ॥
त्रिरावृत्त्या स्तवस्यास्य एकावृत्तिः समीरिता।
कार्यसिद्धिः कष्टनाश एवं पाठाद् भवेद् ध्रुवम् ॥

अर्थात् पहले ऊपर बताए हुए सामान्य-पाठ, जो कि अनुलोम-पाठ भी कहलाता है के क्रम से पाठ करे तदनन्तर विलोम-पाठ अर्थात् पूरे स्तोत्र के २८ अर्धश्लोकों की पंक्तियों को क्रमशः २८, २७, २६, २५ इस ढंग से ('सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः' यहाँ से 'भैरवो भूतनाथश्च' तक) पाठ करे। और फिर सामान्य पाठ के समान आवृत्ति करे। ऐसी तीन आवृत्तियों के पाठ से इस स्तव की एक आवृत्ति मानी जाती है और ऐसा पाठ कार्य-सिद्धि और कष्टनाश के लिए तत्काल फलप्रद बतलाया है। अतः १. अनुलोम-पाठ, २. विलोम-पाठ तथा ३. अनुलोम-पाठ रूप एक को त्रिरावृत्तिपाठ कहते हैं।

सृष्टि, स्थिति और संहार-पाठ

वहीं लिखा है कि—

भैरवस्तवराजस्य पाठस्तु त्रिविधो भवेत्।
सृष्टिः स्थितिस्तथा चैव संहारक्रमभेदतः॥

भैरवस्तवराज का पाठ तीन प्रकार से होता है। १. सृष्टि-पाठ, २. स्थिति-पाठ और ३. संहार-पाठ। इन पाठों की प्रक्रिया को स्पष्ट करते हुए बतलाया है कि—

आदितः शेषपर्यन्तं सृष्टिक्रम उदाहृतः।
धनकामे पुष्टिकामे सृष्टिमार्गेण सम्पठेत्॥
पञ्चादि-दशपर्यन्तं पठित्वादि-चतुष्टयम्।
एकादशादि-त्रितयं सार्द्धकं सम्पठेत् स्थितौ॥
शेषमारभ्य आद्यन्तं संहारक्रम ईरितः।
एवं पाठाः प्रकर्तव्याः पुरुषेण विपश्चिता॥

इसके अनुसार सृष्टि-पाठ में आदि से अन्त तक पाठ करना चाहिए जो कि सामान्य-पाठ के रूप में ऊपर बताया है। यह पाठ धन और पुष्टि के लिए उपयुक्त है।

स्थितिपाठ में 'धनदोऽधनहारी' से आरम्भ कर 'भूधरात्मजः' तक तथा 'कङ्काल-धारी' से आरम्भ कर 'प्रभविष्णुरितीव हि' तक अर्थात् ५-६-७-८-९-१०—१-२-३-४—११-१२-१३-१४ इस क्रम से पाठ करें।

संहार-पाठ में अन्तिम अर्धश्लोक 'सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः' से आरम्भ कर 'भैरवो भूत-नाथश्च' इत्यादि अर्धश्लोक तक उलटा पाठ करें। इसी को विलोम-पाठ के रूप में ऊपर समझाया है।

यह प्रश्न होना स्वाभाविक है कि उपर्युक्त सृष्टि, स्थिति और संहार-पाठ के क्रमों में से कौन-सा पाठ करना चाहिए ? किसे करना चाहिए और कब करना चाहिए ? इसका उत्तर यह है कि सृष्टि, स्थिति और संहार-पाठ की प्रक्रिया निम्नलिखित तीन बातों का सूचन करती है। जैसे—

१. कर्ता की दृष्टि से—ब्रह्मचारी के लिए सृष्टि-क्रम, गृहस्थी के लिए स्थितिक्रम और वानप्रस्थ अथवा संन्यासी के लिए संहारक्रम उत्तम माना गया है।

२. कर्म की दृष्टि से—धन, पुष्टि आदि के लिए सृष्टिक्रम, अन्य शान्ति, सुख, यश आदि के लिए स्थितिक्रम तथा मारण, उच्चाटन, शत्रुनाश आदि के लिए संहारक्रम उपयोगी है।

३. काल की दृष्टि से—प्रातः सृष्टिक्रम, मध्याह्न में स्थितिक्रम और सायंकाल में संहारक्रम से पाठ होना चाहिए।

यदि त्रिरावृत्ति पाठ करना हो तो उसमें अनुलोम-पाठ को सृष्टि, स्थिति अथवा संहारक्रम से जमा लें तथा उन्हीं के अनुसार त्रिकाल पाठ की प्रक्रिया निश्चित करें। इन पाठों के साथ सृष्टि में सात्त्विक ध्यान, स्थिति में राजस ध्यान और संहार में तामस ध्यान होना चाहिए।

अनुलोम विलोमाक्षर रूप पाठ

हमें इस स्तोत्र का एक पाठ 'अनुलोम-विलोमाक्षररूप' भी प्राप्त हुआ है जो वैद्य पं० जयनरायण जी त्रिवेदी के संग्रह में था। पं० रमादत्तजी वैद्य ने इस पाठ की प्रति लिखकर प्रकाशनार्थ दी है। इस पाठ में वटुकभैरवमन्त्र का पाठ भी संयुक्त है। सम्पुटित रूप में अंकित भैरवमन्त्र के बीच में प्रथम अनुलोम-पद्य 'भैरवो भूतनाथश्च' से 'क्षत्रियो विराट्' तक पाठ है उसके बाद 'ट्रावियोत्रिक्ष' इत्यादि प्रत्यक्षर-विलोममूलक 'वोरभै' तक पाठ है तथा इसके अनन्तर 'क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्। भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।' इस पद्धति से पाठ है तत्पश्चात् फिर मन्त्र है। अतः यह 'प्रति-पद्य-मन्त्र-सम्पुटित' पाठ भी है। यह=१. अनुलोमपाठ, २. प्रत्यक्षरविलोम पद्य-पाठ, ३. प्रतिपद्यार्धपद्य विलोम पाठ तथा ४. प्रतिपद्यसम्पुटित मन्त्रपाठ—ऐसी चार प्रक्रियाओं से युक्त है।

प्रस्तुत-पाठ में यदि 'प्रतिपद्यानुलोम-विलोमपाठ' की प्रक्रिया अपनाई जाएगी तो १. भैरवो भूतनाथश्च, २. क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च, ३. क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च और ४. भैरवो-भूतनाथश्च, ऐसा पाठ होगा। और प्रतिपद्याक्षरानुलोम-विलोम की प्रक्रिया अपनाई जाए तो—भैरवो भूतनाथश्च से 'क्षत्रियो विराट्' तक पाठ करके 'ट्रावियोत्रिक्ष' से 'भूश्चथ-नातभू वोरभै' तक पाठ होगा तथा यह एक नवीन पद्धति होगी। इस पद्धति से इन पाठों का भी १. सृष्टि, २. स्थिति और ३. संहारपाठ हो सकता है। इस तरह ये छः प्रकार बनेंगे जिन्हें त्रिक क्रम से भी किया जा सकता है।

एक बात इसमें विचारणीय है कि जब अक्षरों को विलोम पढ़ा जाता है तो उसमें सन्धिगत नियमों का पालन करना चाहिए अथवा नहीं? इसका समाधान परम्परा से यही मिलता है कि मन्त्राक्षरों को विपरीत कर देने पर भी उनका स्वरूप वही रहेगा।

जैसे 'नमः शिवाय'—'यवाशि मः न'। इस पद्धति के अनुसार मन्त्रोच्चारण से होनेवाले शारीरिक प्रभाव में वैषम्य नहीं आयेगा। मन्त्रशास्त्रीय व्याकरण की पद्धति कुछ अलग है और लौकिक व्याकरण की अलग। इस सम्बन्ध में किसी विशिष्ट नियमसूचक ग्रन्थ की उपलब्धि न होने से निश्चित नहीं कहा जा सकता।

पद्यपाठ और नामपाठ

हम पहले कह चुके हैं कि 'स्मृति में रखने और शीघ्र पाठ के लिए नामों को पद्य-बद्ध बना लिया जाता था, वे ही पाठ में भी प्रयुक्त होते रहे हैं। ऐसे पद्यों में यत्र-तत्र 'च, हि, तथा इव' आदि अव्ययों का आश्रय अवश्य लिया गया है और पाठ-परम्परा में इनकी भी आवृत्तियां होती रहती हैं। अनुभवी साधकों का कथन है कि इन अव्ययों का नामावली के साथ पठन होने से उच्चारणगत रक्तसंचार की प्रक्रिया में व्यवधान आता है जिससे जैसा फल होना चाहिए वैसा नहीं हो पाता। यह बात सत्य भी प्रतीत होती है क्योंकि 'ललिता-सहस्रनाम' में एक भी चकाराद्यव्यय नहीं है। यदि बिना अव्ययादि के ही नाम योजना हुई हो तो वह पूर्णतया मन्त्ररूप ही मानी जाएगी।

एक निर्देश यह भी प्राप्त हुआ है कि पहले इन अव्ययों के स्थान पर बीजमन्त्रों का प्रयोग होता था किन्तु गुप्त रखने की दृष्टि से उनके स्थान पर अव्यय रख दिए हैं। उन बीजमन्त्रों को गुरुपरम्परा से जानना चाहिये।[1]

इन्हीं कारणों से स्वतन्त्र नामावली का पाठ आवश्यक है। इस नामावली में च ९ हैं, तथा २ है और इति, इव एवं हि १-१ हैं। कुल १४ अव्यय इसमें हैं।

केवल नाम-पाठ की अपेक्षा प्रतिनाम को सविभक्तिक बनाकर पाठ करना चाहिए। यह विभक्ति 'नमः' पद के अन्त में रहने पर चतुर्थी होगी। नाम को मन्त्र बनाने के लिए 'गरुडपुराण' में निर्देश मिलता है कि—

प्रणवादि नमोऽन्तं च चतुर्थ्यन्तं च सत्तम।
देवतायाः स्वकं नाम, मूलमन्त्रः प्रकीर्तितः॥

अर्थात् आदि में प्रणव ॐ तथा अन्त में 'नमः' पद जोड़कर देवता के अपने नाम के साथ चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग करने पर वह उस देवता का मूल-मन्त्र बन जाता है। अतः भैरवादि प्रत्येक नाम का 'ॐ भैरवाय नमः' इत्यादि रूप में बनाकर पाठ करना चाहिए। सर्वत्र भैरव के नामों के साथ 'ह्रीं' बीज का रहना भी आवश्यक माना गया है, अतः हमने 'ह्रीं' बीज सहित पाठ दिया है और यह सूचन भी कर दिया है कि कामनापरत्वेन बीज का परिवर्तन भी हो सकता है।

---

१. पूज्य गुरुदेव से हमने आग्रह किया था कि वे बीजमन्त्र भी इस ग्रन्थ में पाठ के साथ दे दिए जाएँ, किन्तु उन्होंने बताया कि हमें आज्ञा-प्राप्त नहीं है तथा किसी प्रति में अभी ऐसा पाठ भी नहीं मिला है। अतः वैसा नहीं हो सका।

ऐसा 'प्रणव, बीज, चतुर्थ्यन्त नाम तथा नमः पदयुक्त पाठ भी १. सृष्टि, २. स्थिति और ३. संहारक्रम के समान पूर्ववत् पठनीय है, जिसमें नामक्रम '१. भैरव से प्रभविष्णु' तक अनुलोम अथवा सृष्टिपाठ, २. धनद से 'भूधरात्मज' तक तथा 'भैरव' से 'योगिनीपति' तक और 'कङ्कालधारी' से 'प्रभविष्णु' तक स्थितिपाठ, एवं ३. 'प्रभविष्णु' से 'भैरव' तक संहार-पाठ होगा। इनके स्वरूप हमने पाठरूप में यथावत् दिए हैं। यदि इस प्रकार नामावली का त्रिरावृत्ति-पाठ करना हो, तो १. अनुलोम-सृष्टि-पाठ, २. विलोम-संहार-पाठ तथा पुनः ३. अनुलोम-सृष्टिपाठ करना चाहिए। और यह भी १. सृष्टि क्रम में—सृष्टि-सृष्टि-संहार-सृष्टि, २. स्थिति क्रम में—स्थिति-स्थिति-संहार-स्थिति एवं ३. संहार क्रम में—संहार-संहार-संहार-संहाररूप तीन प्रकार का पाठ होगा। इनमें नामक्रम १ से १०० सृष्टि, ३४ से ८०, १ से ३३ तथा ८१ से १०८ तक (स्थिति), और १०० से १ तक (संहार) पाठ होगा।

इनके अतिरिक्त विभक्ति-भेद, लिङ्गभेद, तथा स्वरूप-भेद से भी पाठ प्रकार में परिवर्तन हो सकते हैं। जैसे 'खड्गमाला' में आये नामों के १५ प्रकार के पाठ होते हैं उसी प्रकार यदि इन नामों के पाठ किए जाएं तो—१. शुद्ध अर्थात् 'भैरव' पुं रूप, २. स्त्री रूप-भैरवी आदि स्त्री-प्रत्ययान्त तथा ३. मिथुनरूप 'भैरव-भैरवी, इस तरह विभक्ति के द्वि-वचनान्त प्रयोगों से पाठ के ३ रूप बनते हैं। ये ही १. सम्बुद्धयन्त, २. नमोऽन्त, ३. स्वाहान्त, ४. तर्पयामि सहित तथा ५. जय जय पदयुक्त होने से ये ५ × ३ = १५ प्रकार बनते हैं। इस सम्बन्ध में गुरुपरम्परा ज्ञातव्य है क्योंकि ये पाठ तिथिक्रम से होते हैं।

मन्त्रसम्पुटित-नामावली-पाठ

प्रत्येक नाम के पूर्व और अन्त में मन्त्र का सम्पुट लगाकर पाठ करें अथवा प्रति-क्रमपाठ के आद्यन्त में सम्पुट लगाकर पाठ करें तो एक नवीन प्रक्रिया होगी। वैसे सम्बुद्धयन्त नामों के साथ अपने कार्य का स्मरण करते हुए अन्त में 'कुरु कुरु स्वाहा' जोड़कर दशांश पाठ करें तो यह अतिशीघ्र फलदायक होता है।

इसका स्वरूप इस प्रकार होगा।

ॐ ह्रीं भैरवाय नमः। हे भैरव! मम (अमुकं कार्यं) कुरु कुरु स्वाहा। ऐसे ही—"ॐह्रीं वं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं" अथवा 'ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणं कुरु कुरुस्वाहा, अथवा ॐ' बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं ॐ' इत्यादि किसी एक मन्त्र का सम्पुट लगाया जा सकता है।

सम्पुटादि पाठ-विधि

सम्पुटादि में क्रमशः १. योजना, २. पल्लव तथा ३. सम्पुट ये तीन प्रकार आते

हैं। योजना में किसी भी मन्त्र को पहले बोलकर बाद में पाठ, मन्त्र या नाम बोला जाता है, अतः यह आदि में ही लगता है। पल्लव में पाठ-मन्त्र के अन्त में अन्य मन्त्र लगाया जाता है, अतः यह केवल अन्त में ही लगता है। चिदम्बर-संहिता तथा सिद्धेश्वरी-तन्त्र में सम्पुट के दो प्रकार बताए गए हैं १. उदयसम्पुट और २. अस्तसम्पुट। इनमें उदय-सम्पुट में आदि और अन्त में मन्त्र तथा बीच में पाठ का मन्त्र रहता है। यह सम्पुट उदय तथा उत्कर्ष-लाभ के लिए उत्तम माना गया है। अस्त-सम्पुट में आदि में मन्त्र, मध्य में पाठमन्त्र तथा अन्त में विपरीत मन्त्र का पाठ होता है। यह चिकित्सा-शास्त्र के शराव-सम्पुट के समान एक सीधा और एक उल्टा होता है जो उग्र कर्म के लिए उपयोगी है।[1]

कतिपय अन्य रहस्यपूर्ण पाठ प्रकार

'मन्त्र-पारायण' क्रम के अनुसार पाठ के प्रकारों में निम्नलिखित प्रक्रियाओं का भी समावेश किया जा सकता है—

१. बाह्यपरावृत्तानुलोम, २. बाह्यपरावृत्तविलोम, ३. बाह्यपरावृत्त बाह्य-सम्पुट, ४. बाह्यपरावृत्तान्तर सम्पुट, ५. बाह्यपरावृत्त बाह्यपरावृत्त, ६. बाह्यपरा-वृत्तान्तर परावृत्त ७. बाह्यपरावृत्तबाह्यस्वाकीर्ण ८. बाह्यपरावृत्तान्यतराकीर्ण।[2]

इनके अतिरिक्त वर्णमाला के साथ पल्लव अथवा सम्पुट के रूप में अकारादि क्षकारान्त मातृका का प्रयोग अत्यन्त ही विलक्षण होने के साथ ही सद्यः सिद्धिप्रद होता है। इस सम्बन्ध में 'पञ्चस्तवी' के ये दो पद्य मननीय हैं—

माया कुण्डलिनी क्रिया मधुमती काली कला मालिनी,
मातङ्गी विजया जया भगवती देवी शिवा शाम्भवी।
शक्तिः शङ्करवल्लभा त्रिनयना वाग्वादिनी भैरवी,
ओङ्कारी त्रिपुरा परापरमयी माता कुमारीत्यसि॥

---

१. सम्पुटं द्विविधं ज्ञेयमुदयास्तकरं प्रिये !।
भृणूदयं त्वमत्रादौ पश्चादस्तं वदामि ते॥
मन्त्रमादौ पुनः श्लोकमन्ते मन्त्रं पुनः पठेत्।
पुनर्मन्त्रं पुनः श्लोकं कर्मेदमुदयः स्मृतम्॥
उदयोत्कर्षलाभाय सम्पुटोऽयमुदाहृतः।
अस्तं चिकित्साशास्त्रेषु शरावाभ्यां कृतं भवेत्॥
मन्त्रमादौ पुनः श्लोकमन्ते मन्त्रविपर्ययः।
मारणोच्चाटने बन्धे सम्पुटोऽयमुदाहृतः॥

२. यह प्रक्रिया कुछ क्लिष्ट अवश्य है किन्तु साधना के क्षेत्र में ज्ञातव्य भी है। अतः गुरुपरम्परा से जानें।

आईपल्लवितैः परस्परयुतैर्द्वित्रिक्रमाद्यक्षरैः,
काद्यैः क्षान्तगतैस्स्वरादिभिरथ क्षान्तैश्च तैस्सस्वरैः।
नामानि त्रिपुरे भवन्ति खलु यान्यन्यत्यन्तगुह्यानि ते,
तेभ्यो भैरवपत्नि ! विंशतिसहस्रेभ्यः परेभ्यो नमः ॥

यह उचित कहा गया है कि—

प्रायेणामृतमव्यक्तं व्यक्तं विषमितस्ततः।
क्षुण्णाक्षुण्णत्वतः स्तोत्र-पन्थानौ सुग-दुर्गमौ ॥

अर्थात्—अमृत प्रायः अव्यक्त ही है, जबकि विष तो इधर-उधर सर्वत्र सुलभ है। इसी प्रकार स्तोत्र के तत्त्व ज्ञान के लिये सरल और कठिन, सुगम और दुर्गम दोनों ही मार्ग हैं। (जिन्हें जानने का क्रमशः प्रयास करना चाहिये।)

दुर्गासप्तशती के साथ भैरवनामावली के प्रयोग

तन्त्रशास्त्रों में कहा गया है कि भगवती दुर्गा की कृपा-प्राप्ति के लिये भैरव की उपासना भी साथ-साथ करनी चाहिये। इस दृष्टि से सम्प्रदाय-क्रम में 'भैरव-नामावली' के १०८ नामों का पाठ भी दुर्गासप्तशती के साथ किया जाता है। यथा—

१. दुर्गासप्तशती के आदि में शापोद्धार और उत्कीलन के पश्चात् तथा अन्त में रहस्यत्रयपाठ के अनन्तर उत्कीलन-जप करके भैरव-नामावली का पाठ करने से सप्तशती का पाठ निर्विघ्न फल-दायक होता है।

२. प्रत्येक अध्याय के आदि और अन्त में सम्पुट के रूप में भी पाठ करने का निर्देश है। इससे नामावली के २६ पाठ होंगे।

३. तीनों चरित्रों के आदि और अन्त में पाठ करना भी अत्यन्त लाभ-कारी माना गया है। इससे ६ पाठ होंगे।

४. प्रत्येक उवाच मन्त्र के आस-पास पूरी नामावली का सम्पुट रूप से पाठ करना। इससे ५७ उवाच मन्त्रों के सम्पुट रूप से ११४ पाठ होते हैं। यह प्रयोग अत्यन्त सफल एवं कार्यसाधक है।

५. दुर्गासप्तशती में ३६० देवियों के नाम हैं। उनकी एक नामावली "श्रीविद्यार्णव-तन्त्र" में उपलब्ध है। ये श्रीचक्र के नौ आवरणों की पूजा में ४०-४० के क्रम से पूजित होती हैं। इनके नामों के साथ भी नामावली पाठ किया जाए तो ९ पाठ होंगे।[1]

६. प्रतिमन्त्र के साथ भी नामावली पाठ सम्पुट के रूप में किया जा सकता है।

१, यह नामावली हमारे द्वारा लिखित "श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी-खड्गमाला" में मुद्रित है, कृपया वहीं देखें।

ऐसा पाठ चरित्र-क्रम[1] से अथवा दैनिक अध्यायक्रम से करना सुविधाजनक होगा। ऐसे ही और भी कुछ प्रयोग प्राप्त होते हैं जिन्हें ज्ञात कर उपयोग करें।

'भैरवतन्त्र' में निर्दिष्ट प्रस्तुत नामावली के कुछ प्रयोग

१. सात मास तक प्रतिदिन रात्रि में ३८ पाठ करने से (कुल ११४० पाठ होने पर) विद्या और धन की प्राप्ति होती है।

२. तीन माह तक रात्रि में नौ अथवा बारह पाठ प्रतिदिन करने से इष्टसिद्धि प्राप्त होती है।

३. ऋण-निवारण के लिए 'आपदुद्धारण-मन्त्र' का जप करके रात्रि में प्रतिदिन बारह पाठ दीपक के सामने करने से सफलता मिलती है।

४. रात्रि में चार माह तक प्रतिदिन दस पाठ करने से सर्वसिद्धि प्राप्त होती है।

५. ४१ दिन का एक मण्डल होता है, ऐसे चार मण्डल तक प्रतिदिन रात्रि में बारह पाठ करने से इष्ट सिद्धि होती है।

६. ग्यारह मास तक प्रतिदिन चुआलीस पाठ करने से मन्त्रसिद्धि होती है।

७. दुस्तर आपत्ति से मुक्ति प्राप्त करने के लिए वटुक की उपासना रात्रि में करनी चाहिए।

८. वैसे वटुक की काम्य-साधना के लिए निम्नलिखित आठ कर्मों का निर्देश भी वहीं दिया गया है—

बटुकस्याष्टकर्माणि निशि कुर्याच्च साधकः।
पूजनं दीपदानं च बलिदानं तथैव च॥
मूलमन्त्रजपश्चैव स्तोत्रस्यापि जपस्तथा।
होमं सन्तर्पणं चैव मार्जनं विप्रभोजनम्॥

अर्थात् साधक को चाहिए कि वह वटुक के आठ कर्म रात्रि में करे। यथा—१. पूजन, २. दीपदान, ३. बलिदान, ४. मूलमन्त्रजप, ५. स्तोत्रजप, ६. होम, ७. तर्पण-मार्जन और ८. ब्राह्मणभोजन।

यहाँ मूल मन्त्रजप एवं स्तोत्रजप को भी रात्रि में करने का ही संकेत है। अतः यह प्रश्न स्वाभाविक है कि इसका पालन किस तरह हो? हमने इस सम्बन्ध में पूज्य स्वामी जी महाराज से जिज्ञासा की थी, तदनुसार समाधान मिला है कि—"यह सूचन विशेष-कर्म को दृष्टि में रखकर किया गया है, ऐसा सम्प्रदाय प्राप्त है।"

---

१. श्री दुर्गासप्तशती के विभिन्न पाठक्रम और प्रयोगक्रम के लिये हमारे द्वारा शीघ्र ही प्रकाश्य ग्रन्थ "श्रीदुर्गासप्तशती-साधना" देखें।

इसी दृष्टि से प्रातः, मध्याह्न एवं सायंकाल में किए जाने वाले पाठों की पुष्टि हो सकती है, अन्यथा सृष्टि, स्थिति और संहारक्रम का कोई उपयोग ही नहीं हो पाएगा।

नामावली-पाठ का पुरश्चरण—

जिस प्रकार मन्त्र का एक निश्चित संख्या के रूप में—मन्त्राक्षर संख्या अथवा सपादलक्ष-सवा लाख संख्या में—जप करने से एक पुरश्चरण होता है तथा ऐसा पुरश्चरण कर लेने पर वह मन्त्र सिद्ध माना जाता है, उसी प्रकार नामावली-पाठ का भी पुरश्चरण ११००० का माना जाता है। ऐसे पाठों की साङ्गता के लिए १. हवन, २. तर्पण, ३. मार्जन और ४. ब्राह्मण-भोजन भी करना चाहिए। यह सब दशांश के रूप में जप के समान ही होता है। सूर्य और चन्द्र-ग्रहण के समय इसका पाठ करना भी पुरश्चरण के तुल्य ही है।

स्तोत्र-जप के पुरश्चरण का एक अन्य प्रकार यह भी है कि—स्तोत्र में जितने मूल-पाठरूप पद्य हों उतने ही पाठ प्रतिदिन करें और उतने ही दिनों तक करें। इस दृष्टि से हम ३ प्रकार की व्यवस्था इस नामावली स्तोत्र पाठ के पुरश्चरण-हेतु कर सकते हैं—(१) इसके १४ पद्यों के आधार पर प्रतिदिन १४ पाठ १४ दिन तक। (२) इसकी २८ अर्धालियों के आधार पर प्रतिदिन २८ पाठ २८ दिन तक। (३) इसके १०८ नामों के आधार पर १०८ पाठ १०८ दिन तक। इस सम्वन्ध में गुरुपरम्परा ज्ञातव्य है।

भगवान् वटुकभैरव की पूजा में दैनिक नैवेद्य

रविवारे पायसान्नं सोमवारे च मोदकम्।
भौमे गुडाज्यगोधूमा बुधे च दधिशर्करा॥
गोधूमपूरिका युक्ता घृतमध्ये सुपाचिता।
गुरौ चणकखण्डाज्यं केवलं चणकं भृगौ॥
शनौ माषान्ततैलं च इति वारवलिः क्रमात्॥

अर्थात् साधना के दिनों में श्रीवटुकभैरव की विशेष पूजा करके विशेष नैवेद्य अर्पित करना चाहिये। यह नैवेद्य प्रत्येक वार के लिये पृथक्-पृथक् होता है। यथा रविवार को पायसान्न-दूध की खीर अथवा खीरान्न, सोमवार को—मोदक (गेहूं के आटे का बना हुआ अथवा खोए का)। मंगवार को—गुड़ एवं घी से वनी हुई गेहूं की लपसी। बुधवार को—गेहूं की शुद्ध घी में तली हुई पूरी और दही-वूरा। गुरुवार को—चने के आटे (वेसन) के लड्डू। शुक्रवार को—भुने हुए चने। अथवा कच्चे गलाये हुए चने। शनिवार को माष (उड़द) के वड़े तैल में तले हुए। इनके अतिरिक्त श्रीभैरव को जलेवी, इमरती, सेव, भजिये, तले हुए पापड़ का भी नैवेद्य लगाया जाता है। तन्त्रों में अन्यत्र विभिन्न कर्मों की सिद्धि के लिये भिन्न-भिन्न वस्तु के नैवेद्य का भी विधान है।

'नामावली' के नामों पर कुछ विचार

बटुकभैरव के इन १०८ नामों में १४ नाम दो वर्णों वाले हैं। यथा—१. विराट्, २. सिद्ध, ३. कवि, ४. काल, ५. धूर्त, ६. शूर, ७. शुद्ध, ८. मुण्डी, ९. स्तम्भी, १०. बाल, ११. दुर्ग, १२. कामी, १३. वशी और १४. वैद्य।

३२ नाम तीन वर्णों वाले हैं। यथा—१. भैरव, २. भूतात्मा, ३. क्षेत्रज्ञ, ४. क्षेत्रद, ५. क्षत्रिय, ६. मांसाशी, ७. रक्तप, ८. पानप, ९. सिद्धिद, १०. कङ्काल, ११. त्रिनेत्र, १२. कङ्काली, १३. अभीरु, १४. भूतप, १५. धनद, १६. धनवान्, १७. त्रिशिखी, १८. बटुक, १९. भिक्षुक, २०. हरिण, २१. प्रशान्त, २२. शान्तिद, २३. निधीश, २४. भूधर, २५. भूपति, २६. जृम्भण, २७. मोहन, २८. मारण, २९. क्षोभण, ३०. दैत्यहा, ३१. बलिभुग् तथा ३२. अनन्त।

२९ नाम चार वर्णों वाले हैं। यथा—१. भूतनाथ, २. क्षेत्रपाल, ३. खर्पराशी, ४. स्मरान्तक, ५. बहुनेत्र, ६. शूलपाणि, ७. खड्गपाणि, ८. नागहार, ९. नागपाश, १०. व्योमकेश, ११. कपालभृत्, १२. कमनीय, १३. कलानिधि, १४. त्रिलोचन, १५. ज्वलन्नेत्र, १६. त्रिलोकप, १७. डिम्भशान्त, १८. बहुवेष, १९. भूताध्यक्ष, २०. पशुपति, २१. दिगम्बर, २२. अष्टमूर्ति, २३. ज्ञानचक्षु, २४. तपोमय, २५. अष्टाधार, २६. षडाधार, २७. सर्पयुक्त, २८. शिखीसख तथा २९. प्रभविष्णु।

१७ नाम पांच वर्णों वाले हैं। यथा—१. भूतभावन, २. श्मशानवासी, ३. सिद्धिसेवित, ४. कालशमन, ५. धूम्रलोचन, ६. भैरवीनाथ, ७. योगिनीपति, ८. अधनहारी, ९, प्रतिभानवान्, १०. कपालमाली, ११. परिचारक, १२. पाण्डुलोचन, १३. भूधराधीश, १४. भूधरात्मज, १५. कङ्कालधारी, १६. मुण्डभूषित और १७. बलिभुङ्नाथ।

९ नाम छः वर्णोंवाले हैं। यथा—१. कलाकाष्ठातनु, २. पिङ्गललोचन, ३. त्रिनेत्रतनय, ४. शान्तजनप्रिय, ५. सर्वापत्तारण, ६. कलानिधिकान्त, ७. कामिनीवशकृत्, ८. जगद्रक्षाकर तथा ९. सर्वसिद्धिप्रद।

१ नाम सात वर्णवाला है। यथा—१. अबालपराक्रम।

६ नाम आठ वर्णवाले हैं। यथा—१. खट्वाङ्गवरधारक, २. शङ्करप्रियबान्धव, ३. आन्त्रयज्ञोपवीतवान्, ४. शुद्धनीलाञ्जनप्रख्य, ५. दुष्टभूतनिषेवित तथा ६. मायामन्त्रौषधीमय।

इस प्रकार १-६-९-१४.१७ और ३२=१०८ नामों में त्र्यक्षर वाले नाम अधिक हैं एवं सप्ताक्षर वाला एक ही है। इनकी अपनी स्वतन्त्र विशेषता है।

इन नामों के रूप, कर्म, स्वरूप और क्रियाकारित्व तथा वैज्ञानिकता के बारे में में भी प्रायः बहुत कुछ लिखा गया है। उनमें और भी बहुत विस्तार हो सकता है। जैसे ८

नाम नेत्र सम्बन्धी हैं और ५ नाम भूत-पञ्चमहाभूत से सम्बद्ध हैं। दुष्ट भूत प्रेतों से निषेवित एक स्वतन्त्र नाम है। इन नामों में सभी देवों के स्वरूप, कर्मविशेष तथा सर्वव्यापकत्व का प्रातिनिध्य प्राप्त होता है और इस तरह श्रीभैरव पूर्ण ब्रह्मरूप हैं यह स्वयं सिद्ध है।

संक्षिप्त नाम-मन्त्रार्चन

सहस्रनाम, त्रिशतनाम, खड्गमाला, शतनाम आदि से यदि व्यस्ततावश पूजा न हो सके तो उसके लिये पूर्वाचार्यों ने इन्हीं नामावलियों में से कतिपय विशिष्ट नामों का संग्रह करके संक्षिप्त नाममन्त्रार्चन का भी विधान बतलाया है। भैरव के दस नामों का पाठ हमने सहस्रनाम-स्तोत्र के अन्त में पृ० १२८ पर दिया है। यहां उन्हीं के साथ १२ नाम और संयुक्त करके 'द्वाविंशति-नामावली' का पाठ दिया जा रहा है। इन नाममन्त्रों से पाठ के पश्चात् पुष्पाक्षतादि से पूजन करने से पूजा की सफलता प्राप्त होती है। यथा—

१. बटुकनाथाय नमः, २. सारभूताय नमः, ३. त्रैलोक्यनाथनाथाय नमः, ४. नाथनाथाय नमः, ५. बटुकाय नमः ६. कालिकानाथाय नमः ७. कामदाय नमः ८. लोकरक्षकाय नमः ९. भूतनाथाय नमः १०. गणश्रेष्ठाय नमः ११. वीरवन्द्याय नमः १२. दयानिधये नमः १३. कपालिने नमः १४. कुण्डलिने नमः १५. भीमाय नमः १६. भैरवाय नमः १७. भीमविक्रमाय नमः १८. व्यालयज्ञोपवीतिने नमः १९. कवचिने नमः २०. शूलिने नमः २१. शूराय नमः २२. शिवप्रियाय नमः।

भैरव-सहस्रनाम :: महत्त्व, अपेक्षा और प्रयोग

इष्टदेव की आराधना में 'सहस्रनाम' का एक विशेष स्थान है। इस कारण प्रायः सभी देवताओं के पृथक्-पृथक् सहस्रनाम उपलब्ध हैं। प्रत्येक देवता के दो स्वरूप होते हैं—सगुण और निर्गुण। सगुण स्वरूप में उनकी लीला, रूप, गुण और प्रभाव का समावेश होता है तथा निर्गुण स्वरूप में वे परब्रह्म-परमात्मा, निरञ्जन निराकार हैं। सहस्रनामात्मक स्तोत्र में इन दोनों प्रकारों के स्वरूप दर्शन होते हैं। ब्रह्मस्वरूप में प्रकृति-पुरुष, देवी-देवता, ऋषि-मुनि आदि सबका समावेश होता है। अतएव सहस्रनाम में उन सबका इष्ट-देवता के रूप में उल्लेख किया जाता है। इष्टदेवता सर्वमय हैं, सर्वस्वरूप हैं क्योंकि वे पर-ब्रह्म परमात्मा हैं।

तन्त्रों और पुराणों में सहस्रनाम द्वारा स्तुति करने की पावन-परम्परा अत्यन्त प्राचीनकाल से चली आ रही है। इनके एक पाठ से नाम मन्त्रों की दसमाला का जप सम्पन्न हो जाता है। भगवान् के गुणों और लीला-चरित्रों को लेकर उपदिष्ट इन सहस्र-नामों के पाठ से नाम-जप, लीला-चिन्तन और ध्यान—सब एकसाथ सध जाते हैं। इनके पठन और श्रवण दोनों से ही लोक-लाभ और परलोक-निर्वाह-दोनों सिद्ध होते हैं। भोग और मोक्ष भी करतलामलकवत् सुलभ हो जाते हैं।

सहस्रनाम के माध्यम से नामोच्चारण के साथ ही साधक को अपने आराध्य के

एक विशेष स्वरूप, गुण, प्रभाव एवं लीला का स्मरण होता है। इष्टदेव की उपासना-हेतु निर्दिष्ट गीता, सहस्रनाम, स्तव, कवच और हृदयरूप पञ्चाङ्ग में सहस्रनाम का स्थान द्वितीय है। महाभारत में युधिष्ठिर द्वारा भीष्म से पूछे गये—'किमेकं दैवतं लोके' इत्यादि पांचों प्रश्नों का एक उत्तर—'स्तुवन्नामसहस्रेण' इत्यादि प्राप्त हुआ था। अतः सहस्रनाम-स्तोत्र का महत्त्व सर्वाधिक है।

ये सहस्रनाम तन्त्र शास्त्रों में अनेक रूपों में प्राप्त होते हैं। कहीं प्रथमान्त नाम हैं तो कहीं चतुर्थ्यन्त। नमः पद से युक्त और सम्पुटित भी स्तोत्र हैं तथा कालभेद, स्वरूप-भेद आदि की दृष्टि से इनमें परिवर्तन-परिवर्धन होता है। ग्रन्थभेद से भी इनके स्वरूपों में परिवर्तन दिखाई देता है। 'महाकाल-संहिता' में तो सहस्रनाम के साथ 'संजीवन-गद्य' का पाठ जुड़ा है। वहां कहा गया है कि इसके सम्पुटित अथवा पल्लवित पाठ से सहस्रनाम का पाठ पूर्ण फलप्रद होता है।* इस दृष्टि से श्रीभैरव-सहस्रनाम के दो पाठ यहां सङ्कलित हैं। वैसे इनके ६ प्रकार के सहस्रनाम प्राप्त होते हैं। 'बृहज्ज्योतिषार्णव' के धर्मस्कन्धगत उपासना-स्तवक के अन्तर्गत 'श्रीबटुक-भैरवोपासना' अध्याय में—१. श्रीबटुक भैरव-वकारादि सहस्रनाम' (भैरवयामलोक्त), २. श्रीबटुक भैरवसहस्रनाम स्तोत्र (भैरव-तन्त्रप्रोक्त), ३. रुद्रयामलोक्त तथा ४. एक अन्य इस प्रकार चार सहस्रनाम मुद्रित हैं। उन्हीं में से प्रस्तुत ग्रन्थ में दो सहस्रनाम दिये हैं। इनमें एक सर्वसामान्य नामसङ्कलनात्मक है तो दूसरा प्रत्येक नाम के साथ नमः अथवा नमोनमः पद से युक्त है।

श्रीभैरव-साधना-सम्बन्धी साहित्य

वैसे तो जितने भी आगम और तन्त्रों के प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं, उन सभी में न्यूनाधिकरूप से श्रीभैरव की साधना का समावेश हुआ ही है, अतः वे सभी ग्रन्थ इस साधना के लिये परम उपयोगी हैं। तथापि कतिपय अन्य महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय साधकों की सुविधा के लिए यहां दे रहे हैं। विश्वास है साधकगण इनसे विशेष लाभ प्राप्त कर सकेंगे।

(१) आपदुद्धारण-पद्धति—न्यूकंट्** २/१२२, रुद्रयामल से गृहीत। (२) आपदुद्धारक-बटुकभैरव—वहीं। (३) आपदुद्धारकल्प—वहीं, विश्वसार तन्त्रान्तर्गत, (४) आवेशविजय भैरव-मन्त्र—वहीं, २/१६२, (५) उच्छिष्टभैरवादि बलिप्रकार—वहीं, २/२८६, (६) उन्मत्त भैरवतन्त्र, (७) उन्मत्तभैरव पञ्चाङ्ग—परमेश्वर-तन्त्रान्तर्गत वाराणसी-पटल में गुरुरुद्र संवाद रूप। (ए० वं ६४९२) (८) कङ्कालभैरव[१] तन्त्र, (९) कालाग्नि भैरवतन्त्र, (१०) चतुःषष्टि-भैरव-पूजा म० द०[३] १४६६३, (११) ज्ञानभैरव तन्त्र—सं० वि० दि० क०[४] २४७६३, २५७३९, (१२) डामरभैरव-

---

* गद्यं सहस्रनाम्नस्तु सञ्जीवनतया स्थितम्।
पठन् यत् सफलं कुर्यात् प्राक्तनं सकलं प्रिये। (२५२ पटल)

** यहां १ से ९ तक के संक्षिप्त नाम विभिन्न प्राच्यग्रन्थागारों से सम्बद्ध हैं।

तन्त्र, (१३) बटुकदीपदान प्रकार, (१४) बटुकनाथ पद्धति—वं० पू० ५१३८५, (१५) बटुक-पञ्चाङ्ग प्रयोगपद्धति—डे० का०[१] ३६०, (१६) बटुकार्चनचन्द्रिका—श्रीनिवासकृत कैट्० कैट्० १/३६६ । (१७) बटुकार्चन-संग्रह—श्रीवालम्भट्ट कृत ८ अर्चनों में पूर्ण। (१८) भैरवतन्त्र—कैट्० कैट्० १/४१७, ३/१७। (१९) भैरवदीपदानविधि—रा० ला०[७] ४०४४, (२०) भैरवनाथ तन्त्र—आक्सफोर्ड १०८ ख के अनुसार, (२१) भैरव-पद्धति—वी० कै०[८] १२४८, (२२) भैरवपुरश्चरणविधि—रा० पू०[१] ५००५. (२३) भैरवपूजापद्धति—रामचन्द्रविरचित (साङ्गोपाङ्गपूजा) ए० वं० ६४६७, (२४) भैरव संहिता, (२५) भैरवसपर्याविधि—मथुरानाथ कृत, कैट्० कैट्० १/४१७ तथा सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय—वाराणसी के "सरस्वती भवन पुस्तकालय" में भैरवनामावली से सम्बद्ध १५ पाण्डुलिपियाँ भी द्रष्टव्य हैं ।*

इनके अतिरिक्त भी भारत के प्राचीन भण्डारों में नामावली की अनेक पाण्डु-लिपियाँ है, जो इसकी व्यापकता की सूचक हैं। इनका स्वाध्याय करके लाभ उठाएँ।

स्वर्णाकर्षण-भैरव-साधना सम्बन्धी साहित्य

स्वर्णाकर्षण-भैरव की साधना से सम्बद्ध वर्णन 'रुद्रयामल' में प्रमुखरूप से हुआ है। इसके अतिरिक्त (१) स्वर्णतन्त्र—१००० श्लोकमय (एन अल्फाबेटिकल लिस्ट आफ मेनु० इन (क्र० १०६६३) ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट वड़ौदा (गु०) (क्र० ६३२४) तथा—डिस्क्रिप्टिव कैटलाग आफ सं० मैन्० एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल।

(२) स्वर्णतन्त्र—(२५४१६) संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी,
(३) स्वर्णाकर्षण कवच (२५९४७) „
(४) स्वर्णाकर्षण भैरव तन्त्र (२४०११) „
(५) स्वर्णाकर्षण भैरव दीप प्रकाश (३५८७५) „ (रुद्रयामलान्तर्गत)
(६) स्वर्णाकर्षण भैरव पटल (२४१६७) „
(७) स्वर्णाकर्षण भैरव मन्त्रविधि (२४३२५) „

(८) स्वर्णाकर्षण भैरवी (१००३-८४) डेकन कालेज, पूना में पाण्डुलिपियों के रूप में उपलब्ध है। इसी प्रकार पूरा पञ्चांग भी प्राप्त होता है। विशेप साधना के इच्छुक इन ग्रन्थों का अवलोकन करके लाभ उठायें।

श्रीशरभेश्वरसाधना से सम्बद्ध साहित्य

हमारे प्राच्यग्रन्थ भाण्डागारों में श्रीशरभेश्वर की उपासना से सम्बद्ध कुछ

---

* (पाण्डुलिपि सं० २२०४५, २३२९५, २३३२६, २३६७८, २५९१६, २५९१७, २५९०४, २६०५०, २६०५१, २६०५३, २६०६०, २६०६७, २६०७० २६०७३, २६०७५।

साहित्य यत्र-तत्र प्राप्त होता है। उसका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

१—आकाश-भैरव-कल्प—'नेपाल दरबार ग्रन्थागार' में ३।२४६ ग संख्या पर उक्त कल्पग्रन्थ की पाण्डुलिपि प्राप्त है। इसमें ७८ अध्याय तथा उनमें २००० श्लोक हैं। वर्ण्य विषयों में क्रमश:—उत्साहप्रक्रम, यजनविधि, उत्साहाभिषेक, मन्त्रयन्त्रप्रक्रम, चित्रमालामन्त्र, वश्याकर्षण-प्रयोग, मोहन-द्रावण-प्रयोग, भोगप्रदविधि, आशुताक्ष्यं-विधि, आशुगरुड़-प्रयोग, शिष्याचारविधि, शरभसालुवपक्षिराजकल्प, शरभेशाष्टक-स्तोत्रादि, रक्षाभिषेकविधि, बलिविधान, मात्राप्रयोगविधि, आचारविधि, मातृकावर्णन, भद्रकालीविधि, औषधविधि, शूलिनीदुर्गाकल्प, शूलिनीविधि, वीरभद्रकल्प, जगद्क्षोभण-मालामन्त्र, त्रपाविधि, भैरवविधि, दिक्पालविधि, व्याधिकल्पन, मृत्युमन्मथ-चामुण्डा-मोहिनी-द्राविणी-विधियां, शब्दार्कर्षिणी-भाषासरस्वती-महासरस्वती तथा महालक्ष्मी-प्रयोग, माया-पुलिन्दिनी-महाशान्ति-संक्षोभिणी-धूमावती की विधियां, धूमावतीप्रयोग, चित्रविद्याविधि, देशिकस्तोत्र, दु:स्वप्ननाशन-मन्त्र, पाशविमोचन, ओषधमन्त्र, कालमन्त्र, षण्मुख-त्वरिता-वडवानल-भैरव-ब्राह्मी-प्रभृति सप्त मातृका एवं नारसिंही के मन्त्र, शरभहृदय आदि विषय इसमें संकलित हैं। यही ग्रन्थ मद्रास के प्राच्यग्रन्थागार में भी है। महाशैवमन्त्रों के ग्रन्थों में उल्लिखित कुछ खण्डित अंश भी इसके यत्र-तत्र प्राप्त होते हैं।

२—आकाश-भैरवतन्त्र—१३६ पटलों में निवद्ध यह तन्त्र श्री शिव-पार्वती के संवाद के रूप में ३९०० पद्यों से युक्त है। इसके पूर्वार्ध में—साम्राज्यलक्ष्मीपूजन, राज-प्रासाद रचना, दुर्गवर्णन, गज-वाजि-शस्त्रास्त्रसंग्रहणादि विषय हैं। उत्तरार्ध के ७२ अध्यायों में अनेक देवताओं की पूजाओं का विधान है। इसमें 'शरभसहस्रनाम, शरभ-कवच और शरभपूजापद्धति' भी संगृहीत हैं।

३—आकाश-भैरव मन्त्र तथा ४—आकाश-भैरव-पूजाविधि—ये दो ग्रन्थ भी अन्यत्र भण्डारों में मिलते हैं (न्यू कैटलागस कैटालगगरम्-द्रष्टव्य)। बड़ौदा (गुजरात) के सयाजीराय गायकवाड़ प्राच्य ग्रन्थागार में ९१३ सं० पर विद्यमान है। ५—पक्षिराज-विधान में आकाश भैरव से सम्बद्ध ४८० पद्य हैं। वहीं। ६—शरभ-कल्प ४५० पद्यात्मक (९८२० सं० डी०) तथा ७—शरभकवच (क) (ख) (ग) प्रतियों में क्रमश: ११०, १०५ तथा १४० पद्यों में संकलित है।

'वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय' के 'सरस्वती भवन-पुस्तकालय' में ८—शरभतन्त्र ४५० पद्यात्मक सं० २४८११ पर उपलब्ध है। वहीं ९—शरभपञ्चाङ्ग, २४२ पद्यात्मक सं० २५४४४ पर, १०—शरभ-पद्धति २६५२७ सं० पर, ११—शरभ-मन्त्रविधि—सं० २३३०९ पर, १२—शरभविधान—वर्तुलातन्त्रान्तर्गत १०० श्लोका-त्मक सं० २६१७२ पर, १३—शरभशालुवपक्षिराजकल्प—४६० पद्यात्मक (अपूर्ण) सं० २४६३७ पर, १४—शरभार्चापारिजात श्रीरामकृष्णविरचित 'तन्त्रसारोद्धार' से संकलित २१७४ पद्यात्मक, सं० २५८२७ पर, १५—शरभेश्वर-मन्त्र-प्रकाश १९० पद्या-त्मक (अपूर्ण), सं० २५४७० पर, तथा १६—शरभेश्वर-मन्त्रविधान ५० पद्यात्मक (अपूर्ण), सं० २६५५७ पर प्राप्त हैं।

एक १७—शरभार्चन-चन्द्रिका—सदाशिव विरचित ग्रन्थ स्वतन्त्र रूप से भी प्रसिद्ध है। साधक-गण इन ग्रन्थों से भी लाभ उठाएँ।

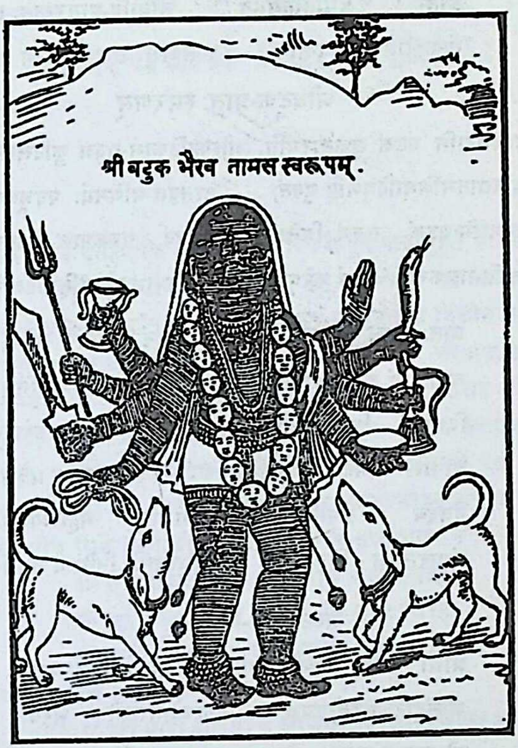

प्रयोग-खण्ड

श्रीगुरु-स्मरणम्

आनन्दमानन्दकरं प्रसन्नं ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपम् ।
योगीन्द्रमीड्यं भवरोगवैद्यं श्रीमद्गुरुं नित्यमहं नमामि ॥
प्रातः प्रभृतिसायान्तं सायादि-प्रातरन्ततः ।
यत्करोमि जगन्नाथ ! तदस्तु तव पूजनम् ॥

श्रीबटुक-प्रातः स्मरणम्

प्रातः स्मरामि बटुकं सुकुमारमूर्ति, श्रीस्फाटिकाभ-सदृशं कुटिलालकाढ्यम् ।
ववत्रं दधानमणिमादिगुणैर्हि युक्तं, हस्तद्वयं मणिमयैः पदभूषणैश्च ॥१॥
प्रातर्नमामि बटुकं तरुणं त्रिनेत्रं, कामास्पदं वरकपाल-त्रिशूल-दण्डान् ।
भक्तार्तिनाशकरणे दधतं करेषु, तं कौस्तुभाभरण-भूषितदिव्यदेहम् ॥२॥

प्रातः काले सदाऽहं भगणपतिधरं भालदेशे महेशं,
नागं पाशं कपालं डमरुमथ सृणिं खड्गघण्टाभयानि ।
दिग्वस्त्रं पिङ्गकेशं त्रिनयनसहितं मुण्डमालं करेषु,
यो धत्ते भीमदंष्ट्रं मम विजयकरं भैरवं तं नमामि ॥३॥
देवदेव कृपासिन्धो ! सर्वनाशिन् महाऽव्यय ।
संसारासक्त - चित्तं मां मोक्षमार्गे निवेशय ॥४॥

अष्टभैरव-मङ्गलम्

आद्यो भैरवभीषणो निगदितः श्रीकालराजः क्रमाद्,
श्रीसंहारकभैरवोऽप्यथ रुरुश्चोन्मत्तको भैरवः ।
क्रोधश्चण्ड-कपाल - भैरववरः श्रीभूतनाथस्ततो,
ह्यष्टौ भैरवमूर्तयः प्रतिदिनं दद्युः सदा मङ्गलम् ॥

—(श्रीशङ्कराचार्य)

———

श्री बटुक-भैरव-नित्यकर्म-प्रयोग विधिः

—x—

साधक को चाहिए कि वह प्रातः सूर्योदय से पूर्व ब्राह्ममुहूर्त में उठकर शौच-स्नानादि से निवृत्त हो, पवित्र वस्त्र धारण कर पूजास्थान पर आये। वहाँ सर्व-प्रथम जहाँ आसन विछाना हो उस स्थान पर शुद्ध जल से त्रिकोण बनाकर 'ॐ आधारशक्ति-कमलासनाय नमः' इस मन्त्र से उस स्थान को प्रणाम कर कुश अथवा कम्बल आदि का शुद्ध आसन फैलाकर पूर्व अथवा; उत्तर की ओर मुँह रखकर बैठे; साथ में शुद्ध जल, पाठ की पुस्तक एवं सामने इष्टदेव का चित्र अथवा मूर्ति ऊँचे पाट पर रखकर पूजन सामग्री को पास में रख ले। प्रातः-सन्ध्या करके ललाट पर अपनी रुचि के अनुसार भस्म, चन्दन अथवा रोली लगा ले। फिर नीचे लिखे मन्त्र बोलते हुए तीन बार तत्त्वाचमन करे —

ॐ ऐं आत्मतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।
ॐ ह्रीं विद्यातत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।
ॐ क्लीं शिवतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।

तदनन्तर नीचे लिखा मन्त्र बोलकर हाथ धो डाले—

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सर्वतत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।

---

१. 'श्रीभैरव-नामावली' का पाठ एक शास्त्रसम्मत साधना के रूप से १-नित्यकर्म, २-नैमित्तिक-कर्म और ३-काम्य-कर्म के रूप में किया जाता है। जो साधक नित्यकर्म में इसका प्रयोग करना चाहते हैं, वे इसका पाठ अन्य दैनिक साधना के क्रम के साथ जोड़ कर करते रहें। जो साधक पर्व-विशेष पर इसका प्रयोग करना चाहें वे तथा जो किसी विशिष्ट काम्य-कर्म की सफलता के लिए प्रयोग करना चाहें वे नीचे लिखे क्रम से पाठ करें। इसमें विशेष सूचना यह है कि यदि प्रातःकालीन नित्यकृत्य में 'गुरुस्मरण' से मातृकान्यासान्त कर्म कर लिया हो, तो वह दूसरी बार आवश्यक नहीं है।

तत्पश्चात् प्राणायाम करके गुरु एवं गणेश का स्मरण करे।

१. गुरुस्मरणम् —

आनन्दमानन्दकरं प्रसन्नं, ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपम्।
योगीन्द्रमीड्यं भवरोगवैद्यं, श्रीमद्गुरुं नित्यमहं नमामि ॥

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार द्वारा गुरुपूजन करे।

ॐ गुं गुरुभ्यो नमः लं पृथिव्यात्मकं गन्धं परिकल्पयामि।
,, ,, हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि।
,, ,, यं वाय्वात्मकं धूपमाघ्रापयामि।
,, ,, रं वह्न्यात्मकं दीपं दर्शयामि।
,, ,, वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि।
,, ,, सं सर्वात्मकं ताम्बूलं कल्पयामि।

इसके पश्चात् नीचे लिखे पद्यों से गणपति का स्मरण करे।

२. गणपतिस्मरणम् —

गजाननं भूतगणाधिसेवितं, कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम्।
उमासुतं शोकविनाशकारकं, नमामि विघ्नेश्वर-पादपङ्कजम् ॥
वक्रतुण्ड महाकाय, सूर्यकोटि-समप्रभ ॥
निर्विघ्नं कुरु मे देव ! सर्वकार्येषु सर्वदा ॥

इसके पश्चात् अपने अभीष्ट कर्म के अनुसार संकल्प करे।

३. संकल्पः —

दाँये हाथ में अथवा आचमनी में जल, गन्ध, अक्षत, पुष्प आदि लेकर नीचे लिखे अनुसार संकल्प बोले—

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य श्रीब्रह्मणो द्वितीये परार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्तान्तर्गते……पुण्यक्षेत्रे ……शालिवाहनकृते शके ……विक्रमसंवत्सरे ……मासे ……पक्षे …… तिथौ ……वासरे ……नक्षत्रे ……राशिस्थिते श्रीसूर्ये ……राशिस्थिते चन्द्रे ……राशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एव ग्रह-गुणविशेषेण विशिष्टायां पुण्यतिथौ ……गोत्रोत्पन्नः ……प्रवरः ……शर्मा/वर्मा/गुप्तो/दासोऽहं मम ……कार्यसिद्धये श्रीभैरवप्रसादसिद्ध्यर्थे च श्रीमदापदुद्धारकभैरवाष्टोत्तरशतनामावलीपाठमहं करिष्ये।

इतना कहकर जल छोड़ दे। तथा फिर जल लेकर बोले—

तदङ्गतया भूशुद्धि-भूतशुद्धि-प्राण-प्रतिष्ठा-अन्तर्मातृकान्यास-बहिर्मातृका-न्यासपूर्वकं मन्त्रन्यास-जप-नामावलीन्यास-शापोद्धारोत्कीलनादिकं च करिष्ये।

और जल छोड़ दे।

४. अथ भू-शुद्धिः[1] —

(१) आसनशुद्धिः

हाथ में जल लेकर—पृथ्वीतिमन्त्रस्य मेरुपृष्ठ ऋषिः सुतलं छन्दः कूर्मो देवता आसने विनियोगः। यह बोलकर जल छोड़ दे। फ़िर पृथ्वी की प्रार्थना करे —

पृथ्वि ! त्वया धृता लोका, देवि ! त्वं विष्णुना धृता।
त्वं च धारय मां देवि ! पवित्रं कुरु चासनम्॥

इतना बोलकर 'ॐ भूर्भुवः स्वः' कहते हुए आसन पर जल के छींटे दे। फिर नीचे लिखे मन्त्रों से आसन को प्रणाम करे—

ॐ अनन्तासनाय नमः। ॐ कूर्मासनाय नमः।
ॐ विमलासनाय नमः। ॐपद्मासनाय नमः।
ॐ योगासनाय नमः। ॐ आधारशक्त्यै नमः।
ॐ दुष्टविद्रावणनृसिंहासनाय नमः।

मध्ये (बीच में) ॐ परमसुखासनाय नमः।

(२) शिखाबन्धनम्

चिद्रूपिणि महामाये, दिव्यतेजःसमन्विते।
तिष्ठ देवि शिखाबन्धे, तेजोवृद्धि कुरुष्व मे॥

यह मन्त्र बोलकर शिखा बांध ले।

---

१. 'परशुरामकारिका' में कहा गया है कि 'भूरसीति च भूशुद्धिः कार्या कार्यस्य सिद्धये।' अर्थात् 'भूरसि' इत्यादि मन्त्र के द्वारा कार्यसिद्धि के लिए भूशुद्धि करनी चाहिये। इसके अनुसार भूशुद्धि से तात्पर्य है भूमि की शुद्धि। किन्तु विभिन्न ग्रन्थों में १. आसन-शुद्धि, २. शिखा-बन्धन, ३. दिग्बन्धन, ४. भूतापसारण, ५. भूशुद्धि और ६. भैरव नमस्कार तक की क्रियाओं को भूशुद्धि में आवर्जित किया है तथा कहीं-कहीं चित्त की शुद्धि को ही भूशुद्धि माना है। अतः हम यहां दोनों क्रम दे रहे हैं। साधक गुरु की आज्ञानुसार कर्म करे।

(३) दिग्बन्धनम्

ॐ सर्वभूत-निवारकाय शार्ङ्गाय सशराय सुदर्शनाय अस्त्रराजाय हुं फट् स्वाहा। यह मन्त्र बोलते हुए अस्त्रमुद्रा[1] से अर्थात् अपने चारों ओर चुटकी बजाकर अन्त में तर्जनी और मध्यमा अंगुली से बांये हाथ की हथेली से ३ ताली बजाये तथा अपने चारों ओर अग्नि का परकोटा बना है ऐसी भावना करे। तत्पश्चात् गुं गुरुभ्यो नमः (दाहिनी ओर), गं गणपतये नमः (बाईं ओर) तथा श्रीबटुक-भैरवाय नमः (अपने सामने) बोलते हुए प्रणाम करे।

(४) भूतापसारणम्

अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्।
सर्वेषामविरोधेन जपकर्म समारभे॥

ये मन्त्र बोलकर बाएँ पैर की एड़ी से तीन बार भूमि पर ताड़न करे।[2]

(५) भूशुद्धिः

हाथ में जल लेकर नीचे लिखे अनुसार विनियोग करे तथा पृथ्वी का स्पर्श करते हुए 'भूरसि' आदि मंन्त्र बोले—(विनियोग के लिए आचमनी में जल लें)

भूरसीत्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः प्रस्तारपङ्क्तिश्छन्दो मातृका देवता भूशुद्धौ विनियोगः। (यह बोलकर जल छोड़ दे)

ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री।
पृथिवीं यच्छ पृथिवीन्दृं ह पृथिवीम्मा हिंसीः॥

(क) भूशुद्धि का अन्य प्रकार

गायत्री मन्त्र से प्राणायाम करके 'हूं' बीज से कुण्डलिनी का उत्थापन कर हृदय में स्थित दीपकलिका के समान आकारवाले जीव को 'ॐ हंसः' इस मन्त्र द्वारा ब्रह्म में लीन कर अपनी बाईं कुक्षि में स्थित पापपुरुष का ध्यान करे। तदनन्तर—

---

१. "लक्ष्यमभितश्छोटिकां दत्त्वा दक्षमध्यमा-तर्जनीभ्यामधिवामकरतलं त्रिस्ताडनेऽस्त्रम्।" सामने लक्ष्य रखते हुए चुटकी बजाकर दाहिने हाथ की तर्जनी और मध्यमा से बाईं हथेली में तीन ताली देने को 'अस्त्रमुद्रा' कहते हैं।

२. कहीं-कहीं इस प्रक्रिया को 'बाह्य-भूतशुद्धि' भी कहा है।

'यं' इस बीज का १६ बार उच्चारण कर बाँयें नथुने से श्वास खींचे और 'रं' बीज का ६४ वार उच्चारण कर कुम्भक करे तथा पुनः 'यं' बीज का ३२ वार उच्चारण करते हुए रेचन करे। इस प्रकार क्रमश; पाप पुरुष के शोषण, दाह और उसके भस्म-विसर्जन की भावना करे।'

फिर ब्रह्मरन्ध्र चन्द्रमण्डल में विराजमान अमृतवर्षिणी देवी अमृतेश्वरी का ध्यान कर उसकी कृपा से अमृत की वर्षा हो रही हो ऐसा मन में चिन्तन करे।

(६) भैरवनमस्कारः

योभूतानामित्यस्य कौण्डिन्य ऋषिरनुष्टुप्छन्दो नारायणो देवता भैरवनमस्कारे विनियोगः।

यह बोलकर विनियोग के लिए जल छोड़े। फिर—

यो भूतानामधिपतिर्यस्मिँल्लोका अधिश्रिताः।
यऽईशे महतो महाँस्तेन गृह्णामि त्वामहम्मयि गृह्णामि त्वामहम्॥
ॐ तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय, कल्पान्तदहनोपम।
भैरवाय नमस्तुभ्य नुज्ञां दातुमर्हसि॥

'श्री भैरवाय नमः' इतना बोलकर श्रीबटुकभैरव को प्रणाम करे तथा उनसे जपादि कर्म की आज्ञा प्राप्त करे।

५. भूतशुद्धि[1]:

श्वास की वायु को पिंगला (वाम नासिका) से अन्दर खींच कर—

'मूलभृङ्गाटकाज्जीवशिवं परमशिवे योजयामि स्वाहा'

इस मन्त्र से मूलाधार में स्थित जीवात्मा को सुषुम्णा मार्ग से ब्रह्मरन्ध्र तक लाकर परमशिव के साथ एकीभूत करने की भावना करके इडा (दक्षिण नासिका से) श्वास को छोड़े।

'यं' वीज को इडा से पूरक करते हुए १६ वार तथा कुम्भक में ६४ वार

---

१. भूतशुद्धि एक यौगिक क्रिया है, इसमें श्वास-प्रश्वास द्वारा प्राणायाम करते हुए विभिन्न वीजों का जप और भावना होती है।

देवो भूत्वा यजेद्देवं, नादेवो देवमर्चयेत्।
देवार्चायोग्यताप्राप्त्यै, भूतशुद्धि समाचरेत्॥ (रामतापिनी)

बोलकर 'सङ्कोचशरीरं शोषय शोषय स्वाहा' बोले और फिर पिङ्गला मार्ग से ३२ बार बोलते हुए रेचन करे।

'रं' बीज को पिङ्गला से पूरक करते हुए १६ बार बोलकर कुम्भक में ६४ बार बोले तथा—'सङ्कोचशरीरं दह दह पच पच स्वाहा' कहकर इडा से ३२ बार बोलते हुए रेचन करे।

'ठं' इस बीजमन्त्र द्वारा उपर्युक्त पद्धति से पूरक और कुम्भक करके उसमें 'चन्द्रमण्डलं विभावय स्वाहा' की भावना करे और इडा से पूर्ववत् रेचन करे।

'वं' बीज से पूर्ववत् इडा मार्ग से पूरक और सुषुम्णा में कुम्भक कर 'परमशिवामृतं वर्षय वर्षय स्वाहा' बोले तथा उस दिव्यशरीर पर सहस्रार में स्थित चन्द्रमण्डल से झरते हुए अमृत द्वारा सिक्त होने की भावना कर पिङ्गला से पूर्ववत् रेचन करे।

'लं' बीज से पूर्ववत् इडा मार्ग से पूरक और कुम्भक कर—'शाम्भवशरीरमुत्पादयोत्पादय स्वाहा' कहे तथा जले हुए सङ्कोच शरीर की भस्म से पुनः दिव्यशरीर की उत्पत्ति की भावना कर ३२ बार उक्त बीज का जप कर पिङ्गला से रेचन करे। (यहां 'ह्लीं' बीज के जप से कारण शरीर के उत्पादन का भी विधान है।)

'हंसः सोहं' बीज से पूर्ववत् इडा मार्ग से पूरक और सुषुम्णा में कुम्भक कर 'ॐ अवतर-२ शिवपदाद् जीव सुषम्णापथेन प्रविश मूलशृङ्गाटकमुल्लसोल्लस ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल हंसः सोहं स्वाहा'—बोले तथा परमशिव के साथ एकीभूत जीव को पुनः सुषुम्णा मार्ग से मूलाधार में स्थापित करने की भावना करे।

देव बन कर देवता की पूजा करे' देवत्व के बिना देवपूजा न करे। देवपूजा की योग्यताप्राप्ति के लिये भूतशुद्धि करनी चाहिये।

सर्वासु बाह्यपूजासु अन्तःपूजा विधीयते।
अन्तःपूजा महेशानि ! बाह्यकोटिफलं लभेत्॥
भूतशुद्धि-लिपिन्यासौ विना यस्तु प्रपूजयेत्।
विपरीतफलं दद्यादभक्त्या पूजनं यथा॥

सभी बाह्यपूजाओं में अन्तःपूजा की जाती है। हे पार्वती ! अन्तःपूजा बाह्यपूजा से करोड़ गुना अधिक फल देती है। भूतशुद्धि और मातृकान्यास के बिना जो पूजा करता है, उसे भक्ति के बिना की गई पूजा के समान विपरीत फल प्राप्त होता है।

६. आत्म-प्राण-प्रतिष्ठा—

हृदय पर हाथ रख कर—

ॐ आं ह्रीं क्रों मम प्राणा इह प्राणाः।

ॐ आं ह्रीं क्रों मम जीव इह स्थितः।

ॐ आं ह्रीं क्रों मम सर्वेन्द्रियाणि।

ॐ आं ह्रीं क्रों मम वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

ॐ असुनीते पुनरस्मासु चक्षुः पुनः प्राणमिह नो धेहि भोगम्।
ज्योक्पश्येम सूर्यमुच्चरन्तमनुमते मृडयानः स्वस्ति ॥

फिर अपने गर्भाधानादि[1] पन्द्रह संस्कारों की सिद्धि के लिये १५ बार ॐकार का अथवा इष्टमन्त्र का जप करे।

विनियोग इस प्रकार है—

मम गर्भाधानादि-पञ्चदशसंस्कारसिद्ध्यर्थं पञ्चदश प्रणवावृत्तीः करिष्ये।

तदनन्तर प्रणवजप करके प्राणशक्ति का ध्यान करे—

रक्ताम्भोधिस्थपोतोल्लसदरुणसरोजाधिरूढा कराब्जैः,
पाशं कोदण्डमिक्षूद्भवमथ गुणमप्यङ्कुशं पञ्चबाणान्।
बिभ्राणासृक्कपालं त्रिनयनलसिता पीनवक्षोरुहाढ्या,
देवी बालार्कवर्णा भवतु सुखकरी प्राणशक्तिः परा नः ॥

इस प्रकार ध्यान करके 'सर्वं सुप्रतिष्ठितमस्तु' कहे।

....

१. कहीं १५ तथा कहीं १६ संस्कारों का निर्देश है। संस्कारों के नाम इस प्रकार हैं —

१. गर्भाधान, २. पुंसवन, ३. सीमन्तोन्नयन, ४. जातकर्म, ५. नामकरण, ६. निष्क्रमण, ७. अन्नप्राशन, ८. चूडाकरण, ९. उपनयन १०-१३-वेद-व्रत-चतुष्टय, १४-गोदान, १५-व्रतविसर्ग तथा १६-विवाह।

इन संस्कारों की क्रमशः ओङ्कार जप के साथ-साथ 'ॐ गर्भाधानं सम्पादयामि' इत्यादि पद्धति से भावना की जाती है। 'ब्रह्मकर्म-समुच्चय' आदि ग्रन्थों में 'प्राणप्रतिष्ठा-प्रयोग' विस्तार से दिया गया है। विशेष जानने की इच्छावाले कृपया वहीं देखें।

अन्तर्मातृका-न्यासः

तत्रादौ प्राणायामः

'अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः' इन सोलह स्वरों का उच्चारण करते हुए बाईं नासिका से श्वास खींचे तथा 'कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं' इन २५ वर्णों से कुम्भक करे तथा 'यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं' इन २५ वर्णों का उच्चारण करते हुए दाईं नासिका से श्वास छोड़े।[1]

विनियोगः

अस्यान्तर्मातृकामन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः गायत्री छन्दः मातृकासरस्वती देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः क्षं कीलकं अन्तर्मातृकान्यासे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यासः

अं ब्रह्मऋषये नमः आं— शिरसि। इं गायत्रीच्छन्दसे नमः ईं—मुखे।
उं मातृकासरस्वतीदेवतायै नमः ऊं—हृदये। एं हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः ऐं—गुह्ये।
ओं स्वरशक्तिभ्यो नमः औं—पादयोः। अं क्षं कीलकाय नमः अः—नाभौ।
ॐ विनियोगाय नमः—सर्वाङ्गे।

अथ करन्यासः षडङ्गन्यासश्च

	(पहली वार)	(दूसरी बार)
ॐ अं कं खं गं घं ङं आं—अंगुष्ठाभ्यां नमः।		हृदयाय नमः
ॐ इं चं छं जं झं ञं ईं—तर्जनीभ्यां नमः।		शिरसे स्वाहा
ॐ उं टं ठं डं ढं णं ऊं—मध्यमाभ्यां नमः।		शिखायै वषट्
ॐ एं तं थं दं धं नं ऐं—अनामिकाभ्यां नमः।		कवचाय हुम्
ॐ ओं पं फं बं भं मं औं—कनिष्ठिकाभ्यां नमः।		नेत्रत्रयाय वौषट्

---

१. प्राणायाम के सम्बन्ध में शास्त्रवचन इस प्रकार हैं—

इडया पूरयेत् प्राणान् स्वरैर्वर्णैश्च कुम्भयेत्।
रेचयेद् यादिकैर्वर्णैस्ततः पिङ्गलया पुनः ॥१॥
तथैव पूरणं वायोः कुम्भकं रेचनं पुनः।
इडया स्याततो द्वाभ्यां पूरणादि त्रय पुनः ॥२॥
प्राणायामत्रयं त्वेवं कृत्वा न्यासान् समारभेत्।

ॐ अं यं रं लं वं शं षं सं हं अः—

करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। अस्त्राय फट्।

अथ ध्यानम्:

पञ्चाशल्लिपिभिर्विभज्य मुखदोर्हृत्पद्मवक्षःस्थलां,
भास्वन्मौलिनिबद्धचन्द्रशकलामापीनतुङ्गस्तनीम्।
मुद्रामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्याञ्च हस्ताम्बुजै-
र्बिभ्राणां विशदप्रभां त्रिनयनां वाग्देवतामाश्रये॥

इसके पश्चात् नीचे लिखे क्रम से शरीर के छः चक्रों में मातृकान्यास करे

ॐ अं आं.....................अः—षोडशपत्रके कण्ठे।
ॐ कं खं.....................ठं—द्वादशपत्रके हृदये।
ॐ डं ढं.....................फं—दशपत्रके नाभौ।
ॐ बं भं.....................लं—षट्पत्रके लिङ्गे।
ॐ वं शं षं सं...............—चतुष्पत्रके गुदे।
ॐ हं क्षं.....................—द्विपत्रके भ्रुवोर्मध्ये।

अथ ध्यानम्

आधारे लिङ्गनाभौ प्रकटितहृदये तालुमूले ललाटे,
द्वे पत्रे षोडशारे द्विदशदशदले द्वादशार्धे चतुष्के।
वासान्ते बालमध्ये डफकठसहिते कण्ठदेशे स्वराणां,
हं क्षं तत्त्वार्थयुक्तं सकलदलगतं वर्णरूपं नमामि॥
वर्णाङ्गीं वर्णमालाङ्गीं भारतीं भाललोचनाम्।
रत्नसिंहासनां देवीं वन्देऽहं सिद्धमातृकाम्॥

॥ इति अन्तर्मातृकान्यासः ॥[1]

---

१. अन्तर्मातृकान्यास की प्रक्रिया में सम-विषम पाठ भिन्न-भिन्न ग्रन्थों में मिलते हैं। मातृकावर्णों की यह न्यास-विधि शरीर के अन्तःस्थ चक्रों को चैतन्य करने में बड़ी सहायक होती है। गुरुपरम्परा से इस न्यास-विद्या को सीखना चाहिये। साथ ही वर्णों के साथ अनुस्वार, विसर्ग आदि संयोजन का भी रहस्य है जिसे भूमिका में देखें। वहाँ विस्तार से स्पष्ट किया है।

बहिर्मातृकान्यासः

विनियोगः —

अस्य श्रीबहिर्मातृकान्यासस्य ब्रह्मा ऋषिः गायत्री-छन्दः श्रीमातृकासरस्वती देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः बिन्दुः कीलकं बहिर्मातृकान्यासे विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यासः कर-हृदयादिषडङ्गन्यासाश्च

(अन्तर्मातृकान्यास में बताए अनुसार करे ।)[1]

अथ ध्यानम्—

पञ्चाशद्वर्णभेदैर्विहितवदनदोःपादयुक्कुक्षिवक्षो—
देशां भास्वत्कपर्दां कलितशशिकलामिन्दुकुन्दावदाताम् ।
अक्षस्रक्कुम्भचिन्तालिखितवरकरां त्रीक्षणामब्जसंस्था—
मच्छाकल्पामतुच्छस्तनजघनभरां भारतीं तां नमामः ॥

फिर सम्पूर्णमातृका से नीचे बताये अनुसार शरीर के अंगों का तत्त्वमुद्रा[2] से स्पर्श करते हुए न्यास करे—

ॐ	अं	नमः	(शिरसि)
ॐ	आं	नमः	(मुखवृत्ते)
ॐ	इं	नमः	(दक्षनेत्रे)
ॐ	ईं	नमः	(वामनेत्रे)
ॐ	उं	नमः	(दक्षकर्णे)
ॐ	ऊं	नमः	(वामकर्णे)
ॐ	ऋं	नमः	(दक्षनासापुटे)
ॐ	ॠं	नमः	(वामनासापुटे)
ॐ	ऌं	नमः	(दक्षकपोले)
ॐ	ॡं	नमः	(वामकपोले)
ॐ	एं	नमः	(ऊर्ध्वोष्ठे)

१. कुछ ग्रन्थों में मूल न्यासों के पश्चात् ही ध्यान के लिये लिखा है ।

२. अनामिका और अँगूठे के पर्वों को मिलाने से यह मुद्रा बनती है ।

ॐ	ऐं	नमः	(अधरोष्ठे)
ॐ	ओं	नमः	(ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ)
ॐ	औं	नमः	(अधोदन्तपंक्तौ)
ॐ	अं	नमः	(जिह्वाग्रे)
ॐ	अः	नमः	(कण्ठे)
ॐ	कं	नमः	(दक्षबाहुमूले)
ॐ	खं	नमः	(दक्षकूर्परे)
ॐ	गं	नमः	(दक्षमणिवन्धे)
ॐ	घं	नमः	(दक्षकराङ्गुलिमूले)
ॐ	ङं	नमः	(दक्षकराङ्गुल्यग्र)
ॐ	चं	नमः	(वामबाहुमूले)
ॐ	छं	नमः	(वामकूर्परे)
ॐ	जं	नमः	(वाममणिवन्धे)
ॐ	झं	नमः	(वामकराङ्गुलिमूले)
ॐ	ञं	नमः	(वामकराङ्गुल्यग्रे)
ॐ	टं	नमः	(दक्षोरुमूले)
ॐ	ठं	नमः	(दक्षजानुनि)
ॐ	डं	नमः	(दक्षगुल्फे)
ॐ	ढं	नमः	(दक्षपादांगुलिमूले)
ॐ	णं	नमः	(दक्षपादाङ्गुल्यग्रे)
ॐ	तं	नमः	(वामोरुमूले)
ॐ	थं	नमः	(वामजानुनि)
ॐ	दं	नमः	(वामगुल्फे)
ॐ	धं	नमः	(वामपादाङ्गुलिमूले)
ॐ	नं	नमः	(वामपादाङ्गुल्यग्रे)
ॐ	पं	नमः	(दक्षपार्श्वे)
ॐ	फं	नमः	(वामपार्श्वे)
ॐ	बं	नमः	(पृष्ठे)
ॐ	भं	नमः	(नाभौ)
ॐ	मं	नमः	(उदरे)
ॐ	यं	नमः	(हृदये)
ॐ	रं	नमः	(दक्षस्कन्धे)

ॐ	लं	नमः	(गलपृष्ठे)
ॐ	वं	नमः	(वामस्कन्धे)
ॐ	शं	नमः	(हृदयादिदक्षकराङ्गुल्यन्तम्)
ॐ	षं	नमः	(हृदयादिवामकराङ्गुल्यन्तम्)
ॐ	सं	नमः	(हृदयादिदक्षपादाङ्गुल्यन्तम्)
ॐ	हं	नमः	(हृदयादिवामपादाङ्गुल्यन्तम्)
ॐ	ळं	नमः	(कट्यादिब्रह्मरन्ध्रान्तम्)
ॐ	क्षं	नमः	(कट्यादिब्रह्मरन्ध्रान्तम्)[1]

॥ इति बहिर्मातृकान्यासः ॥

---

१. उपर्युक्त न्यासों की व्यवस्था के लिए निम्नलिखित शास्त्रवचन प्राप्त होते हैं—

आद्यो मौलिरथापरो मुखमिई नेत्रे च कर्णावुरू,
नासावंशपुटे ऋॠ तदनुजौ वर्णौ कपोलद्वये ।
दन्ताश्चोर्ध्वमधस्तथोष्ठयुगलं सन्ध्यक्षराणि क्रमा-
ज्जिह्वामूलमुदग्रबिन्दुरपरो ग्रीवा विसर्गीश्वरः ॥
कादिर्दक्षिणतो भुजस्तदपरो वर्गश्च वामो भुज-
ष्टादिस्तादिरनुक्रमेण चरणौ कुक्षिद्वयं वै पफौ ॥
अंसः पृष्ठभवोऽथ नाभिरुदरं बादित्रयं धातवो,
याद्याः सप्त समीरणश्च सपराः क्षान्तास्तु क्रोडे न्यसेत् ॥२॥
त्वगसृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्राणि धातवः ।
प्राणशक्त्यात्मपरमात्मोचिता व्यापकास्त्वमी ॥३॥
यादयो हृदयेंऽसेऽथ ककुद्यंसे हृदादि च ।
करपादयुगे न्यस्येदुदराननयोस्तथा ॥४॥
लिपिवर्णाः शरीरे तु देशिको यतमानसः ।

प्रत्येक जपादि कार्य में इन दोनों मातृकाओं का न्यास अत्यावश्यक माना गया है ।

कुछ ग्रन्थों में पहले वहिर्मातृकान्यास और बाद में अन्तमातृकान्यास बतलाया है किन्तु गुरुपरम्परा से यही पाठ उत्तम प्रतीत होने से इस रूप में दिया गया है । मातृका-मन्त्रों के सामने कोष्ठकों में जो स्थान लिखे है वे संस्कृत होते हुए भी सरल हैं अतः इनका हिन्दी में अनुवाद नहीं दिया है ।

श्रीबटुकभैरवपूजा-विधानम्[1]

सर्वप्रथम श्रीभैरवनाथ का ध्यान करे —

भक्त्या नमामि वटुकं तरुणं त्रिनेत्रं,
कामप्रदान् वरकपालत्रिशूलदण्डान् ।
भक्तार्तिनाशकरणे दधतं करेषु,
तं कौस्तुभाभरणभूषितदिव्यदेहम् ।।१।।

ऐसा ध्यान करके पूजा की आज्ञा माँगे —

तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम ।
भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातुमर्हसि ।।२।।

फिर पूजा की आज्ञा मिल गई है ऐसी भावना करके नीचे लिखे अनुसार क्रमशः पूजा करे —

ॐ अं इं उं ऋं लृं एं ओं अं	ॐ भैरवाय नमः आवाहनं समर्पयामि ।
ॐ आं ईं ऊं ॠं ॡं ऐं औं अः	ॐ भूतनाथाय नमः आसनं समर्पयामि ।
ॐ कं खं गं घं ङं	ॐ भूतात्मने नमः पाद्यं समर्पयामि ।
ॐ चं छं जं झं ञं	ॐ भूतभावनाय नमः अर्घ्यं समर्पयामि ।
ॐ टं ठं डं ढं णं	ॐ क्षेत्रज्ञाय नमः आचमनीयं समर्पयामि।
ॐ तं थं दं धं नं	ॐ क्षेत्रपालाय नमः स्नानं समर्पयामि ।
ॐ पं फं बं भं मं	ॐ क्षेत्रदाय नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि ।
ॐ यं रं लं वं	ॐ क्षत्रियाय नमः वस्त्रं समर्पयामि ।

---

१. पूर्वोक्त न्यास-प्रक्रिया समाप्त कर श्री भैरव के चित्र, मूर्ति अथवा यन्त्र-राज की संक्षिप्त पूजा करे ! यदि चित्रादि कुछ भी पास न हो तो मानसिक रूप से भगवत्स्वरूप का चिन्तन करते हुए पूजा करे। पूजन सामग्री में भी जो वस्तु उपस्थित हो, उसे समर्पित करे तथा अन्य के लिये अक्षत, पुष्प अथवा जल छोड़ दे किन्तु विधि का लोप न करे।

ॐ शं षं सं हं — ॐ विराजे नमः गन्धं समर्पयामि ।

ॐ लं क्षं — ॐ श्मशानवासिने नमः अक्षतान् समर्पयामि ।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः — ॐ मांसाशिने नमः पुष्पाणि समर्पयामि ।

ॐ ह्रीं ऐं क्लीं — ॐ खर्पराशिने नमः धूपं समर्पयामि ।

ॐ श्रां श्रीं श्रूं श्रः — ॐ स्मरान्तकाय नमः दीपं समर्पयामि ।

ॐ नमो भगवते त्रिशूलधराय श्वानवाहनाय मम कार्यं कुरु कुरु ॐ ह्रीं नमः
ॐ रक्तपाय नमः नैवेद्यं समर्पयामि ।

ॐकालाग्निरुद्राय श्मशानवासिने मम शत्रु मुखं स्तम्भय स्तम्भय क्षोभय क्षोभय
मारय मारय ॐ पानपाय नमः आचमनीयं समर्पयामि ।

ॐ रुरुभैरवायं मम जयं कुरु कुरु मम शत्रुं नाशय नाशय ॐ ह्रीं नमः
ॐ सिद्धाय नमः पूगीफलं समर्पयामि ।

ॐ रक्तलोचनाय कालभैरवाय मम रक्षां कुरु कुरु ॐ ह्रीं नमः
ॐ सिद्धिदाय नमः दक्षिणां समर्पयामि ।

ॐस्वर्णाकर्षणभैरवाय मम शत्रुग्रहाद्युच्चाटनाय मम कार्यं कुरु कुरु ॐ ह्रीं नमः
ॐ सिद्धसेविताय नमः प्रदक्षिणां समर्पयामि ।

ॐ कं कङ्कालाय नमः नमस्कारं समर्पयामि ।
ॐ कं कालशमनाय नमः आरार्तिक्यं समर्पयामि ।
ॐ कं कालमथनाय नमः जलारार्तिक्यं समर्पयामि ।
ॐ मं महाकालाय नमः सर्वाङ्गनमस्कारान् समर्पयामि ।

—×—

श्रीवटुकनाथध्यानम् —

फणिवर-फणिनाथो देव-देवाधिनाथः,
क्षितिपतिवरनाथो वीर-वेतालनाथः ।
निधिपति-निधिनाथो योगिनी-योगनाथो,
जयति वटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम् ॥

———

श्रीबटुकभैरवमन्त्रजपविधिः

अथ विनियोगः —

ॐ अस्य श्रीआपदुद्धारण-वटुकभैरवमन्त्रस्य बृहदारण्यक ऋषिः त्रिष्टुप् छन्दः श्रीबटुकभैरवो देवता ह्रीं बीजं स्वाहा शक्तिः भैरवः कीलकं मम धर्मार्थकाममोक्षार्थं श्रीवटुकभैरवप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः।

इतना बोलकर आचमनी से जल छोड़ दे।

अथ ऋष्यादिन्यासः

(न्यास में तत्त्वमुद्रा द्वारा अङ्गों का स्पर्श[1] किया जाता है।)

बृहदारण्यकऋषये नमः	शिरसि	(मस्तक का स्पर्श करे)
त्रिष्टुप्छन्दसे नमः	मुखे	(मुख का स्पर्श करे)
श्रीवटुकभैरवदेवतायै नमः	हृदये	(हृदय का स्पर्श करे)
ह्रीं बीजाय नमः	गुह्ये	(कटिभाग का स्पर्श करे)
स्वाहा शक्तये नमः	पादयोः	(दोनों पैरों का स्पर्श करे)
भैरवकीलकाय नमः	नाभौ	(नाभि का का स्पर्श करे)
विनियोगाय नमः	सर्वाङ्गे	(सिर से पैर तक के स्पर्श करे)

अथ करन्यासः

ॐ ह्रां वां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।

(दोनों तर्जनियों के अग्रभाग से अंगूठों के मूल के अग्रभाग तक का स्पर्श करे)

ॐ ह्रीं वीं तर्जनीभ्यां नमः।

(दोनों अंगूठों के अग्रभाग से तर्जनियों के मूल के अग्रभाग तक का स्पर्श करे)

---

१. अंगूठे और अनामिका के अग्रभाग को मिलाने से तत्त्वमुद्रा बनती है। ऐसी दोनों हाथों की तत्त्वमुद्राओं से भी न्यास का विधान है।

ॐ हूं वूं मध्यमाभ्यां नमः । (पूर्ववत् मध्यमा का स्पर्श करे)
ॐ हैं वैं अनामिकाभ्यां नमः । (पूर्ववत् अनामिका का स्पर्श करे)
ॐ ह्रौं वौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः । (पूर्ववत् कनिष्ठिका का स्पर्श करे)
ॐ ह्रः वः करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः । (दोनों हाथों की अंगुलियों से हथेली के पिछले भाग का स्पर्श करे ।)

अथ षडङ्गन्यासः —

ॐ ह्रां वां हृदयाय नमः । (हृदय का स्पर्श करे)
ॐ ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा । (मस्तक का स्पर्श करे)
ॐ हूं वूं शिखायै वषट् । (शिखा का स्पर्श करे)
ॐ हैं वैं कवचाय हूं । (भुजाओं का स्पर्श करे)
ॐ ह्रौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट् । (दोनों नेत्र एवं उनके मध्यभाग का स्पर्श करे ।)
ॐ ह्रः वः अस्त्राय फट् । (तर्जनी और मध्यमा से ताली बजाये ।)

अथ मन्त्रन्यासः (करन्यास एवं षडङ्गन्यास)

ॐ ह्रां ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । (हृदयाय नमः)
ॐ ह्रीं बटुकाय तर्जनीभ्यां नमः । (शिरसे स्वाहा)
ॐ हूं आपदुद्धारणाय मध्यमाभ्यां नमः । (शिखायै वषट्)
ॐ हैं कुरु कुरु अनामिकाभ्यां नमः । (कवचाय हुम्)
ॐ ह्रौं बटुकाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः । (नेत्रत्रयाय वौषट्)
ॐ ह्रः ह्रीं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । (अस्त्राय फट्)

अथ ध्यानम्

करकलितकपालः कुण्डली दण्डपाणि—
स्तरुणतिमिरवर्णो व्यालयज्ञोपवीती ।
ऋतुसमयसपर्याविघ्न—विच्छित्तिहेतु—
र्जयति बटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम् ।।

इस प्रकार न्यास एवं ध्यान करके पहले बताये अनुसार मानसोपचारपूजा करे तथा माला लेकर उसकी गन्धाक्षत से पूजा करके प्रार्थना करे—

अथ मालाप्रार्थना—

महामाले महामाये ! सर्वशक्तिस्वरूपिणि ।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ।।

अविघ्नं कुरु माले ! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे।
जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये।।

जप-मन्त्र:

ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं।

(यथाशक्ति जप करके अन्त में प्रार्थना करे—)

त्वं माले ! सर्वदेवानां प्रीतिदा शुभदा भव।
शिवं कुरुष्व मे भद्रे ! यशोवीर्यञ्च देहि मे।।

इसके पश्चात् जप श्रीभैरवार्पण करे—

अनेन श्रीवटुकभैरवमन्त्रजपाख्येन कर्मणा श्रीबटुकभैरवः प्रीयताम्[1] ।।

।। इति जपविधिः ।।

—×—

नामावली-पाठविधिः

अथ विनियोगः —

ॐ अस्य श्रीमदापदुद्धारक-बटुकभैरवस्तोत्रमन्त्रस्य बृहदारण्यक ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः श्रीमदापदुद्धारक-बटुकभैरवो देवता वं बीजं ह्रीं बटुकाय इति शक्तिः प्रणवः कीलकं ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगः ।

अथ ऋष्यादिन्यासः

बृहदारण्यकऋषये नमः	(शिरसि)
अनुष्टुप्छन्दसे नमः	(मुखे)
वं बीजाय नमः	(गुह्ये)
ह्रीं बटुकायेति शक्तये नमः	(पादयोः)
ॐ कीलकाय नमः	(नाभौ)
विनियोगाय नमः	(सर्वाङ्गे)

१. यहां जप की सर्वसामान्य प्रचलित विधि का निर्देश किया गया है। जप के लिए माला के विधान भी अनेक प्रकार के आगमों में निर्दिष्ट हैं। जैसे-जैसे कर्म हों; उनके अनुसार ही भिन्न-भिन्न वस्तुओं की मालाएँ बनाई जाती हैं। इसी प्रकार वटुकभैरव का जो मन्त्र ऊपर दिया गया है, उसके अतिरिक्त भी बहुत प्रकार के मन्त्र हैं, जिनका प्रयोग कर्मानुसार किया जाता है। यह सब गुरु-परम्परा से ज्ञातव्य है।

अथ करन्यासः

ॐ ह्रां वां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।
ॐ ह्रीं वीं तर्जनीभ्यां नमः ।
ॐ ह्रूं वूं मध्यमाभ्यां नमः ।
ॐ ह्रैं वैं अनामिकाभ्यां नमः ।
ॐ ह्रौं वौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।
ॐ ह्रः वः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

अथ हृदयादिषडङ्गन्यासः

ॐ ह्रां वां हृदयाय नमः ।
ॐ ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा ।
ॐ ह्रूं वूं शिखायै वषट् ।
ॐ ह्रैं वैं कवचाय हुम् ।
ॐ ह्रौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ॐ ह्रः वः अस्त्राय फट् ।

अथ नामावलीन्यासः[1]

ॐ	ह्रीं	भैरव-भूतनाथाभ्यां नमः	(शिरसि)
,,	,,	भूतात्म-भूतभावनाभ्यां नमः	(मुखवृत्ते)
,,	,,	क्षेत्रज्ञ-क्षेत्रपालाभ्यां नमः	(दक्षनेत्रे)
,,	,,	क्षेत्रद-क्षत्रिय-विराड्भ्यो नमः	(वामनेत्रे)
,,	,,	श्मशानवासि-मांसाशिभ्यां नमः	(दक्षकर्णे)
,,	,,	खर्पराशि-स्मरान्तकाभ्यां नमः	(वामकर्णे)
,,	,,	रक्तप-पानपाभ्यां नमः	(दक्षनासापुटे)
,,	,,	सिद्ध-सिद्धिद-सिद्धसेवितेभ्यो नमः	(वामनासापुटे)
,,	,,	कङ्काल-कालशमनाभ्यां नमः	(दक्षकपोले)
,,	,,	कलाकाष्ठातनु-कविभ्यां नमः	(वामकपोले)
,,	,,	त्रिनेत्र-बहुनेत्रपिङ्गललोचनेभ्यो नमः	(ऊर्ध्वोष्ठे)
,,	,,	शूलपाणि-खड्गपाणिभ्यां नमः	(अधरोष्ठे)
,,	,,	कङ्कालि-धूम्रलोचनाभ्यां नमः	(ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ)
,,	,,	अभीरु-भैरवीनाथाभ्यां नमः	(अधोदन्तपंक्तौ)

---

१. कुछ ग्रन्थों में यहाँ "देहन्यास" का सूचन करते हुए भैरव के अन्य नामों द्वारा न्यास की सूचना दी गई है किन्तु गुरुपरम्परा के अनुसार इस प्रकार नामावली का संयोजन प्रतीत होने से यह व्यवस्था की गई है ।

,,	,,	भूतप-योगिनीपतिभ्यां नमः	(जिह्वाग्रे)
,,	,,	धनदाधनहारिभ्यां नमः	(कण्ठे)
,,	,,	धनवत्प्रतिभानवद्भ्यां नमः	(दक्षवाहुमूले)
,,	,,	नागहार-नागपाशाभ्यां नमः	(दक्षकूर्परे)
,,	,,	व्योमकेश-कपालभृद्भ्यां नमः	(दक्षमणिवन्धे)
,,	,,	काल-कपालमालिभ्यां नमः	(दक्षकराङ्गुलिमूले)
,,	,,	कमनीय-कलानिधिभ्यां नमः	(दक्षकराङ्गुल्यग्रे)
,,	,,	त्रिलोचन-ज्वलन्नेत्राभ्यां नमः	(वामवाहुमूले)
,,	,,	त्रिशिख-त्रिलोकपाभ्यां नमः	(वामकूर्परे)
,,	,,	त्रिनेत्रतनय-डिम्भशान्त—शान्तजनप्रियेभ्यो नमः	(वाममणिवन्धे)
ॐ	ह्रीं	वटुक-वहुवेष-खट्वाङ्गवर-धारकेभ्यो नमः	(वामकराङ्गुलिमूले)
,,	,,	भूताध्यक्ष-पशुपतिभ्यां नमः	(वामकराङ्गुल्यग्रे)
,,	,,	भिक्षुक-परिचारकाभ्यां नमः	(दक्षोरुमूले)
,,	,,	धूर्त-दिगम्वराभ्यां नमः	(दक्षजानुनि)
,,	,,	शूर-हरिणाभ्यां नमः	(दक्षगुल्फे)
,,	,,	पाण्डुलोचन-प्रशान्ताभ्यां नमः	(दक्षपादाङ्गुलिमूले)
,,	,,	शान्तिद-शुद्धाभ्यां नमः	(दक्षपादाङ्गुल्यग्रे)
,,	,,	शङ्करप्रियवान्धवाष्टमूर्तिभ्यां नमः	(वामोरुमूले)
,,	,,	निधीश-ज्ञानचक्षुस्तपोमयेभ्यो नमः	(वामजानुनि)
,,	,,	अष्टाधार-षडाधाराभ्यां नमः	(वामगुल्फे)
,,	,,	सर्पयुक्तशिखीसखाभ्यां नमः	(वामपादाङ्गुलिमूले)
,,	,,	भूधर-भूधराधीशाभ्यां नमः	(वामपादाङ्गुल्यग्रे)
,,	,,	भूपति -भूधरात्मजाभ्यां नमः	(दक्षपार्श्वे)
,,	,,	कङ्कालधारि-मुण्डिभ्यां नमः	(वामपार्श्वे)
,,	,,	आन्त्रयज्ञोपवीतवज्जृम्भणाभ्यां नमः	(पृष्ठे)
,,	,,	मोहन-स्तम्भिभ्यां नमः	(नाभौ)
,,	,,	मारण-क्षोभणाभ्यां नमः	(उदरे)
,,	,,	शुद्धनीलाञ्जनप्रख्य-दैत्यहभ्यां नमः	(हृदये)
,,	,,	मुण्डभूषित-वलिभुग्भ्यां नमः	(गलपृष्ठे)
,,	,,	अवालपराक्रम-सर्वापत्तारणाभ्यां नमः	(वामस्कन्धे)
,,	,,	दुर्ग-दुष्टभूत-निषेविताभ्यां नमः	(हृदयादिदक्षकराङ्गुल्यन्तम्)

„ „ काम-कलानिधिकान्ताभ्यां नमः (हृदयादिवामकराङ्गुल्यन्तम्)
„ „ कामिनीवशकृद्-वशिभ्यां नमः (हृदयादिदक्षपादाङ्गुल्यन्तम्)
„ „ जगद्रक्षाकरानन्ताभ्यां नमः (हृदयादिवामपादाङ्गुल्यन्तम्)
„ „ मायामन्त्रौषधीमय-सर्वसिद्धिप्रदाभ्यां नमः
(कट्यादिपादाङ्गुल्यन्तम्)
„ „ वैद्य-प्रभविष्णुभ्यां नमः (कट्यादिब्रह्मरन्ध्रान्तम्)

अथ ध्यानम्

करकलितकपालः कुण्डली दण्डपाणि—
स्तरुणतिमिरनीलो व्यालयज्ञोपवीती।
क्रतुसमय—सपर्याविघ्नविच्छित्ति हेतु—
र्जयति बटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम् ॥

यहाँ कार्य एवं पाठ के समय की अपेक्षा से सात्त्विक, राजस और तामस तथा बटुकभैरव के स्वरूप आदि को लक्ष्य में रखकर ध्यान भी किये जाते हैं। इस दृष्टि से कुछ पद्य इस प्रकार हैं—

१. सात्त्विकं ध्यानम्

वन्दे बालं स्फटिक-सदृशं कुण्डलोद्भासिताङ्गं,
दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः किङ्किणी-नूपुराढ्यैः।
दीप्ताकारं विशदवदनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं,
हस्ताग्राभ्यां बटुकसदृशं शूलदण्डोपधानम् ॥

२. राजसं ध्यानम्—

उद्यद्भास्करसन्निभं त्रिनयनं रक्तांगरागस्रजं,
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः।
नीलग्रीवमुदारभूषणयुतं शीतांशुखण्डोज्ज्वलं,
बन्धूकारुणवाससं भयहरं देवं सदा भावये ॥

३. तामसं ध्यानम्—

वन्दे नीलाद्रिकान्तं शशिशकलधरं मुण्डमालं महेशं,
दिग्वस्त्रं पिंगकेशं डमरुमथ सृणिं खड्गपाशाभयानि।
नागं घण्टां कपालं करसरसिरुहैर्बिभ्रतं भीमदंष्ट्रं,
दिव्याकल्पं त्रिनेत्रं मणिमयविलसत् किङ्किणीनूपुराढ्यम् ॥

SANSKRIT VIDYAPEETHA
M-4687

प्रकीर्णध्यानानि

वारं वारं भुवनजननी प्रोच्यते साधुवादः,
सत्यं सत्यं जगति सकले भैरवो देव एकः।
यां यां सिद्धि भुवनजठरे कामयेन्मानवो य-
स्तां तां सिद्धि वितरति सदा भैरवः सुप्रसन्नः।१॥

पाणिभ्यां परितः प्रपीड्य सुदृढं निश्चोत्य निश्चोत्य च,
ब्रह्माण्डं सकलं प्रचालितरसालोच्चैः फलाभं मुहुः।
पायं पायमपाययत् त्रिजगति ह्युन्मत्तवत्तं रसं—
नृत्यंस्ताण्डवमम्बरेण शिरसा पायान्महाभैरवः ॥२॥

बिभ्राणः शुभवर्णं द्विगुणनवभुजं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं,
ज्ञानं मुद्रेन्द्रशस्त्रं सविषममृतकं शंखभैषज्यचापम्।
शूलं खट्वांगबाणान् डमरुमसिगदावह्निमारोग्यमाल—
मिष्टाभीतिं च दोर्भिर्जयति खलु महाभैरवः सर्वसिद्ध्यै ॥३॥

क्वाकाशः क्व समीरणः क्व दहनः क्वापश्च विश्वम्भरः,
क्व ब्रह्मा क्व जनार्दनः क्व तरणिः क्वेन्दुश्च देवासुराः।
कल्पान्तेभदिशानटः प्रमुदितः श्रीसिद्धयोगीश्वरः,
क्रीडानाटकनायको विजयते देवो महाभैरवः ॥४॥

फुं फुं फुल्लारशब्दो वसति फणिपतिर्जायते यस्य कण्ठे,
डिं डिं डिन्नातिडिन्नं कलयति डमरुं यस्य पाणौ प्रकम्पम्।
तक् तक् तन्दातितन्दान् धिगिति धिगिति गीर्गीयते व्योमवाग्भिः,
कल्पान्ते ताण्डवीयः सकलभयहरो भैरवो नः स पायात् ॥५॥

—x—

अथ शापविमोचनम्

तान्त्रिक परम्परा में अनेक मन्त्र तथा स्तोत्र शप्त एवं कीलित हैं जिनका कारण देव एवं ऋषियों के विभिन्न आख्यानों से ज्ञात होता है। श्रीबटुक-भैरव-मन्त्र और स्तोत्र दोनों के वारे में 'शापोद्धार' के लिए 'मन्त्र' एवं एक 'अष्टपद्यात्मक-स्तोत्र' का निर्देश तन्त्रों में प्राप्त है, जो कि इस प्रकार है—

शाप-विमोचन-मन्त्र

ॐ ह्रीं बटुक ! शापं विमोचय विमोचय ह्रीं क्लीं।

उपर्युक्त मन्त्र का २१ वार जप करना चाहिए इससे मन्त्र की सिद्धि में सहायता मिलती है। तदनन्तर शापोद्धार-स्तव का भक्तिपूर्वक पाठ करें।

अथ बटुक-शापोद्धार-स्तवः

ॐ वृन्दारकप्रकरवन्दितपादपद्मं,
चञ्चत्प्रभापटलनिर्जितनीलपद्मम् ।
सर्वार्थसाधकमगाधदयासमुद्रं,
वन्दे विभुं बटुकनाथमनाथबन्धुम् ।।१।।

जिनके चरणकमल देवसमूह द्वारा वन्दित हैं और जिनके शरीर की कमनीय कान्ति ने नीलकमल की कान्ति को जीत लिया है, ऐसे सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण करने वाले अपार दया के समुद्र तथा अनाथों के बन्धु भगवान् बटुकनाथ को मैं प्रणाम करता हूँ ।।१।।

मुण्डमालाधरं शान्तं कुण्डलप्रभयान्वितम् ।
भुजङ्गमेखलं दिव्यं, बटुकाख्यं नमाम्यहम् ।।

मुण्डों की माला को धारण करनेवाले, कुण्डलों की कान्ति से देदीप्यमान, सर्प की मेखला से विभूषित ऐसे दिव्यस्वरूप श्रीवटुकनाथ को मैं प्रणाम करता हूं ।।२।।

चतुर्बाहुं कलामूर्ति, युगान्तदहनोपमम् ।
सर्वार्थसाधकं देवं भैरव प्रणमाम्यहम् ।।३।।

चार भुजाओं वाले, कलामूर्ति, प्रलयकालीन अग्नि के समान तेजस्वी तथा सर्वविध कामनाओं को पूर्ण करनेवाले श्रीभैरवदेव को मैं प्रणाम करता हूं ।।३।।

ज्वलदग्निप्रतीकाशं, खट्वाङ्गवरधारकम् ।
श्वगणैः सर्वतो व्याप्तं, भैरवं प्रणमाम्यहम् ।।४।।

जलती हुई अग्नि के समान, खट्वाङ्ग एवं वरमुद्रा को धारण करने वाले तथा अपने आस-पास श्वान-समूह से व्याप्त श्रीभैरवदेव को मैं प्रणाम करता हूं ।।४।।

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च, मरीच्याद्या महर्षयः ।
बटुकं प्रणमन्ते तं, सदा सम्पन्नमानसम् ।।५।।
पञ्चवक्त्रं कृपासिन्धुं, नानाभरणभूषितम् ।
धर्मार्थकाममोक्षाणां, दातारं प्रणमाम्यहम् ।।६।।

ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और मरीचि आदि महर्षि जिस सम्पन्न मनवाले अर्थात् उदारचित्त बटुकनाथ को सदा प्रणाम करते हैं, उस पञ्चमुख, कृपासिन्धु, अनेक आभरणों से विभूषित तथा धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष के दाता श्रीभैरव को मैं प्रणाम करता हूं ।।५—६।।

विद्यावन्तं दयावन्तं, शङ्करप्रियबान्धवम् ।
उत्पत्तिस्थितिसंहारं, भैरवं प्रणमाम्यहम् ।।७।।

विद्यावान्, दयालु, भगवान् शङ्कर के प्रियवन्धु तथा उत्पत्ति, स्थिति एवं संहाररूप श्रीभैरव को मैं प्रणाम करता हूँ ॥७॥

य इदं पठते नित्यं, बटुकस्तव-पूर्वकम् ।
सर्वाबाधातिनिर्मुक्तः स सर्वेप्सितभाग् भवेत् ॥८॥

जो इस स्तोत्र का बटुकस्तवपूर्वक[1] नित्य पाठ करता है वह समस्त बाधाओं से मुक्त होकर सम्पूर्ण इच्छित वस्तुओं को प्राप्त करता है ॥८॥

इति (शापोद्धार) बटुकस्तवः सम्पूर्णः ।

—×—

अथ बटुकभैरवोत्कीलन-मन्त्रः

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीबटुकभैरवोत्कीलनमन्त्रस्योग्रभैरवऋषिः अनुष्टुप्छन्दः श्रीभैरवो देवता वं बीजं ह्रीं शक्तिः क्लीं कीलकं मम सर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थे बटुकभैरवोत्कीलनमन्त्रजपे विनियोगः ।

(इस प्रकार बोलकर जल छोड़े ।)

१—ऋष्यादिन्यासः—
उग्रभैरव ऋषये नमः—शिरसि ।
अनुष्टुप्छन्दसे नमः—मुखे ।
श्रीभैरवदेवतायै नमः—हृदये ।
वं बीजाय नमः—गुह्ये ।
ह्रीं शक्तये नमः—पादयोः ।
क्लीं कीलकाय नमः—नाभौ ।
विनियोगाय नमः—सर्वाङ्गे ।

२—करन्यासः—
ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।
ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः ।
क्लीं मध्यमाभ्यां नमः ।
ऐं अनामिकाभ्यां नमः ।
ह्रः कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।
भ्रां करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

३—षडङ्गन्यासः—
बटुकाय हृदयाय नमः ।
उमापुत्राय शिरसे स्वाहा ।
एकादशरुद्राय ताराय शिखायै वषट् ।
वीरभद्रावताराय कवचाय हुम् ।
सूर्यकोटिप्रकाशाय नेत्रत्रयाय वौषट् ।
भैरवाय अस्त्राय फट् ।

४—अथाङ्गन्यासः—
रँ दक्षिणहस्ते । व्राँ वामहस्ते ।
ज्यँ दक्षिणकर्णे । रँ वामकर्णे ।
व्राँ दक्षिणनेत्रे । ज्यँ वामनेत्रे ।
रँ दक्षिणांसे । व्राँ वामांसे ।
ज्यँ सर्वाङ्गे (व्यापकम् ।)

---

१. 'बटुक-स्तोत्र का पाठ करने से पहले इस स्तोत्र का एक बार पाठ कर लेना चाहिए ।' यह संकेत इस कथन से प्राप्त होता है ।

जिस प्रकार मन्त्र का शापोद्धार होता है, उसी प्रकार सिद्धस्तोत्र का भी शापोद्धार होता है, यह भी इससे ज्ञात होता है ।

अथ मन्त्रः

(१) ॐ ह्लीं क्लीं ऐं ह्लं, श्रों श्रों श्रों श्रं श्रं श्रं श्रं श्रं ह्लीं श्रीं वटुकाय कुरु कुरु स्वाहा ।

(२) ॐ ह्लीं क्लीं ऐं ह्लं, ॐ श्रं श्रीं वटुकाय ।

'इनमें से किसी एक मन्त्र का २१ बार अथवा दोनों का ७-७ बार जप करे । तत्पश्चात् नीचे लिखे स्तोत्र का पाठ करे ।

अथ बटुकोत्कीलनपञ्चरत्नस्तोत्रम्[1]

भैरवो बटुको देव आपदुद्धारणस्तथा ।
देवदेवो महारुद्रो भैरवः प्राणवल्लभः ।।१।।
क्रोध उन्मत्त-मातङ्ग-संहारभैरवस्तथा ।
कालः कपालमाली च भीषणो भैरवस्तथा ।।२।।
कात्यायनी महागौरी हैमवत्यंशकामिनी ।
योगिभैरवमाता च भैरवी प्राणवल्लभा ।।३।।
कालभैरवभार्या च काममोक्षपुरन्दरी ।
वीरभैरवरोमाङ्गी शत्रुसङ्कटनाशिनी ।।४।।
योगिनी योगमाया च सर्वभैरवमोहिनी ।
सर्ववीर्यमहातेजाः सर्वत्र शुभदायिनी ।।५।।
पञ्चरत्नं पठेद् देवि ! सर्वत्र विजयी भवेत् ।
पुत्रपौत्रधनं धान्यं सर्वरोगनिवारणम् ।।६।।[2]

इति श्रीरुद्रयामले तन्त्रे पार्वतीहरसंवादे
बटुकोत्कीलन(पञ्चरत्न)स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

---

१. यह 'पञ्चरत्नस्तोत्र' प्राचीन प्रतियों में लिखित है किन्तु इसके पाठ शुद्ध नहीं प्रतीत होते क्योंकि भैरव के १६ नामों में कहीं द्वितीया और कहीं प्रथमा के एकवचन का प्रयोग है तथा कुछ नामों के बाद 'न्यसेत्' लिखा हुआ है । हमने देवी के नामों में प्रथमा होने से भैरव के नामों में भी प्रथमा का प्रयोग करके पाठ जमा दिया है । यदि शुद्ध पाठ मिले तो विद्वज्जन सूचित करने का कष्ट करें ।

२. यह स्तोत्र मूलरूप में १२ पद्यों का है, किन्तु ५ पद्य स्तोत्र की प्रशंसा के हैं और अशुद्धप्राय हैं, अतः नहीं दिये गये हैं ।

क-'श्रीवटुक-भैरव-पञ्चरत्न-स्तोत्र' के नाम से एक और स्तोत्र प्राप्त होता है, जिसे हम अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं ।

पाठ-सम्बन्धी निवेदन

शान्तं पद्मासनस्थं शशिमुकुटधरं मुण्डमालं त्रिनेत्रं,
शूलं खड्गं च वज्रं परशु-मुसलके दक्षिणाङ्गे वहन्तम्।
नागं घण्टां कपालं नलिनकरयुतं साङ्कुशं पाशमन्ये,
नानालङ्कारयुक्तं स्फटिकमणिनिभं नौमि बालं शिवाख्यम् ।।

'श्री आपदुद्धारक-बटुकभैरवस्तोत्र' के पाठ के अनेक प्रकार तन्त्रों में वर्णित हैं जिनकी चर्चा हमने सम्पादकीय भूमिका में की है। यहाँ कुछ पाठ साधकों की सुविधा के लिये दिये जा रहे हैं। इनमें सर्वप्रथम १-मूल पाठ है। दूसरा सृष्टि, स्थिति और संहार-क्रम युक्त पाठ है जिसमें शास्त्राज्ञानुसार तीन-तीन पाठों का एक-एक पाठ है। तीसरा पाठ मात्र नामावली का चतुर्थ्यन्त तथा नमोऽन्त है जिसमें 'ॐ ह्रीं' साथ लगे हुए हैं। उस स्थान पर कामना की दृष्टि से रमा (श्रीं), काम (क्लीं), त्रिशक्ति (ऐं श्रीं क्लीं) बीज अथवा अन्य कर्मानुसारी वीज लगाकर पाठ कर सकते हैं। साथ ही सृष्टि, स्थिति और संहार-पाठों को पृथक्-पृथक् समयानुसार तथा तीन-तीन पाठ के क्रमानुसार बनाकर भी प्रयोग किया जा सकता है। चौथा पाठ 'विलोमगर्भित' बटुकमन्त्र सम्पुटित है जिसका अविकल रूप हमें लूणवा (राजस्थान) निवासी पं० रमादत्त जी वैद्य के पूज्य पिताजी श्री जयनारायणजी के संग्रहालय से प्राप्त हुआ है। यह भी एक अभिनव रूप है। पाँचवा पाठ 'हिन्दी चौपाई में संगृहीत नामावली' का है जिसके ध्यान भी हिन्दी में ही हैं। संस्कृत न जानने वाले तथा अशुद्धि से भयभीत रहकर पाठ न करने वाले भक्तजनों के लिए यह परमोपयोगी है। यह हिन्दी नामावली-पाठ बालिकाओं तथा महिलाओं के लिए बहुत ही लाभदायक है। परिवार में सर्व-विध शान्ति और रोगों से छुटकारा चाहने वाले इसका पाठ अवश्य करें और कराएँ। इसी के साथ एक अन्य हिन्दी दोहे-चौपाई में अनूदित 'अनुलोम-विलोमपाठ' भी दिया है।[1]

इस प्रकार इन पाठों में से कोई एक पाठ करने पर श्रीवटुकभैरव की कृपा प्राप्त होती है और उत्तरोत्तर अभ्युदय होता है। इसमें सन्देह नहीं।

---

१. 'भैरव-नामावली' के साथ 'भैरव-कवच, भैरव हृदय और भैरव रहस्य' भैरवसहस्र नाम के भी पाठ किये जाते हैं जिन्हें हम आगे दे रहे हैं।

श्रीमदापदुद्धारक-बटुक-भैरव-नामावली

"श्रीगणेशाय नमः ॥

मेरुपृष्ठे सुखासीनं देवदेवं त्रिलोचनम् ।'
शङ्करं परिपप्रच्छ पार्वती परमेश्वरम् ॥१॥

॥ पार्वत्युवाच ॥

भगवन् ! सर्वधर्मज्ञ ! सर्वशास्त्रागमादिषु ।
आपदुद्धारणं मन्त्रं सर्वसिद्धिकरं नृणाम् ॥२॥
सर्वेषां चैव भूतानां हितार्थं वाञ्छितं मया ।
विशेषतस्तु राज्ञां वै शान्ति-पुष्टि-प्रसाधनम् ॥३॥
अङ्गन्यास-करन्यास-देहन्यास-समन्वितम् ।
वक्तुमर्हसि देवेश मम हर्ष-विवर्धनम् ॥४॥

॥ शङ्कर उवाच ॥

शृणु देवि ! महामन्त्रमापदुद्धार-हेतुकम् ।
सर्वदुःख-प्रशमनं सर्वशत्रु-विनाशनम् ॥५॥
अपस्मारादिरोगाणां ज्वरादीनां विशेषतः ।
नाशनं स्मृतिमात्रेण मन्त्रराजमिमं प्रिये ! ॥६॥
ग्रहराजभयानां च नाशनं सुख-वर्धनम् ।
स्नेहाद् वक्ष्यामि ते मन्त्रं सर्वसारमिमं प्रिये! ॥७॥
सर्वार्थकामदं मन्त्रं सर्वभोगप्रदं नृणाम् ।
आपदुद्धारणं मन्त्रं प्रवक्ष्यामि विशेषतः ॥८॥
प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य देवीप्रणवमुद्धरेत् ।
वटुकायेति वै पश्चादापदुद्धारणाय च ॥९॥
कुरुद्वयं ततः पश्चाद् वटुकाय पुनर्वदेत् ।
देवीप्रणवमुद्धृत्य मन्त्रोद्धारमिमं प्रिये ! ॥१०॥

---

१. 'वेशमा' नामक प्रसिद्ध विश्वामित्रपुर के 'व्याघ्रपा प्रकाशक यन्त्रालय' तथा वाराणसी के 'सुधानिवास यन्त्रालय' से प्रकाशित प्रतियों में यह स्तोत्र शिलायन्त्र में छपा है। इसके अतिरिक्त अनेक पद्धतिग्रन्थों में और 'श्रीवटुकोपासना' के नाम से मुद्रित ग्रन्थ में यह स्तोत्र केवल नाममय और पूर्वापरपद्यों सहित प्राप्त होता है। रुद्रयामलोक्त तथा विश्वसारोद्धारतन्त्रगत इस स्तोत्र के आरम्भ में कहीं ४२ और कहीं ४४ पद्य दिये गए हैं इस प्रारम्भिक पद्य-संग्रह में बहुत से स्थानों पर कुछ पाठभेद हैं किन्तु विस्तारभय से उन्हें यहाँ न देकर शुद्धपाठ ही दिया गया है।

मन्त्रोद्धारमिदं देवि ! त्रैलोक्ये चातिदुर्ल्लभम् ।
अप्रकाश्यमिदं मन्त्रं सर्वशक्ति-समन्वितम् ॥११॥
स्मरणादेव मन्त्रस्य भूतप्रेतपिशाचकाः ।
विद्रवन्त्यतिभूतानि कालरुद्रादिव प्रजाः ॥१२॥
पठेद् वा पाठयेद् वाऽपि पूजयेद् वापि पुस्तकम् ।
नाग्निचौरभयं तस्य ग्रहराजभयं तथा ॥१३॥
न च मारीभयं किञ्चित् सर्वत्रैव सुखी भवेत् ।
आयुरारोग्यमैश्वर्यं पुत्र-पौत्रादि-सम्पदः ॥१४॥
भवन्ति सततं तस्य पुस्तकस्यापि पूजनात् ।

॥ पार्वत्युवाच ॥

क एष भैरवो नाम आपदुद्धारको मतः ॥१५॥
त्वया च कथितो देव ! भैरवः कल्पवित्तमः ।
तस्य नामसहस्राणि प्रयुतान्यर्बुदानि च ॥१६॥
सारमुद्धृत्य तेषां वै नामाष्टशतकं वद ।
यानि सङ्कीर्त्तयन्मर्त्यः सर्वदुःखविवर्जितः ॥१७॥
सर्वान् कामानवाप्नोति साधकः सिद्धिमेव च ।

॥ शङ्कर उवाच ॥

शृणु देवि ! प्रवक्ष्यामि भैरवस्य महात्मनः ॥१८॥
आपदुद्धारकस्येह नामाष्टशतमुत्तमम् ।
सर्वपापहरं पुण्यं सर्वापत्ति-निवारणम् ॥१९॥
सर्वकामार्थदं देवि ! साधकानां सुखावहम् ।
सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वोपद्रव-नाशनम् ॥२०॥
आयुष्करं पुष्टिकरं श्रीकरं च यशस्करम् ।
नामाष्टशतकस्य च्छन्दोऽनुष्टुप् प्रकीर्तितम् ॥२१॥
बृहदारण्यको नाम ऋषिर्देवोऽथ भैरवः ।
अष्टबाहुं त्रिनयनमिति बीजं समीरितम् ॥२२॥
शक्तिकं (ह्रीं) कीलकं शेषमिष्टसिद्धौ नियोजयेत् ॥२३॥
(लज्जाबीजं बीजमिति वटुकायेति शक्तिकम् ।
प्रणवः कीलकं प्रोक्तमिष्टसिद्धौ नियोजयेत् ॥)[1]

---

१. अथाङ्गन्यासः करन्यासश्चेत्यादिनाऽत्र न्यासमन्त्रा अपि वाराणसीपुस्तके मुद्रितास्ते च मूलपाठारम्भे द्रष्टव्याः ।

(अथ देहन्यासः)

भैरवं मूर्ध्नि विन्यस्य ललाटे भीमदर्शनम् :
नेत्रयोर्भूतदहनं सारमेयानुगं भ्रुवोः ॥२४॥
कर्णयोर्भूतनाथं च प्रेतवाहं कपोलयोः ।
नासौष्ठपुटयोश्चैव भस्माङ्गं सर्वभूषणम् ॥२५॥
अनादिनाथमास्ये च शक्तिहस्तं गले न्यसेत् ।
स्कन्धयोर्दैत्यशमनं बाह्वोरतुलतेजसम् ॥२६॥
पाण्योः कपालिनं न्यस्य स्तनयोः कामचारिणम् ।
उदरे च सदातुष्टं क्षेत्रेशं पार्श्वयोस्तथा ॥२७॥
क्षेत्रपालं पृष्ठदेशे क्षेत्रज्ञं नाभिदेशके ।
पापौघनाशनं कट्यां बटुकं लिङ्गदेशके ॥२८॥
गुदे रक्षाकरं न्यस्य तन्रोर्वो रक्तलोचनम् ।
जानुनोर्घुंघुंररवं जङ्घयो रक्तपायिनम् ॥२९॥
गुल्फयोः पादुकासिद्धं पादपृष्ठे सुरेश्वरम् ।
आपादमस्तकं चैव आपदुद्धारणं तथा ॥३०॥

(अथ दिशान्यासः)

पूर्वे डमरुहस्तं च दक्षिणे दण्डधारिणम् ।
खड्गहस्तं पश्चिमायां घण्टावादिनमुत्तरे ॥ ३१॥
आग्नेय्यामग्निवर्णं च नैर्ऋत्याञ्चाष्टसिद्धिदम् ।
वायव्यां सर्वभूतस्थमीशान्यां शूलधारिणम् ॥३२॥
ऊर्ध्वं खेचरिणं न्यस्य पाताले रौद्ररूपिणम् ।
एवं विन्यस्य देहे स्वे षडङ्गेषु ततो न्यसेत् ॥३३॥
(रुद्रमङ्गुष्ठयोर्न्यस्य तर्जन्योश्च दिवाकरम् ।
शिवं मध्यमयोर्न्यस्य अनामिकयोस्त्रिशूलिनम् ॥
ब्रह्माणं तु कनिष्ठिकयोस्तलयोस्त्रिपुरान्तकम् ।
मांसाशनं कराग्रेषु करपृष्ठे दिगम्बरम् ॥)[१]

(अथ नामाङ्गन्यासः)—

हृदये भूतनाथाय आदिनाथाय मूर्धनि ।
आनन्दवरपूर्वाय नाथाय च शिखासु च ॥३४॥

---

१. वाराणसी से मुद्रित पुस्तक में यह पाठ अधिक है ।

सिद्धशाबरनाथाय कवचे विन्यसेत्ततः ।
सहजानन्दनाथाय न्यसेन् नेत्रत्रये तथा ॥३५॥
निःसीमानन्द-नाथाय अस्त्रे चैव प्रयोजयेत् ।
एवं न्यासविधिं कृत्वा यथावत्तदनन्तरम् ॥३६॥
ध्यानं तस्य प्रवक्ष्यामि यथा ध्यात्वा पठन्नरः ॥३७॥

(अथ ध्यानम्)

शुद्धस्फटिकसङ्काशं सहस्रादित्यवर्चसम् ।
नीलजीमूतसङ्काशं नीलाञ्जन-समप्रभम् ॥३८॥
अष्टबाहुं त्रिनयनं चतुर्बाहुं द्विबाहुकम् ।
दंष्ट्राकरालवदनं नूपुरारव-संकुलम् ॥३९॥
भुजंग-मेखलं देवमग्निवर्णशिरोरुहम् ।
दिगम्बरं कुमारीशं बटुकाख्यं महाबलम् ॥४०॥
खट्वांगमसिपाशं च शूलं दक्षिणभागतः ।
डमरुं च कपालं च वरदं भुजगं तथा ॥४१॥
अग्निवर्णसमोपेतं सारमेय-समन्वितम् ।
ध्यात्वा जपेत् सुसंहृष्टः सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥४२॥[1]

—×—

१. अन्य ध्यान पद्य

भीरूणामभयप्रदो भवभयाक्रन्दस्य हेतुस्ततो,
हृद्धाम्नि प्रथितश्च भीरवरुचामीशोऽन्तकस्यान्तकः ।
भीरं वायति यः स्वयोगिनिवहस्तस्य प्रभुर्भैरवो,
विश्वस्मिन् भरणादिकृद् विजयते विज्ञानरूपः परः ॥
डिम्बं डिम्बं सुडिम्बं पच पच सहसा झम्यझम्यं प्रझम्यं,
नृत्यन् यः शब्दवाद्यै रचितनिजशिरःशेखरं तार्क्ष्यपक्षैः ।
पूर्णं रक्तासवानां यममहिष-महाशृङ्गमादाय पाणौ,
पायाद् वो विश्ववन्द्यः प्रलयमुदितया भैरवः कालरात्र्या ॥

(१) अथ मूलनामावली-पाठः

ॐ ह्लीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट् ॥१॥
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः ॥२॥
कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ॥३॥
शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ॥४॥
धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान्।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ॥५॥
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥६॥
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः।
वटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ॥७॥
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः।
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ॥८॥
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥९॥
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः।
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ॥१०॥

कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान् ।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ॥११॥
शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः ।
वलिभुग् वलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः ॥१२॥
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः ।
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी ॥१३॥
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ।
सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि ह्रीं ॐ ॥१४॥[1]

—×—

फलश्रुतिपाठः

अष्टोत्तरशतं नाम्नां भैरवस्य महात्मनः ।
मया ते कथितं देवि रहस्यं सर्वकामदम् ॥

य इदं पठति स्तोत्रं नामाष्टशतमुत्तमम् ।
न तस्य दुरितं किञ्चिन्न रोगेभ्यो भयं भवेत् ॥

न च मारीभयं किञ्चिन्न च भूतभयं क्वचित् ।
न शत्रुभ्यो भयं किञ्चित् प्राप्नुयान्मानवः क्वचित् ॥

पातकेभ्यो भयं नैव यः पठेत् स्तोत्रमुत्तमम् ।
मारीभये राजभये तथा चौराग्निजे भये ॥

---

१. इस नामावली के आदि में ४२ पद्य तथा अन्त में १४ पद्य और आते हैं, जो प्रस्तुत नामावली की उत्पत्ति, प्राप्ति, महिमा, ऋषि, छन्द, देवता, शक्ति, वीज, कीलक और न्यास के वर्णन के साथ ही पाठ के फल को वतलाते हैं उनका पाठ पहले दिया है और अन्तिम फलश्रुति-पाठ यहां रहे हैं। जो साधक पूरा पाठ करना चाहें वे आरम्भ से अन्त तक पाठ करें और जो केवल नामावली का पाठ करना चाहें वे १४ पद्यों का पाठ करें।

औत्पातिके महाघोरे तथा दुःस्वप्नदर्शने ।
बन्धने च तथा घोरे पठेत् स्तोत्रमनुत्तमम् ॥

सर्वं प्रशममायाति भयं भैरवकीर्तनात् ।
एकादशसहस्रन्तु पुरश्चरणमुच्यते ॥

यस्त्रिसंध्यं पठेद्देवि संवत्सरमतन्द्रितः ।
स सिद्धिं प्राप्नुयादिष्टां दुर्लभामपि मानवः ॥

षण्मासं भूमिकामस्तु जपित्वा प्राप्नुयान्महीम् ।
राजशत्रुविनाशार्थं पठेन्मासाष्टकं पुनः ॥

रात्रौ वारत्रयं चैव नाशयत्येव शात्रवान् ।
जपेन्मासत्रयं मर्त्यो राजानं वशमानयेत् ॥

धनार्थी च सुतार्थी च दारार्थी चापि मानवः ।
पठेन्मासत्रयं देवि वारमेकं तथा निशि ॥

धनं पुत्रं तथा दारान् प्राप्नुयान्नात्र संशयः ।
रोगी रोगात् प्रमुच्येत बद्धो मुच्येत बन्धनात् ।

भीतो भयात् प्रमुच्येत तत्तदापन्न आपदः ॥
निगडैश्चापि बद्धो यः कारागृह-निपातितः ।
शृंखलाबन्धनं प्राप्तः पठेच्चैव दिवानिशम् ॥
यान् यान् समीहते कामांस्तांस्तानाप्नोति मानवः ।
अप्रकाश्यं परं गुह्यं न देयं यस्य कस्यचित् ॥
सुकुलीनाय शान्ताय ऋजवे दम्भवर्जिते (ने)।
दद्यात् स्तोत्रमिदं पुण्यं सर्वकामफलप्रदम् ॥
य इदं पठते नित्यं धनधान्यमवाप्नुयात् ।

इति श्रीरुद्रयामले तन्त्रे विश्वसारोद्धारे
श्रीमदापदुद्धारकबटुकभैरवस्तोत्रमन्त्रं
समाप्तम् ॥

—×—

अथ सृष्टि-स्थिति-संहाररूपस्त्रिक-पाठः

अथ सृष्टि-क्रम-पाठः

(१)

ॐ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट् ॥१॥
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः ॥२॥
कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ॥३॥
शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ॥४॥
धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान्।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ॥५॥
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥६॥
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः।
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ॥७॥
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः।
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ॥८॥
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥९॥
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः।
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ॥१०॥

कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान् ।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ॥११॥
शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः ।
वलिभुग् वलिभुङ्नाथो वालोऽवालपराक्रमः ॥१२॥
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः ।
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी ॥१३॥
जगद्रक्षाकरोऽनन्तः मायामन्त्रौषधीमयः ।
सर्वसिद्धप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि ॥ ह्रीं ॐ ॥१४॥

(२)

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि ।
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ॥१॥
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी ।
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः ॥२॥
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो वालोऽवालपराक्रमः ।
शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः ॥३॥
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ।
कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान् ॥४॥
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ।
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः ॥५॥
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ।
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः ॥६॥
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ।
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः ॥७॥
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ।
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः ॥८॥
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ।
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः ॥९॥
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ।
धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान् ॥१०॥

अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः।
शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः ॥११॥
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः।
कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः ॥१२॥
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः।
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः ॥१३॥
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्।
भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः ॥ ह्रीं ॐ ॥१४॥

(३)

ॐ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट् ॥१॥
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः ॥२॥
कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ॥३॥
शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ॥४॥
धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान्।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ॥५॥
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥६॥
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः।
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ॥७॥
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः।
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ॥८॥
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥९॥
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः।
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ॥१०॥

कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान् ।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ॥११॥
शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः ।
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः ॥१२॥
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः ।
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी ॥१३॥
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ।
सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि ॥ ह्रीं ॐ ॥१४॥

अथ स्थिति-क्रम-पाठः

(१)

ॐ ह्रीं धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान् ।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ॥१॥
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः ।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥२॥
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः ।
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ॥३॥
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः ।
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ॥४॥
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः ।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥५॥
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः ।
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ॥६॥
भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः ।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट् ॥७॥
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः ।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः ॥८॥

कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ॥९॥
शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ॥१०॥
कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान्।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ॥११॥
शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः।
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः ॥१२॥
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः।
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी ॥१३॥
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः
सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि ॥ ह्रीं ॐ ॥१४॥

(२)

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि।
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ॥१॥
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी।
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः ॥२॥
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः।
शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः ॥३॥
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा।
कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान् ॥४॥
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः।
शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः ॥५॥
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः।
कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः ॥६॥
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः।
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः ॥७॥
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्।
भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः ॥८॥

भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः।
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः ॥९॥
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः।
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः ॥१०॥
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः।
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः ॥११॥
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः।
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः ॥१२॥
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः।
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः ॥१३॥
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत्।
धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान् ॥ ह्लीं ॐ ॥१४॥

(३)

ॐ ह्लीं धनदोऽधनहागी च धनवान् प्रतिभानवान्।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ॥१॥
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥२॥
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः।
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ॥३॥
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः।
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ॥४॥
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥५॥
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः।
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ॥६॥
भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट् ॥७॥
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः ॥८॥

Su-4687

कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ॥९॥
शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ॥१०॥
कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान्।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ॥११॥
शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः।
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः ॥१२॥
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः।
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी ॥१३॥
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः।
सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि ॥ ह्रीं ॐ ॥१४॥

अथ संहार-क्रम-पाठः

(१)

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि।
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ॥१॥
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी।
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः ॥२॥
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः।
शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः ॥३॥
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा।
कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान् ॥४॥
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः।
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः ॥५॥
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः।
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः ॥६॥
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः।
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः ॥७॥

वटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः।
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः ॥८॥
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः।
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः ॥९॥
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत्।
धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान् ॥१०॥
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः।
शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः ॥११॥
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः।
कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः ॥१२॥
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः।
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः ॥१३॥
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्।
भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः ॥ ह्रीं ॐ ॥१४॥

(२)

ॐ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट् ॥१॥
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः ॥२॥
कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः।
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ॥३॥
शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः।
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ॥४॥
धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान्।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ॥५॥
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥६॥
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः।
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ॥७॥

भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः।
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ॥८॥
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥९॥
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः।
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ॥१०॥
कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान्।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ॥११॥
शुद्ध-नीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः।
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः ॥१२॥
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः।
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी ॥१३॥
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः।
सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि ॥ ह्रीं ॐ ॥१४॥

(३)

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि।
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ॥१॥
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी।
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः ॥२॥
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः।
शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः ॥३॥
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा।
कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान् ॥४॥
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः।
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः ॥५॥
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः।
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः ॥६॥
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः।
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः ॥७॥

बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ।
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः ॥८॥
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ।
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः ॥९॥
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ।
धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान् ॥१०॥
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ।
शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः ॥११॥
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ।
कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः ॥१२॥
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः ।
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः ॥१३॥
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट् ।
ॐ ह्रीं भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः ॥१४॥'

———

१. प्रायः यह नियम है कि—'भैरव-नामावली' का पाठ 'त्रिक-पाठ' के रूप में होना चाहिये। यह त्रिकपाठ ही उत्तम पाठ माना जाता है। केवल पाठ की अपेक्षा शीघ्र सफलता की कामना रखने वाले उपासक इनमें से किसी एक त्रिक (तीन पाठों के एक समूह) का पाठ करें। साथ ही सृष्टि-पाठ प्रातः, स्थिति पाठ मध्याह्न में तथा संहार-पाठ सायं या रात्रि में करें। इसी प्रकार ये पाठ कार्य भेद से भी किये जाते हैं। विशेष के लिये देखें इसी ग्रन्थ में परिचय-विभाग।

ॐ ह्लीं सहित-चतुर्थ्यन्त-नमोन्त-नाम-संवलित:

श्रीबटुकभैरवनामावली-पाठः

[१. सृष्टिक्रमपाठ:]

ॐ ह्लीं भैरवाय नमः
" " भूतानाथाय नमः
" " भूतात्मने नमः
" " भूतभावनाय नमः
" " क्षेत्रज्ञाय नमः
" " क्षेत्रपालाय नमः
" " क्षेत्रदाय नमः
" " क्षत्रियाय नमः
" " विराजे नमः
" " श्मशानवासिने नमः (१०)
" " मांसाशिने नमः
" " खर्पराशिने नमः
" " स्मरान्तकाय नमः
" " रक्तपाय नमः
" " पानपाय नमः
" " सिद्धाय नमः
" " सिद्धिदाय गमः
" " सिद्धसेविताय नमः
" " कङ्कालाय नमः
" " कालशमनाय नमः (२०)
" " कलाकाष्ठातनवे नमः
" " कवये नमः
ॐ ह्लीं त्रिनेत्राय नमः
" " बहुनेत्राय नमः
" " पिङ्गललोचनाय नमः
" " शूलापाणये नमः
" " खड्गपाणये नमः
" " कङ्कालिने नमः
" " धूम्रलोचनाय नमः
" " अभीरवे नमः (३०)
" " भैरवीनाथाय नमः
" " भूतपाय नमः
" " योगिनीपतये नमः
" " धनदाय नमः
" " अधनहारिणे नमः
" " धनवते नमः
" " प्रतिभानवते नमः
" " नागहाराय नमः
" " नागपाशाय नमः
" " व्योमकेशाय नमः (४०)
" " कपालभृते नमः
" " कालाय नमः
" " कपालमालिने नमः
" " कमनीयाय नमः

ॐ ह्रीं कलानिधये नमः
,, ,, त्रिलोचनाय नमः
,, ,, ज्वलन्नेत्राय नमः
,, ,, त्रिशिखिने नमः
,, ,, त्रिलोकपाय नमः
,, ,, त्रिनेत्रतनयाय नमः (५०)
,, ,, डिम्भशान्ताय नमः
,, ,, शान्तजनप्रियाय नमः
,, ,, बटुकाय नमः
,, ,, बहुवेषाय नमः
,, ,, खट्वाङ्गवरधारकाय नमः
,, ,, भूताध्यक्षाय नमः
,, ,, पशुपतये नमः
,, ,, भिक्षुकाय नमः
,, ,, परिचारकाय नमः
,, ,, धूर्ताय नमः (६०)
,, ,, दिगम्बराय नमः
,, ,, शूराय नमः
,, ,, हरिणाय नमः
,, ,, पाण्डुलोचनाय नमः
,, ,, प्रशान्ताय नमः
,, ,, शान्तिदाय नमः
,, ,, शुद्धाय नमः
,, ,, शङ्करप्रियबान्धवाय नमः
,, ,, अष्टमूर्तये नमः
,, ,, निधीशाय नमः (७०)
,, ,, ज्ञानचक्षुषे नमः
,, ,, तपोमयाय नमः
,, ,, अष्टाधाराय नमः

ॐ ह्रीं षडाधाराय नमः
,, ,, सर्पयुक्ताय नमः
,, ,, शिखीसखाय नमः
,, ,, भूधराय नमः
,, ,, भूधराधीशाय नमः
,, ,, भूतपाय नमः
,, ,, भूधरात्मजाय नमः (८०)
,, ,, कङ्कालधारिणे नमः
,, ,, मुण्डिने नमः
,, ,, आन्त्रयज्ञोपवीतवते नमः
,, ,, जृम्भणाय नमः
,, ,, मोहनाय नमः
,, ,, स्तम्भिने नमः
,, ,, मारणाय नमः
,, ,, क्षोभणाय नमः
,, ,, शुद्धनीलाञ्जनप्रख्याय नमः
,, ,, दैत्यघ्ने नमः (९०)
,, ,, मुण्डभूषिताय नमः
,, ,, बलिभुजे नमः
,, ,, बलिभुङ्नाथाय नमः
,, ,, बालाय नमः
,, ,, अबालपराक्रमाय नमः
,, ,, सर्वापत्तारणाय नमः
,, ,, दुर्गाय नमः
,, ,, दुष्टभूतनिषेविताय नमः
,, ,, कामिने नमः
,, ,, कलानिधिकान्ताय नमः (१००)
,, ,, कामिनीवशकृते नमः

ॐ ह्रीं वशिने नमः
,, ,, जगद्रक्षाकराय नमः
,, ,, अनन्ताय नमः
,, ,, मायामन्त्रौषधीमयाय नमः
ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय नमः
,, ,, वैद्याय नमः
,, ,, प्रभविष्णवे नमः (१०८)

[२. स्थितिक्रमपाठः]

ॐ ह्रीं धनदाय नमः
,, ,, अधनहारिणे नमः
,, ,, धनवते नमः
,, ,, प्रतिभानवते नमः
,, ,, नागहाराय नमः
,, ,, नागपाशाय नमः
,, ,, व्योमकेशाय नमः
,, ,, कपालभृते नमः
,, ,, कालाय नम
,, ,, कपालमालिने नमः (१०)
,, ,, कमनीयाय नमः
,, ,, कलानिधये नमः
,, ,, त्रिलोचनाय नमः
,, ,, ज्वलन्नेत्राय नमः
,, ,, त्रिशिखिने नमः
,, ,, त्रिलोकपाय नमः
,, ,, त्रिनेत्रतनयाय नमः
,, ,, डिम्भशान्ताय नमः
,, ,, शान्तजनप्रियाय नमः
,, ,, बटुकाय नमः (२०)
,, ,, बहुवेषाय नमः
,, ,, खड्वाङ्गवरधारकाय नमः
,, ,, भूताध्यक्षाय नमः
,, ,, पशुपतये नमः
ॐ ह्रीं भिक्षुकाय नमः
,, ,, परिचारकाय नमः
,, ,, धूर्ताय नमः
,, ,, दिगम्बराय नमः
,, ,, शूराय नमः
,, ,, हरिणाय नमः (३०)
,, ,, पाण्डुलोचनाय नमः
,, ,, प्रशान्ताय नमः
,, ,, शान्तिदाय नमः
,, ,, शुद्धाय नमः
,, ,, शङ्करप्रियबान्धवाय नमः
,, ,, अष्टमूर्तये नमः
,, ,, निधीशाय नमः
,, ,, ज्ञानचक्षुषे नमः
,, ,, तपोमयाय नमः
,, ,, अष्टाधाराय नमः (४०)
,, ,, षडाधाराय नमः
,, ,, सर्पयुक्ताय नमः
,, ,, शिखीसखाय नमः
,, ,, भूधराय नमः
,, ,, भूधराधीशाय नमः
,, ,, भूपतये नमः
,, ,, भूधरात्मजाय नमः
,, ,, भैरवाय नमः

ॐ ह्रीं भूतनाथाय नमः
" " भूतात्मने नमः (५०)
" " भूतभावनाय नमः
" " क्षेत्रज्ञाय नमः
" " क्षेत्रपालाय नमः
" " क्षेत्रदाय नमः
" " क्षत्रियाय नमः
" " विराजे नमः
" " श्मशानवासिने नमः
" " मांसाशिने नमः
" " खर्पराशिने नमः
" " स्मरान्तकाय नमः (६०)
" " रक्तपाय नमः
" " पानपाय नमः
" " सिद्धाय नमः
" " सिद्धिदाय नमः
" " सिद्धसेविताय नमः
" " कङ्कालाय नमः
" " कालशमनाय नमः
" " कलाकाष्ठातनवे नमः
" " कवये नमः
" " त्रिनेत्राय नमः (७०)
" " बहुनेत्राय नमः
" " पिङ्गललोचनाय नमः
" " शूलपाणये नमः
" " खड्गपाणये नमः
" " कङ्कालिने नमः
" " धूम्रलोचनाय नमः
" " अभीरवे नमः

ॐ ह्रीं भैरवीनाथाय नमः
" " भूतपाय नमः
" " योगिनीपतये नमः (८०)
" " कङ्कालधारिणे नमः
" " मुण्डिने नमः
" " आन्त्रयज्ञोपवीतवते नमः
" " जृम्भणाय नमः
" " मोहनाय नमः
" " स्तम्भिने नमः
" " मारणाय नमः
" " क्षोभणाय नमः
" " शुद्धनीलाञ्जनप्रख्याय नमः
" " दैत्यघ्ने नमः (९०)
" " मुण्डभूषिताय नमः
" " बलिभुजे नमः
" " बलिभुङ्नाथाय नमः
" " बालाय नमः
" " अबालपराक्रमाय नमः
" " सर्वापत्तारणाय नमः
" " दुर्गाय नमः
" " दुष्टभूतनिषेविताय नमः
" " कामिने नमः
" " कलानिधिकान्ताय नमः (१००)
" " कामिनीवशकृते नमः
" " वशिने नमः
" " जगद्रक्षाकराय नमः
" " अनन्ताय नमः
" " मायामन्त्रौषधीमयाय नमः

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदाय नमः
,, ,, वैद्याय नमः

ॐ ह्रीं प्रभविष्णवे नमः (१०८)

[३. संहारक्रमपाठः]

ॐ ह्रीं प्रभविष्णवे नमः
,, ,, वैद्याय नमः
,, ,, सर्वसिद्धिप्रदाय नमः
,, ,, मायामन्त्रौषधीमयाय नमः
,, ,, अनन्ताय नमः
,, ,, जगद्रक्षाकराय नमः
,, ,, वशिने नमः
,, ,, कामिनीवशकृते नमः
,, ,, कलानिधिकान्ताय नमः
,, ,, कामिने नमः (१०)
,, ,, दुष्टभूतनिषेविताय नमः
,, ,, दुर्गाय नमः
,, ,, सर्वापत्तारणाय नमः
,, ,, अबालपराक्रमाय नमः
,, ,, बालाय नमः
,, ,, बलिभुङ्नाथ नमः
,, ,, बलिभुजे नमः
,, ,, मुण्डभूषिताय नमः
,, ,, दैत्यघ्ने नमः
,, ,, शुद्धनीलाञ्जनप्रख्याय नमः (२०)
,, ,, क्षोभणाय नमः
,, ,, मारणाय नमः
,, ,, स्तम्भिने नमः
,, ,, मोहनाय नमः
,, ,, जृम्भणाय नमः

ॐ ह्रीं आन्त्रयज्ञोपवीतवते नमः
,, ,, मुण्डिने नमः
,, ,, कङ्कालधारिणे नमः
,, ,, भूधरात्मजाय नमः
,, ,, भूपतये नमः (३०)
,, ,, भूधराधीशाय नमः
,, ,, भूधराय नमः
,, ,, शिखीसखाय नमः
,, ,, सर्पयुक्ताय नमः
,, ,, षडाधाराय नमः
,, ,, अष्टाधाराय नमः
,, ,, तपोमयाय नमः
,, ,, ज्ञानचक्षुषे नमः
,, ,, निधीशाय नमः
,, ,, अष्टमूर्तये नमः (४०)
,, ,, शङ्करप्रियवान्धवाय नमः
,, ,, शुद्धाय नमः
,, ,, शान्तिदाय नमः
,, ,, प्रशान्ताय नमः
,, ,, पाण्डुलोचनाय नमः
,, ,, हरिणाय नमः
,, ,, शूराय नमः
,, ,, दिगम्बराय नमः
,, ,, धूर्ताय नमः
,, ,, परिचारकाय नमः (५०)
,, ,, भिक्षुकाय नमः

ॐ ह्रीं पशुपतये नमः
" " भूताध्यक्षाय नमः
" " खट्वाङ्गवरधारकाय नमः
" " बहुवेषाय नमः
" " बटुकाय नमः
" " शान्तजनप्रियाय नमः
" " डिम्भशान्ताय नमः
" " त्रिनेत्रतनयाय नमः
" " त्रिलोकपाय नमः (६०)
" " त्रिशिखिने नमः
" " ज्वलन्नेत्राय नमः
" " त्रिलोचनाय नमः
" " कलानिधये नमः
" " कमनीयाय नमः
" " कपालमालिने नमः
" " कालाय नमः
" " कपालभृते नमः
" " व्योमकेशाय नमः
" " नागपाशाय नमः (७०)
" " नागहाराय नमः
" " प्रतिभानवते नमः
" " धनवते नमः
" " अधनहारिणे नमः
" " धनदाय नमः
" " योगिनीपतये नमः
" " भूतपाय नमः
" " भैरवीनाथाय नमः
" " अभीरवे नमः
" " धूम्रलोचनाय नमः (८०)

ॐ ह्रीं कङ्कालिने नमः
" " खड्गपाणये नमः
" " शूलपाणये नमः
" " पिङ्गललोचनाय नमः
" " बहुनेत्राय नमः
" " त्रिनेत्राय नमः
" " कवये नमः
" " कलाकाष्ठातनवे नमः
" " कालशमनाय नमः
" " कङ्कालाय नमः (९०)
" " सिद्धसेविताय नमः
" " सिद्धिदाय नमः
" " सिद्धाय नमः
" " पानपाय नमः
" " रक्तपाय नमः
" " स्मरान्तकाय नमः
" " खर्पराशिने नमः
" " मांसाशिने नमः
" " श्मशानवासिने नमः
" " विराजे नमः (१००)
" " क्षत्रियाय नमः
" " क्षेत्रदाय नमः
" " क्षेत्रपालाय नमः
" " क्षेत्रज्ञाय नमः
" " भूतभावनाय नमः
" " भूतात्मने नमः
" " भूतनाथाय नमः
" " भैरवाय नमः (१०८)

———

४. अथ विलोमगर्भं वटुकमन्त्र-सम्पुटितं

श्रीबटुकभैरवस्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

ॐ अस्य श्रीवटुकभैरवस्याष्टोत्तरशतनामस्तोत्र-विलोमगर्भितस्य वृहदारण्यक-ऋषिरनुष्टुप्छन्द आपदुद्धारकश्रीवटुकभैरवो देवता ममाभीष्टसिद्धयर्थे जपे विनियोगः।[1]

ॐ ह्रीं वटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं ॐ।

ॐ भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः।
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्॥
ट्राविर योत्रिक्ष दःत्रक्षे श्चलपात्रक्षे ज्ञःत्रक्षे।
नःवभातभू त्माताभू श्चथनातभू वोरभै ॐ॥
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रपालश्च क्षेत्रदः क्षत्रियो विराट्।
भैरवो भूतनाथश्च भूतात्मा भूतभावनः॥

ॐ ह्रीं वटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं सर्वार्थसिद्धिदाय मनोवाञ्छाफलपूरणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं ॐ। इति वारद्वयं पठेत्॥१॥

श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः।
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः॥
तःविसेद्धसि दःद्धिसि द्धःसि पःनपा पःक्तर।
कःन्तरास्म शीरार्पख शीसामां सीवानशाश्म॥
रक्तपः पानपः सिद्धः सिद्धिदः सिद्धसेवितः।
श्मशानवासी मांसाशी खर्पराशी स्मरान्तकः॥

ॐ ह्रीं वटुकाय० इति वारद्वयं पठेत्॥ २॥

कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः।
त्रिनेत्रो वहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः॥
नःचलोलङ्गपि थात श्चत्रनेहुब त्रोनेत्रि।

---

१. इसके पश्चात् ऋष्यादिन्यास, करन्यास, षडङ्गन्यास तथा ध्यान पूर्ववत् करके पाठ करें।

विःक नुःतष्ठाकालाक नःमशलका लःङ्काक ॥
त्रिनेत्रो बहुनेत्रश्च तथा पिङ्गललोचनः ।
कङ्कालः कालशमनः कलाकाष्ठातनुः कविः ॥
ॐ ह्रीं बटुकाय० इति वारद्वयं पठेत् ॥ ३ ॥

शूलपाणिः खड्गपणिः कङ्काली धूम्रलोचनः ।
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ॥
तिःपनीगियो पोतभू थोनावीरभैंरुभीअ ।
नःचलोम्रधू लीङ्काक णिःपागड्ख णिःपालशू ॥
अभीरुर्भैरवीनाथो भूतपो योगिनीपतिः ।
शूलपाणिः खड्गपाणिः कङ्काली धूम्रलोचनः ॥
ॐ ह्रीं बटुकाय० इति वारद्वयं पठेत् ॥ ४ ॥

धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान् ।
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ॥
त्भृलपाक शःकेमव्यो शोपागना रोहागना ।
न्वानभातिप्र न्वानध च रीहानधऽदोनध ॥
नागहारो नागपाशो व्योमकेशः कपालभृत् ।
धनदोऽधनहारी च धनवान् प्रतिभानवान् ॥
ॐ ह्रीं बटुकाय० इति वारद्वयं पठेत् ॥ ५ ॥

कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः ।
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ॥
पःकलोत्रि च खीशिस्त्रित्रन्नेलज्व नोचलोत्रि ।
धिःनिलाक यःनीमक च लीमालपाक लःका ॥
त्रिलोचनो ज्वलन्नेत्रस्त्रिशिखी च त्रिलोकपः ।
कालः कपालमाली च कमनीयः कलानिधिः ॥
ॐ ह्रीं बटुकाय० इति वारद्वयं पठेत् ॥ ६ ॥

त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः ।
बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधारकः ॥
कःरधारवङ्गवाट्ख श्चषवेहुब कोटुब ।
यःप्रिनजन्तशा न्तःशाम्भडि योनतत्रनेत्रि ॥

बटुको बहुवेषश्च खट्वाङ्गवरधाकः ।
त्रिनेत्रतनयो डिम्भशान्तः शान्तजनप्रियः ॥
ॐ ह्रीं वटुकाय० इति वारद्वयं पठेत् ॥ ७ ॥

भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः ।
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ॥
नःचलोण्डुपा णःरिह रोशू रःम्बगदि र्तोधू ।
कःरचारिप कःक्षुर्भितिपशुप क्षःध्यताभू ॥
धूर्तो दिगम्बरः शूरो हरिणः पाण्डुलोचनः ।
भूताध्यक्षः पशुपतिर्भिक्षुकः परिचारकः ॥
ॐ ह्रीं बटुकाय० इति वारद्वयं पठेत् ॥ ८ ॥

प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः ।
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ॥
यःमपोस्तक्षुचनज्ञा श्चशधीर्निर्तिमूष्टअ ।
वःन्धबायप्रिरङ्कश द्धःशु दःन्तिशा न्तःशाप्र ॥
अष्टमूर्तिर्निधीशश्च ज्ञानचक्षुस्तपोमयः ।
प्रशान्तः शान्तिदः शुद्धः शङ्करप्रियबान्धवः ॥
ॐ ह्रीं बटुकाय० इति वारद्वयं पठेत् ॥ ९ ॥

अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः ।
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ॥
जःत्मराधभूर्तिपभू शोधीराधभू रोधभू ।
खःसखीशि क्तःयुर्पस रःधाडाष रःधाष्टाअ ॥
भूधरो भूधराधीशो भूपतिर्भूधरात्मजः ।
अष्टाधारः षडाधारः सर्पयुक्तः शिखीसखः ॥
ॐ ह्रीं बटुकाय० इति वारद्वयं पठेत् ॥१०॥

कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रज्ञोपवीतवान् ।
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ॥
थास्तणभक्षो णःरमा म्भीस्त नःहमो णोम्भजृ ।
नृवातवीपज्ञोयन्त्रआ च ण्डीमु रीधालङ्काक ॥
जृम्भणो मोहनः स्तम्भी मारणः क्षोभणस्तथा ।

कङ्कालधारी मुण्डी च आन्त्रयज्ञोपवीतवान् ॥
ॐ ह्रीं बटुकाय० इति वारद्वयं पठेत् ॥११॥

शुद्धनीलाञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्डभूषितः ।
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः ॥
मःक्रारापलबाऽलोबा थोनाङ्भुलिब ग्भुलिब ।
तःषिभूण्डमु हात्यदै ख्योप्रनञ्जलानीद्धशु ॥
बलिभुग् बलिभुङ्नाथो बालोऽबालपराक्रमः ।
शुद्धनीलञ्जनप्रख्यो दैत्यहा मुण्ड़भूषितः ॥
ॐ ह्रीं बटुकाय० इति वारद्वयं पठेत् ॥१२॥

सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः ।
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद् वशी ॥
शीद्वकृशवनीमिका न्तःकाधिनिलाक मीका ।
तःविषेनितभूष्टदु र्गोदु णोरत्तापर्वास ॥
कामी कलानिधिकान्तः कामिनीवशकृद्वशी ।
सर्वापत्तारणो दुर्गो दुष्टभूतनिषेवितः ॥
ॐ ह्रीं बटुकाय० इति वारद्वयं पठेत् ॥१३॥

जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ।
सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि ॥
यःमधीषन्त्रौमयामा न्तोनऽरोकक्षाद्रगज ।
हि वतीरिष्णुविभप्र द्यःवै दोप्रद्धिसिर्वस ॥
सर्वसिद्धिप्रदो वैद्यः प्रभविष्णुरितीव हि ।
जगद्रक्षाकरोऽनन्तो मायामन्त्रौषधीमयः ॥
ॐ ह्रीं बटुकाय० इति पठेत् ॥१४॥

श्रीबटुक भैरव अष्टोत्तरशत-नामावली
(हिन्दी-पाठ)

सात्त्विक ध्यान[1]

स्फटिक सरिस सुन्दर तन राजै। कुण्डल मणि आभा मुख साजै ॥
दिव्य किंकिणी मणि मंजीरा। नूपुर शोभित चरण सुधीरा ॥
दिव्य क्रान्ति चहुं दिग् बगरावै। विषद वसन सुषुमा मन भावै ॥
परम प्रसन्न बटुक शुभ रूपा। तीन नयन अति दिव्य अनूपा ॥
शूल दण्ड दोउ भुजनि विराजै। करि दर्शन हिय कहँ दुख भाजै ॥
भक्त इष्टप्रद भैरव नाथा। पुनिपुनि प्रभो नवावौं माथा ॥

तामस ध्यान

नील अद्रि सम सुन्दर रूपा। शशिलेखा श्रृङ्गार अनूपा ॥
गल मुण्डमाल मनोहर वेशा। दिव्य दिगम्बर पिङ्गल केशा ॥
डमरु खड्ग श्रृणि पाश विराजै। अभय नाग घण्टा शुभ राजै ॥
कर-कपाल सरसीरुह सोहै। छवि निरखत त्रिभुवन मन मोहै ॥
दंष्ट्राभीम वक्त्र छवि पावै। नाग यज्ञ उपवीत सुहावै ॥
तीन नयन जग अनुपम दानी। मणि किंकिणि नूपुर छवि खानि ॥
धरौ ध्यान तव सहज कृपाला। हरहु नाथ हिय कहं दुख जाला ॥

राजस ध्यान

उदित सूर्य सम अरुण स्वरूपा। त्रिनयन सुषुमा परम अनूपा ॥
रक्त सुरंजित शुभ अंगरागा। रक्त माल्य शोभित उरभागा ॥
मन्द हास्ययुत मुख छवि राजै। वरदरूप सुषुमा हिय साजै ॥
शूल कपाल करनि शुभ सोहै। मुद्रा अभय भक्त मन मोहै ॥
नीलकण्ठ शुभ भूषणधारी। चन्द्रचूड सुषुमा मन हारी ॥
बन्धूकारुण वसन सुहावै। भक्त भीर हरि हिय सरसावै ॥
भजौं तोहिं भैरव महाराजा। पूरउ नाथ सकल हिय काजा ॥

अष्टादश भुज-ध्यान

शुभ्र कान्तिमय रूप अनूपा। अष्टादश भुज शोभित रूपा ॥
पञ्च वक्त्र अनुपम छवि शोभा। तीन नयन सुषुमा मन लोभा ॥

---

१. जिस प्रकार संस्कृत में अनेक प्रकार से ध्यान दिये हैं, वैसे ही हिन्दी में भी दिये हैं। इनमें से कार्य और कामना के अनुसार कोई एक ध्यान करके पाठ करें।

मुद्रा ज्ञान कञ्जकर साजै । अपर हस्त में वज्र विराजै ॥
भेषज शंख चाप कर मांहीं । शूल खट्वाङ्ग बाण छवि पाहीं ॥
डमरु गदा असि चक्र मनोहर । पाश त्रिशूल मुण्ड कर सुन्दर ॥
होई मुदित पल में अपनावै । भक्त इष्टप्रद रूप दिखावै ॥
नमो-नमो भैरव बलवाना । अरिकुल मारि देउ वरदाना ॥
जय-जय भैरव सब सिधि दायक । भक्त इष्ट पूरक सब लायक ॥

दशभुज-ध्यान

पद्मासन आसीन कृपाला । परम शान्त छवि दीन दयाला ॥
चन्द्र मुकुट शुभ सीस विराजै । मुण्डमाल छवि उर विच साजै ॥
तीन नयन सुषुमा अति सोहै । अनुपम छवि त्रिभुवन मनमोहे ॥
शूल खड्ग अरु वज्र विराजै । परशु मुसल दक्षिण कर राजै ॥
नाग घण्ट सुकपाल सुहावै । नलिन पाश अंकुश छवि छावै ॥
नाना भूषण भूषित झाँकी । स्फटिकोपक सुषुमा अति बाँकी ॥
विश्वाकर्षक शिव सिर नाऔं । करहु कृपा पद-पङ्कज ध्याऔं ॥

अष्टभुज-ध्यान

शुद्ध स्फटिक सरिस शुभ भासै । सहस सूर्यसम दीप्ति प्रकासै ॥
नील मेघ सम वर्ण विराजै । नीलाञ्जन सम प्रभा सुसाजै ॥
आठ भुजा दृग तीन विराजै । भुजा चार युग भुजसौं भ्राजै ॥
दन्तुर वदन परम शुभ सोहै । नूपुर धुनि सौं त्रिभुवन मोहै ॥
भुजग मेखला परम सुहाई । अग्निवर्ण शिख हृदय लुभाई ॥
दिग्-अम्बर सब बालक राजा । अति बलवन्त बटुक महाराजा ॥
कर खट्वाङ्ग - पाश - असि राजै । दक्षिण में शुभ शूल विराजै ॥
डमरु कपाल भुजग वरदाना । अनल सरिस शुभ तेज निधाना ॥
सारमेय वाहन संग सोहै । ध्यान धरत त्रिभुवन मन मोहै ॥
सकल कामना तुरत पुरावैं । जै निज हियमहं बटुकहिं ध्यावैं ॥

द्विभुज ध्यान

कर कपाल शुभ सुन्दर राजै । कुण्डल कर्ण दण्ड कर साजै ॥
तरुण तिमिर सम नील स्वरूपा । व्याल यज्ञ-उपवीत अनूपा ॥
विघ्ननाशि मखरक्षक पूरे । साधु सिद्धिप्रद रण अति शूरे ॥
जय-जय बटुकनाथ सिधि दायक । कृपासिन्धु प्रभु भक्त सहायक ॥

नामावली पाठ

नमो-नमो भैरव सिधि दाता । भूतनाथ भव भयतें त्राता ॥
भूतात्मा भूतल उजियारे । बटुक भूत - भावन मतवारे ॥ १ ॥

क्षेत्रद क्षेत्रपाल सुरराटा । क्षत्रियवर क्षेत्रज्ञ विराटा ॥
जय स्मशानवासी शुभनामा । मांसाशी प्रभु मंगलधामा ॥ २ ॥

नमो खर्पराशी भगवन्ता । जय स्मरान्तक रूप अनन्ता ॥
(हे खरान्तक अतिबलवाना । हे मखान्तक सर्वसुज्ञाना) ॥ ३ ॥

रक्तप तोहि बहुरि सिरनाऔं । पानप-सिद्ध हृदय महँ ध्याऔं ॥
(रक्तपान तत्पर बलि जाऔं । पुनि-पुनि प्रभु तोहि सीस नवाऔं) ॥ ४ ॥

सिद्धिद देव सिद्धि के नाथा । सिद्ध सुसेवित सेवक साथा ॥
जय कङ्काल कुटिल नर नाशी । कालशमन जय सब सुख राशी ॥ ५ ॥

नमो कलाकाष्ठा-तनुधारी । जय-जय कवि सर्वज्ञ सुखारी ॥
जय त्रिनेत्र बहुनेत्र नमामि । पिङ्गललोचन शरण व्रजामि ॥ ६ ॥

शूलपाणि जय दीन दयाला । खड्गपाणि जय परम कृपाला ॥
कङ्काली तोहि कोटि प्रणामा । जयतु धूम्रलोचन शुभ नामा ॥ ७ ॥

जय अभीरु जय भैरव नाथा । भूतप योगिनिपति शुचि गाथा ॥
नमो धनद धनहारी देवा । जय धनवान विश्वसुख देवा ॥ ८ ॥

जय प्रतिभानवान सुरस्वामी । (जय प्रतिभावित अन्तर्यामी) ॥
नागहार तव चरण नमामि । देव ! दयामय सदा भजामि ॥ ९ ॥

नागपाश जय - जय सुरसांई । व्योमकेश जय प्रभो गुसांई ॥
(नागकेश जय - जय सुरराया । कीजै नाथ भक्त पै दाया) ॥ १० ॥

जय कपालभृत्, काल कराला । जय कपालमाली जगपाला ॥
जय कमनीय कालानिधि त्राता । जयतु त्रिलोचन आनन्ददाता ॥ ११ ॥

ज्वलन्नेत्र त्रिशिखी तोहि ध्याऔं । नमो त्रिलोकप सब सिधि पाऔं ॥
जय त्रिनेत्रतनय सुखराशी । जय हे डिम्भ ! नित्य अविनाशी ॥ १२ ॥

जय हे शान्त ! भक्त वरदाई । (डिम्भशान्त प्रभु भक्त सहाई) ॥
शान्तजनप्रिय दीन दयाला । नमो बटुक बहुवेष कृपाला ॥ १३ ॥

जय खट्वाङ्गवरधारक देवा । भूताध्यक्ष करैं सुख सेवा ॥
जय-जय पशुपति भिक्षुक देवा । जय परिचारक जन-मन-मेवा ॥ १४ ॥

(जय परिवारक जग के स्वामी। तुम कहँ बारम्बार नमामि) ॥
धूर्त दिगम्बर शूर भजामि। हरिण पाण्डुलोचन जय स्वामी ॥ १५॥

जय प्रशान्त हे शान्तिद शुद्धा । (सिद्ध युद्ध - जयकारी बुद्धा) ॥
हे शंकरप्रियबान्धव नामी । शंकरप्रिय-बान्धव शुभ कामी ॥ १६॥

अष्टमूर्ति जय देव निधीशा । ज्ञानचक्षु तपोमय ईशा ॥
अष्टाधार नमो सुर स्वामी । षडाधार जग अन्तर्यामी ॥ १७॥

सर्पयुक्त शिखिसख भूधर जय । जय भूधर अधीश मंगलमय ॥
भूपति भूधर आत्मज दाता। (भूधर आत्मक सब जग त्राता ॥ १८॥

जय कङ्कालधारि सुरनाथा । मुण्डी तोहि नवावौं माथा ॥
नाग यज्ञ - उपवीत विराजे । (आन्त्रयज्ञ उपवीत सुसाजै) ॥ १९॥

जृम्भण मोहन स्तम्भन स्वामी। मारण क्षोभण जगसुख कामी ॥
(हे गुरुदेव ज्ञान के दाता । भोग मोक्षप्रद कृपा विधाता) ॥ २०॥

शुद्ध नील अञ्जन प्रख्याता । देव दैत्यहा सेवक त्राता ॥
मुण्ड विभूषित छवि सरसाये । सकल सुमङ्गल मूल सुहाये ॥ २१॥

बलिभुक् तुम प्रभु बलिभुङ् नाथा । बाल अबाल पराक्रम साथा ॥
जय सर्वापत्तारण स्वामी । दुर्गरूप प्रभु अन्तर्यामी ॥ २२॥

दुष्ट भूत-निषेवित देवा । कामी कामफलप्रद सेवा ॥
जयतु कलानिधि कान्त सुनामी। कामिनीवशकृत तोहि नमामि ॥ २३॥

सकल जगत वशीकृत नामा। (कामिनिवशकृत वशी ललामा) ॥
देव जगत रक्षा कर जय-जय। अनन्त माया मन्त्रौषधि-मय ॥ २४॥

सर्व सिद्धिप्रद वैद्य महाना । हे प्रभु विष्णु विवेक निधाना ॥
तुम विभु अखिल विश्व सरसाओ। भक्त भरण करि सुयश कमाओ ॥ २५॥

अष्टोत्तर शतनाम स्वरूपा । कल्पवृक्ष यह परम अनूपा ॥
जपत जीव सब मंगल पावै । सकल कामना तुरत पुरावै ॥ २६॥

दुरित भूत भय मारी भीती । जपत मिटै पल में सब ईती ॥
राज शत्रु ग्रह भय नहिं लागै । भैरव स्तवन करत दुख भागै ॥ २७॥

अष्टोत्तर शत नाम शुभ, जपत धरै नित ध्यान।
तिनकहँ भैरव लाडिले, सदा करैं कल्याण ॥ २८॥

श्री बटुकभैरव अष्टोत्तरशत-नामावली

[२. अनुलोम-विलोम-रूप हिन्दी-पाठ]

प्रार्थना

महादेव के परम-प्रिय, भैरव नाथ महान।
पूर्ण-कृपा मुझ पर करो, दास आपका जान॥ १॥
बारम्बार प्रणाम कर, चरण-धूरि शिरधार।
अष्टोत्तर-शत-नाम का, सुमरण करूं पुकार॥ २॥

सामान्य-ध्यान

सुन्दर-भव्य-प्रतापी-आनन। गौर-वर्ण-छवि कुंडल कानन॥
नर-कपाल कर में अति-सोहैं। अहि-उपवीत देखि मन मोहैं॥
कटि-किंकिणि पद-नूपुर बाजै। आंत्र-माल-वैजन्ति विराजे॥
देखत दुष्ट-दैत्य घबरावें। भक्त चरण में शीश नवावें॥
सकल-मनोरथ-पूरक स्वामी। बार बार वर मांगहुँ नामी !॥
शीघ्र दया-कर मम-सुधि लीजे। चरण-सरण दे कारज कीजे॥

विशेष-ध्यान

नील-वर्ण अति-उज्ज्वलरूपा। अष्टादश-भुज परम-अनूपा॥
पंचानन छवि अद्‌भुत राजै। बाल-प्रताप-पौरुष अति-साजै॥
नेत्र-त्रय अति-सुन्दर सोहैं। दैत्य भयंकर जन-मन मोहैं॥
पंकज-वज्र-शंख-शर-शूला। डमरु-गदा-असि-चापनुकूला॥
परशु-ज्ञान-मुद्रा मुंड-धारी। खट्वांगौषधि कर में डारी॥
मुद्रा अभय चक्र अहि-पाशा। पान-पात्र शुचि करत प्रकाशा॥
भक्त-जनों के परम-कृपाला। दर्शन दे मेटें सब जाला॥
सकल-मनोरथ-पूरक स्वामी। बार बार तव चरण-नमामि॥

अष्टोत्तर-शतनामावली

(१) अनुलोम-पाठ

भैरव[१] भूतनाथ[२] भूतात्मा[३] । भूतभावनः[४] क्षेत्रज्ञात्मा[५] ।।
क्षेत्रपाल[६] क्षेत्रद[७] क्षत्रीय[८] । विराट्[९] श्मशान-वासी[१०] कमनीय ।।
मांसाशी[११] खर्पराशी[१२] देवा । स्मरान्तकृत्[१३] रक्तप[१४] बहुसेवा ।।
पानप[१५] सिद्ध[१६] सिद्धिद[१७] स्वामी । सिद्ध[१८] सेवितः अन्तरयामी ।।
कंकालः[१९] काल-शमनः[२०] सुशूरे । कलाकाष्ठातनु[२१] कवि[२२] पूरे ।।
तीन-नेत्र[२३] बहुनेत्र[२४] प्रतापी । पिंगल-लोचन[२५] शूलपाणि[२६] जी ।।
खड्गपाणि[२७] कंकालि[२८] महाशय । धूम्रलोचनः[२९] अभीरु[३०] जय जय ।।
भैरविनाथ[३१] भूतपः[३२] पूरे । योगिनि-पति[३३] धनदः[३४] अति-शूरे ।।
अधनहारि[३५] धनवान[३६] महाशय । प्रतिभावान[३७] नागहारी[३८] जय ।।
नाग-पाश[३९] तुम व्योमकेश[४०] प्रभु । कपालभृत[४१] हे काल[४२] महाप्रभु ।।
कपालमाली[४३] अति-कमनीया[४४] । कलानिधि[४५] त्रय-लोचन[४६] दीया ।।
ज्वलन्नेत्र[४७] त्रिशिखी[४८] त्रय-लोक-प[४९] । तीन-नेत्र-सुत[५०] डिम्भ-शांत[५१] तप ।।
शांत-जन-प्रिय[५२] बटुक[५३] अतिवेशा[५४] । खट्वांगीवरधारक[५५] केशा ।।
भूताध्यक्ष[५६] पशुपति[५७] भिक्षुक[५८] । परिचारक[५९] अति धूर्त[६०] दिगम्बर[६१] ।।
शूर[६२] हरिण[६३] हे ! पांडूलोचन[६४] । पूर्ण प्रशान्त[६५] शांतिदः[६६] शोधन[६७] ।।
शंकरप्रियबांधव[६८] अठ मूरति[६९] । हे निधीश[७०] ! हे ज्ञान[७१] चक्षु ! रति ।।
पूर्ण-तपोमय[७२] अष्टाधारः[७३] । षडाधार[७४] सर्पयुक्त[७५] भारः ।।
शिखी-सखा[७६] भूधर[७७] मतवारे । भूधरा-धीश[७८] भूपति[७९] प्यारे ।।
भूधरात्मज[८०] कंकाल-धारी[८१] । मुण्डी[८२] आन्त्र-यज्ञोपवितारी[८३] ।।
जृम्भण[८४] मोहन[८५] स्तम्भी[८६] मारण[८७] । क्षोभण[८८] शुद्ध निलांजन प्रख्यण[८९] ।।
दैत्यहारि[९०] मुँडभूषित[९१] वलिभुग[९२] । वलिभुङ्नाथ[९३] वाल[९४] सम संयुग ।।
अबाल पराक्रम[९५] सर्वापतिहन[९६] । दुर्ग[९७] दुष्ट भूतनिषेवितन[९८] ।।
कामी[९९] कलानिधी[१००] अति-कान्तः[१०१] । कामिनीवशकृत[१०२] वशी सुशान्तः ।।
जगरक्षाकर[१०३] अनन्त[१०४] स्वामी । माया मंत्रौषधिमय[१०५]-नामी ।।
मम सब सिद्धि प्रद[१०६] हे ! वैद्यः[१०७] । प्रभु-विष्णु[१०८] प्रसन्न हों सद्यः ।।

२. विलोम-पाठ

विष्णु[१०८] प्रभु हे ! वैद्य[१०७] महाशय । मम सब-सिद्धिप्रद[१०६] हे ! अति निर्भय ।।
मायामन्त्रौषधिमय[१०५] सुअनंता[१०४] । जग-रक्षा-कर[१०३] परम सुसन्ता ।।
कामिनी-वश-कृत[१०२] वशी[१०१] कान्त जय । कलानिधि[१००] कामी[९९] प्रभु अतिशय ।।
दुष्टभूत निषेवित[९८] दुर्गः[९७] । सर्वापत्तारण[९६] अति सुर्गः ।।
अबालपराक्रम[९५] बाल[९४] वलीभुग्[९३] । नाथ वलीभुग्[९२] अतिशय युग युग ।।
मुंडभूषितः[९१] दैत्यहा[९०] शूरे । शुद्ध निलांजन[८९] प्रख्य सुपूरे ।।
क्षोभण[८८] मारण[८७] स्तंभी[८६] मोहन[८५] । जृम्भण[८४] आन्त्र यज्ञोपविती[८३] धन ।।
मुंडी[८२] कंकालधारी[८१] सोहै । भूधरात्मज[८०] भूपति[७९] मोहै ।।
भूधर अधीश[७८] भूधर[७७] शिखि मित्रः[७६] । सर्पयुक्त[७५] षडधार[७४] विचित्रः ।।
अष्टाधार[७३] तपोमय[७२] पूरे । ज्ञान चक्षु[७१] हे निधीश[७०] शूरे ।।
अष्टमूर्ति[६९] शंकर-प्रिय-बांधव[६८] । शुद्ध[६७] शान्तिदः[६६] प्रशान्त[६५] साधव ।।
पांडु सुलोचन[६४] हरिण[६३] शूर[६२] प्रभु । पूर्ण दिगम्बर[६१] धूर्त[६०] धन्य विभु ! ।।
परिचारक[५९] भिक्षुक[५८] पशुपति[५७] हे । भूताध्यक्ष[५६] महावल यति हे ।।
खट्वांगी वरधारक[५५] दाता । बहुवेषक[५४] हे ! बटुक[५३] विधाता ।।
शान्तजनःप्रिय[५२] डिम्भ शान्त[५१] जय । तीन-नेत्र-सुत[५०] त्रिलोक पति[४९] जय ।।
शिखि[४८] त्रय ज्वलन्नेत्र[४७] त्रय लोचन[४६] । कलानिधी[४५] कमनीय[४४] सुशोभन ।।
कपालमाली[४३] काल[४२] महान । कपालभृत[४१] व्योमकेश[४०] सुजान ।।
नागपाश[३९] हे नाग सुहारी[३८] । प्रतिभावान[३७] सुधनी[३६] महारी ।।
अधन हारि[३५] धनदायक[३४] स्वामी । योगिनि-पति[३३] भूतप[३२] अति नामी ।।
भैरवनाथ[३१] अभीरु[३०] धूम्र चखु[२९] । कंकाली[२८] असिपाणि[२७] सर्व खलु ।।
शूलपाणि[२६] अति-पिंगल-लोचन[२५] । बहुत-नेत्र[२४] त्रय नेत्र[२३] सुकविजन[२२] ।।
कलाकाष्ठा-तनु[२१] अभिरामा । कालशमन[२०] कंकाल[१९] सुहामा ।।
सिद्धसुसेवित[१८] सिद्धिद[१७] सिद्धः[१६] । पानप[१५] रक्तप[१४] स्मरान्त कृत्द्धः[१३] ।।
खर्पराशी[१२] मांसाशी[११] बिहारी । श्मशानवासी[१०] विराट[९] भारी ।।
क्षत्रिय[८] क्षेत्रद[७] क्षेत्रपाल[६] अति । क्षेत्रज्ञ[५] भूतभावनः[४] संपति ।।
भूतात्मा[३] अरु भूतनाथ[२] जय । बारम्बार नमो हे ! भैरव[१] ।।
पाठ विलोम बटुक भा पूरा । जयति जयति जय भैरव शूरा ।।
दया-दृष्टि हरदम प्रभु राखो । हो प्रसन्न अति आशिष भाखो ।।

॥ कष्टहरं श्रीभैरवाष्टक-स्तोत्रम् ॥

ॐ चण्डं प्रतिचण्डं करधृतदण्डं कृतरिपुखण्डं सौख्यकरं,
लोकं सुखयन्तं विलसितसन्तं प्रकटितदन्तं नृत्यकरम् ।
डमरुध्वनिमन्तं तरलतरं तं मधुरहसन्तं लोकभरं,
भज भज भूतेशं प्रकटमहेशं भैरववेषं कष्टहरम् ॥१॥
चर्चित-सिन्दूरं रणभुवि शूरं दुष्टविदूरं श्रीनिकरं,
किङ्कणिगणरावं त्रिभुवनपावं खर्परसावं पुण्यभरम् ।
करुणामयवेषं सकलसुरेशं मुक्तसुकेशं पापहरं,
भज भज भूतेशं प्रकटमहेशं भैरववेषं कष्टहरम् ॥२॥
कलिमलसंहारं मदनविहारं फणिपतिहारं शीघ्रकरं,
कलुषं शमयन्तं परिभृतसन्तं मत्तछगं तं शुद्धतरम् ।
गतिनिन्दितहंसं नरनुतहंसं स्वच्छशुक सन्-मुण्डकरं,
भज भज भूतेशं प्रकटमहेशं भैरववेषं कष्टहरम् ॥३॥
कठिनस्तनकुम्भं सुकृतसुलम्भं कालीडिम्भं खड्गधरं,
वृतभूतपिशाचं स्फुटमृदुवाचं स्निग्धसुकाचं भक्तभरम् ।
तनुभाजितशेषं विमलसुदेशं सर्वसुरेशं प्रीतिपरं,
भज भज भूतेशं प्रकटमहेशं भैरववेषं कष्टहरम् ॥४॥
ललिताननचन्द्रं सुमुखवितन्द्रं बोधितमन्द्रं श्रेष्ठवरं,
सुखिताखिललोकं परिहृतशोकं शुद्धविलोकं पुष्टिकरम् ।
वरदाभयहारं तरलिततारं क्षुद्रविहारं तुष्टिकरं,
भज भज भूतेशं प्रकटमहेशं भैरववेषं कष्टहरम् ॥५॥
सकलायुधभारं विजनविहारं विश्वविसारं भृष्टमलं,
शरणागतपालं मृगमदभालं संजितकालं स्वेष्टबलम् ।
पदनूपुरशिञ्जं त्रिनयनकञ्जं गुणिजनरञ्जं कुष्ठहरं,
भज भज भूतेशं प्रकटमहेशं भैरववेशं कष्टहरम् ॥६॥
मदयुत-संरावं प्रकटितभावं विश्वसुभावं ज्ञानपदं,
रक्तांशुकजोषं परकृततोषं नाशितदोषं सन्मतिदम् ।
कुटिलभ्रुकुटीकं ज्वरधनवीकं विसरन्ध्रीकं प्रेमभरं,
भज भज भूतेशं प्रकटमहेशं भैरववेषं कष्टहरम् ॥७॥
परिनिर्जितकामं विलसितवामं परमभिरामं योगेशं,
वहुमद्यपनाथं गीत-सुगाथं कृष्टसुनाथं वीरेशम् ।
कलयन्तमशेषं भृतजनदेशं नृत्यसुरेशं दत्तवरं,
भज भज भूतेशं प्रकटमहेशं भैरववेषं कष्टहरम् ॥८॥

—×—

श्री बटुक-भैरव-रहस्यम्

श्रीदेव्युवाच

भगवन् देवदेवेश !, रहस्यं बटुकाय मे।
ब्रूहि येन वशीकुर्यात्, साधको भैरवं शिवम् ॥ १ ॥

श्रीबटुक उवाच

श्रृणु देवि ! परं गोप्यं, कथयामि सुशोभने।
रहस्यं सिद्धिदं साक्षाद्, बटुकस्य महात्मनः ॥ २ ॥
सर्वे वटुकदेवस्य, साधने ये निरूपिताः।
उपाया निष्फला एव, विधानं वीरसाधनम् ॥ ३ ॥
यो वीरसाधनं हित्वा, उपायं चान्यमाश्रयेत्।
न स सिद्धिमवाप्नोति, नरो वर्षशतैरपि ॥ ४ ॥
दक्षिणे भूचरः पातु, वामे पातु सदाशिवः।
केशान् पातु विशालाक्षो, मूर्धानं मे मरुत्प्रियः ॥ ५ ॥
मस्तकं पातु भृग्वीशो, नेत्रं पातु महामनाः।
कपोलौ पातु वीरेशो, गण्डौ गण्डारिमर्दनः ॥ ६ ॥
उत्तरोष्ठं विरूपाक्षो, ह्यधरे योगिनीप्रियः।
दन्ते वक्षसि विध्वंसी, चिबुके पातु कालधृक् ॥ ७ ॥
कण्ठे रक्षतु मे देवो, नीलकण्ठो जगद्गुरुः।
दक्षस्कन्धे गिरीन्द्रेशो, वामस्कन्धे च सुन्दरः ॥ ८ ॥
भुजे च दक्षिणे सर्वमन्त्रनाथः सदाऽवतु।
वामे भुजे सर्वभीमो, हृदयं पातु पाण्डुरः ॥ ९ ॥
दक्षस्तने पशुपतिर्वामे पातु महेश्वरः।
उदरे सर्वकल्याणकारकोऽवतु मां सदा ॥१०॥
नाभौ कामप्रविध्वंसी, जङ्घे पातु महामनाः।
जानुनी पातु यामित्रो, गुल्फौ गौरीपतिः सदा ॥११॥
पादपृष्ठौ ज्ञाननिधिस्तथा पादाङ्गुलीर्हरः।
पादाधः पातु सततं, व्योमकेशो जगत्प्रियः ॥१२॥
इति रक्षां समाधाय, मन्त्ररक्षां ततश्चरेत्।

अथ मन्त्ररक्षा

ॐ ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लः पूर्वे भैरवाय नमः।

ॐ ह्लिं ह्लुं ह्लौं आग्नेये रुरुभैरवाय नमः।

ॐ ह्लीं श्रीं दक्षिणे चण्डभैरवाय नमः।

ॐ ल्हां ग्ल्हूं गल्हं नग नग नैऋत्ये क्रोधभैरवाय नमः।

ॐ प्रूं श्रूं प्रूं सः सः पश्चिमे उन्मत्तभैरवाय नमः।

ॐ ब्रां ब्रां ब्रां वायव्ये कपालभैरवाय नमः।

ॐ भ्रां भ्रां भ्रां उत्तरे भीषणभैरवाय नमः।

ॐ प्रूं प्रूं स्रूं फट् ईशाने संहारभैरवाय नमः।

॥ इति श्रीईश्वरदेवीसंवादे रुद्रयामले तन्त्रे बटुकभैरवरहस्यं सम्पूर्णम् ॥

श्री बटुक-रहस्य का हिन्दी सारार्थ

श्रीबटुक भैरव के लिए नमस्कार है। श्रीभैरव रहस्य प्रारम्भ होता है। श्रीदेवी बोली—

हे देव देवेश भगवान्! मुझे वटुक का रहस्य बताइये जिससे साधक भैरव शिव को वश में कर सके ॥१॥ श्री वटुक बोले—

हे सुन्दरी देवी, सुनो! मैं परम गोपनीय तथा साक्षात् सिद्धि देनेवाले वटुक का रहस्य कहता हूँ ॥२॥

वटुक के साधन में जो सभी उपाय बतलाये गये हैं, वे बिना वीरसाधन विधान के निष्फल ही हैं ॥३॥

जो मनुष्य वीर साधन को छोड़ कर अन्य उपाय का आश्रय लेता है, वह सैकड़ों वर्षों में भी सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकता ॥४॥

दक्षिण में भूचर रक्षा करे, वाम भाग में सदाशिव रक्षा करे। विशालाक्ष केशों की और मरुत्प्रिय भैरव मेरे सिर की रक्षा करे ॥५॥

भृगवीश मस्तक की रक्षा करे, महामना नेत्र की रक्षा करे। दोनों कपोलों की वीरेश और दोनों गण्डस्थलों की गण्डारिमर्दन रक्षा करे ॥६॥

ऊपर के ओष्ठ की विरूपाक्ष, अधरोष्ठ की योगिनीप्रिय, दन्त और वक्षःस्थल की विध्वंसी तथा कालरूपधृक् ठोड़ी की रक्षा करे ॥७॥

जगद्गुरु नीलकण्ठ देव मेरे कण्ठ की रक्षा करे। दाहिने कन्धे की गिरीन्द्रेश और बांए कन्धे की सुन्दर रक्षा करे ॥८॥

दाहिनी भुजा में सर्वमन्त्रों के स्वामी—सर्वमन्त्रनाथ और बाइं भुजा में सर्वभीम सदा रक्षा करे। पाण्डुर नामक भैरव हृदय की रक्षा करे ॥९॥

दाहिने स्तन की पशुपति और बांए स्तन की महेश्वर रक्षा करे। तथा उदर पर सर्व-कल्याणकारक मेरी सदा रक्षा करे ॥१०॥

नाभि पर कामदेव का विनाश करनेवाला तथा दोनों जङ्घाओं पर महामना रक्षा करे ॥११॥

दोनों जानुओं की यामित्र और दोनों गुल्फों की गौरीपति सदा रक्षा करे ॥१२॥

पैरों के पिछले भागों की ज्ञाननिधि, पैरों की अँगुलियों की हर तथा पैरों के नीचे जगत्-प्रिय व्योमकेश सदा रक्षा करे ॥१३॥

इस प्रकार रक्षा करके बाद में मन्त्र रक्षा करे।

मन्त्ररक्षा—पीछे लिखे हुए मन्त्रों को बोलकर जिस-जिस दिशा का संकेत दिया है, उस ओर हाथ जोड़कर प्रणाम करे।

—×—

श्रीबटुक-हृदयम्

कैलाशशिखरासीनं, देवदेवं जगद्गुरुम्।
देवी पप्रच्छ सर्वेशं, शङ्करं वरदं शिवम् ॥१॥
देव्युवाच—देव देव परेशान भक्ताभीष्टप्रदायक!।
प्रब्रूहि मे महाभाग गोप्यं यद्यपि न प्रभो ॥२॥
बटुकस्यैव हृदयं, साधकानां हिताय च।
शिव उवाच—शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि हृदयं बटुकस्य च ॥३॥
गुह्याद्गुह्यतरं गुह्यं तच्छृणुष्व तु मध्यमे।
हृदयस्यास्य देवेशि! बृहदारण्यको ऋषिः ॥४॥
छन्दोऽनुष्टुप् समाख्यातो देवता बटुकः स्मृतः।
प्रयोगाभीष्टसिद्ध्यर्थं विनियोगः प्रकीर्तितः ॥५॥
ॐ प्रणवेशः शिरः पातु ललाटे प्रमथाधिपः।
कपोलौ कामवपुषो भ्रूभागे भैरवेश्वरः ॥६॥
नेत्रयोर्वह्निनयनो नासिकायामघापहः।
ऊर्ध्वोष्ठे दीर्घनयनो ह्यधरोष्ठे भयाशनः ॥७॥
चिबुके भालनयनो गण्डयोश्चन्द्रशेखरः।
मुखान्तरे महाकालो भीमाक्षो मुखमण्डले ॥८॥
ग्रीवायां वीरभद्रोऽव्याद् घण्टिकायां महोदरः।
नीलकण्ठो गण्डदेशे जिह्वायां फणिभूषणः ॥९॥

दशने वज्रदशनो तालुके ह्यमृतेश्वरः।
दोर्दण्डे वज्रदण्डो मे स्कन्धयोः स्कन्धवल्लभः ॥१०॥
कूर्परे कञ्जनयनो फणौ फेत्कारिणीपतिः।
अङ्गुलीषु महाभीमो नखेषु अघहाऽवतु ॥११॥
कक्षे व्याघ्रासनः पातु कट्यां मातङ्गचर्मणो।
कुक्षौ कामेश्वरः पातु बस्तिदेशे स्मरान्तकः ॥१२॥
शूलपाणिर्लिङ्गदेशे गुह्ये गुह्येश्वरोऽवतु।
जङ्घायां वज्रदमनो जघने जृम्भकेश्वरः ॥१३॥
पादौ ज्ञानप्रदः पातु धनदश्चाङ्गुलीषु च।
दिग्वासी रोमकूपेषु सन्धिदेशे सदाशिवः ॥१४॥
पूर्वाशां कामपीठस्थ उड्डीशस्थोऽग्निकोणके।
याम्यां जालंधरस्थो मे नैऋत्यां कोटिपीठगः ॥१५॥
वारुण्यां वज्रपीठस्थो वायव्यां कुलपीठगः।
उदीच्यां वाणपीठस्थ ऐशान्यामिन्दुपीठगः ॥१६॥
ऊर्ध्वं वीजेन्द्रपीठस्थः खेटस्थो भूतलोऽवतु।
रुरुः शयानेऽवतु मां चण्डो वादे सदावतु ॥१७॥
गमने तीव्रनयन आसीने भूतवल्लभः।
युद्धकाले महाभीमो भयकाले भयान्तकः ॥१८॥
रक्ष रक्ष परेशान भीमदंष्ट्र भयापह।
महाकाल महाकाल! रक्ष मां कालसङ्कटात् ॥१९॥
इतीदं हृदयं दिव्यं सर्वपापप्रणाशनम्।
सर्वसम्पत्प्रदं भद्रे सर्वसिद्धिफलप्रदम् ॥२०॥

श्रीवटुक-हृदय का हिन्दी सारार्थ

कैलास पर्वत के शिखर पर बैठे हुए देवदेव जगद्गुरु वरदायक एवं कल्याणकारक सर्वज्ञ भगवान् शंकर से देवी पार्वती ने पूछा ॥१॥

देवी बोली—हे देवाधिदेव, परमेश्वर, भक्तों की इच्छित कामना पूर्ण करने वाले पूज्य प्रभु, यद्यपि गोपनीय है फिर भी साधकों के हित के लिये बटुक का 'हृदय-स्तोत्र' मुझे कहिये ॥२—१/२॥

शिवजी बोले—हे मध्यमे देवि ! मैं तुम्हें 'बटुक-हृदय' कहता हूं जो गुप्त से भी गुप्त है।

हे देव-स्वामिनी, इस हृदय के वृहदारण्यक ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द है, श्रीबटुक-भैरव देवता हैं तथा अभीष्ट प्रयोग की सिद्धि के लिये विनियोग कहा गया है ।।४-५।।

अर्थात्— अस्य श्रीबटुकहृदयस्य वृहदारण्यक ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः श्रीवटुकभैरवो देवता ममाभीष्टसिध्यर्थं पाठे विनियोगः । 'इतना बोलकर विनियोग करे ।'

[इसके पश्चाद् नीचे लिखे अनुसार तत्त्वमुद्रा से न्यास करते हुए सूचित स्थानों का स्पर्श करे ।]

देहन्यास

प्रणवेश सिर की रक्षा करे । प्रमथाधिप ललाट की, कामवपुष् कपोलों की, भैरवेश्वर भ्रू भाग पर, वह्निनेत्र दोनों नेत्रों पर, अघापह नासिका पर, दीर्घनयन ऊर्ध्वोष्ठ पर, भयाशन अधरोष्ठ पर, भालनयन ठोड़ी पर, चन्द्रशेखर दोनों गण्डस्थलों पर, महाकाल मुख के अन्दर, भीमाक्ष मुखमण्डल पर, वीरभद्र गले पर तथा महोदर कण्ठमणि पर रक्षा करे । नीलकण्ठ कण्ठ पर, फणिभूषण जीभ पर, वज्रदन्त दांतों पर, अमृतेश्वर तालु पर, वज्रदण्ड दोनों भुज-दण्डों पर, स्कन्दवल्लभ दोनों कन्धों पर, कञ्जनयन दोनों कोहनियों पर, फेत्कारिणीपति फणि-मणिवन्धों पर, महाभीरु अँगुलियों पर और मखहा नखों की रक्षा करे ।।६-११।।

व्याघ्रासन वक्ष में, मतंगचर्मणी कटि में, कामेश्वर कुक्षियों में तथा स्मरान्तक बस्ति-प्रदेश में रक्षा करे ।।१२।।

शूलपाणि लिंगदेश में और गुह्येश्वर गुह्य भाग में रक्षा करे । वज्रदमन जंघा पर, जृम्भकेश्वर जघन पर, ज्ञानप्रद दोनों पैरों पर, धनद सभी पैर की अँगुलियों पर रक्षा करे । दिग्वासी रोमकूपों पर और सदाशिवसन्धि स्थलों पर रक्षा करे ।। १३-१४।।

दिग्रक्षा—

कामपीठस्थ पूर्व में, उड्डीशस्थ अग्निकोण में, जालन्धरस्थ दक्षिण में, कोटिपीठस्थ नैर्ऋत्य में, वज्रपीठस्थ पश्चिम में, कुलपीठस्थ वायव्यमें, गणपीठस्थ उत्तर में, इन्दुपीठस्थ ऐशान्य में, वीजेन्द्रपीठस्थ ऊपर तथा खेटस्थ भूतल पर मेरी रक्षा करे । रुरुभैरव सोते हुए मेरी रक्षा करे । चण्डभैरव वाद-विवाद में सदा रक्षा करे ।।१५-१७।।

तीव्रनयन जाते समय, भूतवल्लभ बैठे रहने पर, महाभीम युद्धकाल में तथा भयान्तक भयकाल में रक्षा करे ।।१८।।

हे परमेश्वर, भीमदंष्ट्र, भयहारी रक्षा करो । रक्षा करो । हे महाकाल ! हे काल के भी काल ! यमराज के संकट से मेरी रक्षा करो ।।१९।।

यह 'बटुक-हृदय' स्तोत्र दिव्य है, सब पापों का नाश करनेवाला है । हे भद्रे: यह सब सम्पत्तियों को देनेवाला तथा सर्वसिद्धिरूप फल को देने वाला है ।।२०।।

१—श्रीबटुक-भैरव-ब्रह्म कवचराजः

[भगवती पार्वती द्वारा हठपूर्वक 'भैरव-कवच' के पूछने पर भगवान् शंकर ने कृपा करके जो बटुकभैरव ब्रह्म कवच बतलाया था, वह इस प्रकार है—]

अथ विनियोगः—

(अस्य श्रीबटुकभैरवकवचराजस्य भैरवऋषिरनुष्टुप्छन्दो बटुकभैरवो देवता मम सर्वार्थसाधने विनियोगः।)

(इतना कहकर विनियोगार्थ जल छोड़ें तथा नीचे लिखे श्लोकों को बोलते हुए उन-उन सूचित स्थानों पर तत्त्वमुद्रा से स्पर्श करते हुए न्यास करें अथवा केवल भावना-पूर्वक पाठ करें।)

ॐ पातु शिरसि नित्यं पातु ह्रीं कण्ठदेशके।
बटुकं पातु हृदये आपदुद्धारणाय च ॥१॥
कुरुद्वयं मे लिङ्गस्य आधारे वटुकाय च।
सर्वदा पातु ह्रीं बीजं बाह्वोर्युगलमेव च ॥२॥
षडङ्गसहितो देवो नित्यं रक्षतु भैरवः।
ॐ ह्रीं बटुकाय सततं सर्वाङ्गे मम सर्वदा ॥३॥
ॐ ह्रीं कालाय पादयोः पातु पातु वीरासनं हृदि।
ॐ ह्रीं महाकालः शिरः पातु कण्ठदेशे तु भैरवः ॥४॥
दण्डपाणिर्गुह्यमूले भैरवी-सहितस्ततः।
ललिताभैरवः पातु अष्टाभिः शक्तिभिः सह ॥५॥
विश्वनाथः सदा पातु सर्वाङ्गे मम सर्वदा।
अन्नपूर्णा सदा पातु अंसं रक्षतु चण्डिका ॥६॥
असिताङ्गः शिरः पातु ललाटं पातु भैरवः।
चण्डभैरवः पातु वक्त्रे कण्ठे श्रीक्रोधभैरवः ॥७॥
मूलाधारं भीषणश्च बाहुयुग्मं च भैरवः।
हंसबीजं पातु हृदि सोऽहं रक्षतु प्राणयोः ॥८॥
प्राणापानसमानं च उदानं व्यानमेव च।
रक्षन्तु द्वारमूले तु दशदिक्षु समन्ततः ॥९॥
प्रणवः पातु सर्वाङ्गं लज्जाबीजं महाभये।
इति श्रीब्रह्मकवचं भैरवस्य प्रकीर्तितम् ॥१०॥

२–भैरव-तन्त्रोक्तं श्रीबटुक-भैरव-कवचम्

ॐ सहस्रारे महाचक्रे कर्पूरधवले गुरुः।
पातु मां बटुको देवो भैरवः सर्वकर्मसु ॥१॥
पूर्वस्यामसिताङ्गो मां दिशि रक्षतु सर्वदा।
आग्नेय्यां च रुरुः पातु दक्षिणे चण्डभैरवः ॥२॥
नैर्ऋत्यां क्रोधनः पातु उन्मत्तः पातु पश्चिमे।
वायव्यां मां कपाली च नित्यं पायात् सुरेश्वरः ॥३॥
भीषणो भैरवः पातु उत्तरस्यां तु सर्वदा।
संहारभैरवः पायादीशान्यां च महेश्वरः ॥४॥
ऊर्ध्वं पातु विधाता च पाताले नन्दको विभुः।
सद्योजातस्तु मां पायात् सर्वतो देवसेवितः ॥५॥
रामदेवो वनान्ते च वनेऽघोरस्तथाऽवतु।
जले तत्पुरुषः पातु स्थले ईशान एव च ॥६॥
डाकिनीपुत्रकः पातु पुत्रान् मे सर्वतः प्रभुः।
हाकिनीपुत्रकः पातु दारांस्तु लाकिनी सुतः ॥७॥
पातु शाकिनिकापुत्रः सैन्यं वै कालभैरवः।
मालिनीपुत्रकः पातु पशूनश्वान् गजांस्तथा ॥८॥
महाकालोऽवतु क्षेत्रं श्रियं मे सर्वतो गिरा।
वाद्यं वाद्यप्रियः पातु भैरवो नित्यसम्पदा ॥९॥[1]

---

१. तन्त्रों में अनेक कवच-स्तोत्रों के पाठ प्राप्त होते हैं, उनमें से यहां दो कवच-पाठ दिये गये हैं। इनमें से किसी एक का पाठ करें। इनकी भाषा सरल है अतः यहां इनका हिन्दी अर्थ भी नहीं दिया गया है।

[१]

श्रीबटुकभैरव-सहस्रनामस्तोत्रम्

भैरवतन्त्र में वर्णित श्रीबटुकभैरवसहस्रनाम स्तोत्र यहाँ दिया जा रहा है। जो भक्त जन इस दुर्लभ सहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करते हैं, उन पर भगवान् बटुकभैरव प्रसन्न होकर उन्हें इच्छित फल प्रदान करते हैं।

इस स्तोत्र का पाठ करने के लिए किसी विशेष प्रकार के न्यास अथवा पूजन की आवश्यकता नहीं है। शरीर को कष्ट दिये विना एवं धन खर्च बिना किये ही यह स्तोत्र समस्त मनःकामनाओं को पूर्ण करनेवाला कहा गया है।[1]

॥ अथ स्तोत्रम् ॥

ईश्वर उवाच

देवेशि भक्तिसुलभे देवनायकवन्दिते।
भक्तानां कार्यसिद्ध्यर्थं निदानं ब्रूहि तवत्त्तः॥
विनैव न्यासजालेन पूजनेन विना भवेत्।
विना कायादिक्लेशेन वित्तव्ययं विनेश्वरि॥

भावार्थ—ईश्वर (शिवजी) ने कहा—हे देवपूजिते देवि! न्यास एवं पूजनादि की क्रियाओं के विना, शरीर को कष्ट दिये विना तथा धन खर्च किये विना ही भक्तों की मनोकामना जिससे सिद्ध हो जाती है, उस उपाय को कहो।

देव्युवाच

ॐ अस्य श्रीवटुकभैरवसहस्रनामस्तोत्रमन्त्रस्य ब्रह्मानन्दभैरव ऋषिः। त्रिष्टुप् छन्दः। बटुकभैरवो देवता। वं बीजम्। ह्रीं शक्तिः। सर्वाभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

---

१. सहस्रनाम से सम्बद्ध विशेषज्ञान के लिये परिचय-विभाग देखें। वटुक-भैरव के अनेक सहस्रनाम हैं, उनमें से यह पहला है तथा आगे एक और दिया जा रहा है। इनमें से किसी एक का पाठ करें।

॥ अथ न्यासः ॥

ॐ ह्रां बां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।
ॐ ह्रीं वीं तर्जनीभ्यां नमः।
ॐ ह्रूं बूं मध्यमाभ्यां नमः।
ॐ ह्रैं बैं अनामिकाभ्यां नमः।
ॐ ह्रौं बौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः।
ॐ ह्रः बः करतलकरपृष्ठभ्यां नमः।
(एवं हृदयादि।)

अथ ध्यानम्

उद्यद्भास्करसन्निभं त्रिनयनं रक्ताङ्गरागस्रजं,
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः।
नीलग्रीवमुदार-कौस्तुभधरं शीतांशुचण्डोज्ज्वलं,
बन्धूकारुणवाससं भयहरं देवं सदा भावये॥

अथ सहस्रनामानि

ॐ ह्रीं बटुकः कामदो नाथोऽनाथप्रियप्रभाकरः
भैरवो भीतिहा दर्पः कन्दर्पो मीनकेतनः॥१॥
रुद्रो बटुकभूतीशो भूतनाथः प्रजापतिः।
दयालुः क्रूर ईशानो जनीशी लोकवल्लभः॥२॥
देवो दैत्येश्वरो वीरो वीरवन्द्यो दिवाकरः।
बलिप्रियः सुरश्रेष्ठः कनिष्ठो नैष्ठिकः शिशुः॥३॥
महाबलो महातेजा वित्तजो द्युतिवर्द्धनः।
तेजस्वी वीर्यवान् वृद्धो विवृद्धो भूतनायकः॥४॥
बालकः पालकः कामो विकामः काममर्द्दनः।
कालिकारमणः कालीनायकः कालिकाप्रियः॥५॥

१—इस प्रकार श्रीवटुकभैरव का ध्यान करके श्रीवटुकभैरव के सहस्रनामों का पाठ करे। (चूंकि इन श्लोकों में श्री बटुकभैरव के १००० नाम आये हैं और वे अलग-अलग स्पष्ट हैं, अतः उनकी अलग से हिन्दी टीका नहीं दी जा रही है।)

कालीशः कालिकाकान्तः कालिकानन्दवर्धनः।
कालिकाहृदयज्ञानी कालिकातनयो नयः ॥६॥
खगेशः खेचरः खेटो विशिष्टः खेटकप्रियः।
कुमारः क्रोधनः कालीप्रियः पर्वतरक्षकः ॥७॥
गणेज्यो गणपो गूढो गूढप्रायो गणेश्वरः।
गणनाथो गणश्रेष्ठो गणमुख्यो गणप्रियः ॥८॥
घोरनादो घनश्यामो घनस्वामी घनान्तकः।
चम्पकाभश्चिरञ्जीवी चारुवेषश्चराचरः ॥९॥
चिन्त्योऽचिन्त्यगुणो धीमान् सुचित्तस्थश्चितीश्वरः।
छत्री छत्रपतिश्छत्ता छिन्ननासा-मनःप्रियः ॥१०॥
छिन्नाभश्छिन्नसन्तापश्छद्दीराच्छर्दिनान्तकः ।
जेता जिष्णुर्जहीशानो जनानन्दो जनेश्वरः ॥११॥
जनको जनसन्तोषो जनजाय - विनाशनः।
जालन्धरो जनाराध्यो जनाध्यक्षो जनप्रियः ॥१२॥
जीवहा जीवदो जन्तुर्जीवनाथो जलेश्वरः।
जयदो जित्वरो जिह्मो जयश्रीर्जयवर्धनः ॥१३॥
जयभूमिर्जयाकारो जयहेतुर्जयेश्वरः।
झंकारकृदनन्तात्मा झंकार - हेतुरात्मभूः ॥१४॥
झञ्योश्चरि - हरीभर्त्ता विभर्त्ता भृत्यकेश्वरः।
टीत्कारहृदमेयात्मा टङ्केशष्टङ्कनायकः ॥१५॥
ठकारभूष्ठरन्ध्रीशो गिरिष्ठष्ठकुरः पतिः।
ढुण्ढिर्ढक्काप्रियः पान्थो ढुण्ढिराजो निरन्तकः ॥१६॥
ताम्रस्तमीश्वरस्तोता तीर्थराजस्तडित्प्रभः।
त्रियक्षस्त्र्यक्षकस्तम्भस्तार्क्षकस्तम्भटेश्वरः ॥१७॥
स्थलस्थः स्थावरः स्थाता स्थिरबुद्धिः स्थिरेन्द्रियः।
स्थिरज्ञानी स्थिरप्रीतिः स्थिरस्थितिः स्थिराशयः ॥१८॥
दामो दामोदरो दम्भो दाडिमीकुसुमप्रियः।
दारिद्र्यहा दमी दिव्यो दिव्यदेहो दिनप्रभुः ॥१९॥

दिनकरो दिवानाथो दिवसेशो दिवाकरः ।
दीर्घश्चरो दलज्योतिर्दलेशो दलसुन्दरः ॥२०॥
दलप्रियो दलाभासो दलपूज्यो दलप्रभुः ।
दलकान्तिर्दलाकारो दलसेव्यो दलार्चितः ॥२१॥
दीर्घबाहुर्दलश्रेष्ठो दललुब्धो दलाकृतिः ।
दानवश्यो दयासिन्धुर्दयालुर्दीनवल्लभः ॥२२॥
धनेशो धनदो धर्मो धनराजो धनप्रभुः ।
धनप्रदो धनाध्यक्षो धनमान्यो धनञ्जयः ॥२३॥
धीवरो धातुको धाता ध्रुवो धूमलवर्धनः ।
धनिष्ठो धवलच्छत्री धनकाम्यो धनेश्वरः ॥२४॥
धीरो धीरतरो धेनुर्धीरेशो धरणीप्रभुः ।
धराधीशो धरानाथो धरणीनायको धरः ॥२५॥
धराकान्तो धरापालो धरणीजनवल्लभः ।
धराधरोऽ धरो धृष्ठो धृतराष्ट्रो धनीश्वरः ॥२६॥
नारदो नीरदो नेता नीतिपूज्यो नतिप्रियः ।
नीतिलभ्यो नतीशानो नीतिलब्धो नतीश्वरः ॥२७॥
पार्थिवः पार्थसम्पूज्यः पार्थदः प्रणतः पृथुः ।
पृथिवीशः पृथासूनुः पृथिवीभृत्य ईश्वरः ॥२८॥
पुराणः पारदः पान्थः पाञ्चालीपावकः प्रभुः ।
पूर्वः सुरपतिः श्रेयान् प्रीतिदः प्रीतवर्द्धनः ॥२९॥
पार्वतीशः परेशानः पार्वतीहृदयप्रियः ।
पार्वतीरमणः पूतः पवित्रः पापनाशनः ॥३०॥
पात्री पत्रालिसन्तुष्टः परितुष्टः पुमान् प्रियः ।
पर्वेशः पर्वताधीशः पर्वतो नायकात्मजः ॥३१॥
फाल्गुनस्तु फणानाथः फणीशः फणरक्षकः ।
फणीपतिः फणीशानः फणराजः फणाकृतिः ॥३२॥
बलभद्रो बली बालो वलधीर्बलबर्द्धनः ।
बलप्राणो बलाधीशो बलिदान-प्रियंकरः ॥३३॥

बलिराजो बलिप्राणो बलिनाथो बलप्रियः।
बलीवरश्च बालेशो बालक-प्रियदर्शनः ॥३४॥
भद्रो भद्रपदो भीमो भीमसेनो भयंकरः।
भव्यो भव्यप्रियो भूतपतिर्भूविनायकः ॥३५॥
भूतेशो भूतिदो भर्गो भूतभव्यो भवेश्वरः।
भवानीशो भवेशानो भवानीनायकोऽर्भकः ॥३६॥
मकारो माधवो मीनो मीनकेतुर्महेश्वरः।
महेषुर्मदनो मन्थो मिथुनेशोऽमराधिपः ॥३७॥
मरीचिर्मञ्जुलो मोहो मोहहा मोहमर्दनः।
मोहको मोहनो मेधाप्रियो मोहविनाशकः ॥३८॥
महीपतिर्महीशानो महीराजो मनोहरः।
महीश्वरो महीपालो महीनाथो महीप्रियः ॥३९॥
महीधरो महादेवो मनुराजो मनुप्रियः।
मौनी मौनधरो मेघो मन्दारो मतिवर्द्धनः ॥४०॥
मतिदो मन्थरो मन्त्रो मन्त्रीशो मन्त्रनायकः।
मेधावी मानदो मानी मानहा मानमर्दनः ॥४१॥
मीनगो मकराधीशो मधुरो मणिरञ्जितः।
मणिरम्यो मणिभ्राता मणिमण्डन-मण्डितः ॥४२॥
मन्त्रपो मन्त्रदो मुग्धो मोक्षदो मोक्षवल्लभः।
मल्लो मल्लप्रियो मञ्चो मल्लको मेलनप्रभुः ॥४३॥
मल्लिको मल्लिकागन्धी मल्लिका-कुसुमप्रियः।
मालतीशो मघानाथोऽमोघमूर्तिर्मघेश्वरः ॥४४॥
मूलाभो मूलहा मूलो मूलदो मूलमत्सरः।
माणिक्यरोचिः सम्मुग्धो मणिकूटो मणिप्रियः ॥४५॥
मुकुन्दो मदनो मन्दो मन्दवन्द्यो मनुप्रभुः।
मनःस्थो मेनकाधीशो मेनकाप्रियर्शनः ॥४६॥
यमो यामो यमीदेवो यादवो यदुनायकः।
याचको याज्ञिको यज्ञो यज्ञेशो यज्ञवर्धनः ॥४७॥

रमापती रमाधीशो रमेशो रामवल्लभः।
रमापती रमानाथो रमाकान्तो रमेश्वरः ॥४८॥
रेवती-रमणो रामो रमेशो रामनन्दनः।
रमामूर्ती रतीशानो राकाया नायको रविः ॥४६॥
लक्ष्मीधरो ललज्जिह्वो लक्ष्मीवीजजपे रतः।
लम्पटो लम्बराजेशो लम्बोदरो लकारभूः ॥५०॥
वामनो वल्लभो वन्द्यो वनमाली वनेश्वरः।
वनस्थो वनगो विन्ध्यो विन्ध्यराजो वनाह्वयः ॥५१॥
वनेचरो वनाधीशो वनमाला - विभूषणः।
वेणुप्रियो वनाकारो वनाराध्यो वनप्रभुः ॥५२॥
शम्भुः शङ्कर - सन्तुष्टः शम्वरारिः शरासनः।
शवरीप्रणतः शालः शिलीमुखध्वनिप्रियः ॥५३॥
शकुलः शल्लकः शीतः शीतरश्मिः सितांशुकः।
शीलदः शीकरः शीलः शीलशीली शनैश्चरः ॥५४॥
सिद्धः सिद्धिकरः साध्यः सिद्धिभूः सिद्धिभावनः।
सिद्धान्तवल्लभः सिन्धुः सिन्धुतीर - निषेवितः ॥५५॥
सिन्धुपतिः सरोधीरः सरसीरुह-लोचनः।
सरित्पतिः सरित्संस्थः सरः सिन्धुः सरोवरः ॥५६॥
सखा वीरपतिः सूतः सचेताः सत्पतिः सितः।
सिन्धुराजः सदाभूतः सदाशिवः सताम्पतिः ॥५७॥
सदीशः सदनः सूरिः सेव्यमान-सतीपतिः।
सूर्यः सूर्यपतिः सेव्यः सेवाप्रियः सनातनः ॥५८॥
सतीशः सरसीनाथः सतीराजः सतीश्वरः।
सतीप्राणः सतीनाथः सतीसेव्यः सतीपतिः ॥५६॥
सिद्धराजः सतीतुष्टः सचिवः सव्यवाहनः।
सतीनायक - सन्तुष्टः सव्यसाची सुमन्तकः ॥६०॥
सच्चित्तः सर्वसन्तोषी सर्वारामः सुसिद्धिदः।
सर्वाराध्यः सचिवाख्यः सतीपतिसुसेवितः ॥६१॥

सागरः सगरः सार्थः समुद्रः समुद्रप्रियः।
समुद्रतीरसन्तुष्टः समुद्रप्रियदर्शनः ॥६२॥
समुद्रीशः सरोनाथः सरसिज - विलोचनः।
सरसीजलदाकारः सरसीजलदार्चितः ॥६३॥
सामुद्रिकः समुद्रात्मा साध्यमानः सुरेश्वरः।
सुरसेव्यः सुरेशानः सुरनाथः सुरार्चितः ॥६४॥
सुराध्यक्षः सुराराध्यः सुरवन्द्यविशारदः।
सुरमुख्यः सुरप्रायः सुरसिन्धुनिवासवान् ॥६५॥
सुधाप्रियः सुधाधीशः सुधाराध्यः सुधापतिः।
सुधानाथः सुधाभूतः सुधासागर - सेवितः ॥६६॥
हाटको हीरको हन्ता हीरकस्य रुचिः प्रभुः।
हव्यवाहो हरिद्राभो हरिद्रारसमर्दनः ॥६७॥
हेतिर्हेतुर्हरिस्त्राता हरिनाथो हरिप्रियः।
हरिपूज्यो हरिप्राणो हरहृष्टो हरीन्द्रकः ॥६८॥
हरीशो हन्तृको हीरो हरिनामपरायणः।
हरिमुग्धो हरीरम्यो हरिदासो हरिश्वरः ॥६९॥
हरो हरिपतिर्हारो रोहिणीचित्तहारकः।
हरिहितो हरिप्राणो हरिवाहन - शोभनः ॥७०॥
हासो हासप्रियो हूहूर्हुतभुग् हुतवाहनः।
हुताशनो हली हक्को हालाहल-हलायुधः ॥७१॥
हलाकारो हलीशानो हलिपूज्यो हलिप्रियः।
हरपुत्रो हरोत्साहो हरसूनुर्हरात्मजः ॥७२॥
हरवन्द्यो हराधीशो हरातङ्को हराकृतिः।
हरमान्यो हराङ्कस्थो हरवैरि - विनाशनः ॥७३॥
हरशत्रुर्हरामर्षोऽहंकारो हरिणीप्रियः।
हाटकेशो हटेशानो हाटकप्रियदर्शनः ॥७४॥
हाटको हाटक-प्राणो हाटभूषणभूषितः।
हेतिदो हन्तको हंसो हंसगतिर्हराह्वयः ॥७५॥

हंसीपतिर्हरोन्मत्तो हंसीशो हरवल्लभः।
हरपुष्पप्रभो हंसीप्रियो हंसविलासकः ॥७६॥
हरबीजरतो हारी हरितो हरिताम्पतिः।
हरित्प्रभुर्हरित्पालो हरिरन्तरनायकः ॥७७॥
हरिद्दिशो हरित्प्राणो हर्रप्रियः प्रियो हितः।
हेरम्बो हुँकृति - क्रुद्धो हेरम्बानन्दनो हठी ॥७८॥
हेरम्बप्राण — संहर्ता हेरम्ब — हृदयप्रियः।
क्षमापतिः क्षणः क्षान्तः क्षुरधारः क्षितीश्वरः ॥७९॥
क्षितीशः क्षितितः क्षीणः क्षितिपालः क्षितिप्रभुः।
क्षितीशानः क्षितिप्राणः क्षितिनायकसत्प्रियः ॥८०॥
क्षितिराजः क्षणाधीशः क्षणपतिः क्षणेश्वरः।
क्षणप्रियः क्षमानाथः क्षणदानायकः प्रियः ॥८१॥
क्षणिकः क्षणदाधीशः क्षणदाप्राणदः क्षमी।
क्षमः क्षोणिपतिः क्षोभः क्षोभकारी क्षमाप्रियः ॥८२॥
क्षमाशीलः क्षमारूपः क्षमामण्डनमण्डितः।
क्षमानाथः क्षमाधारः क्षमाकारीः क्षमाकरः ॥८३॥
क्षेमः क्षीणरजाः क्षुद्रः क्षद्रपान — विशारदः।
क्षुद्रेशानः क्षणाकारः क्षीरपानकतत्परः ॥८४॥
क्षीरशायी क्षणेशानः क्षोणिभृत्क्षणदोत्सवः।
क्षेमंकरः क्षमालुब्धः क्षमाशास्त्र - विशारदः ॥८५॥
क्षमीश्वरः क्षमाकामः क्षमाहृदयमण्डनः।
नीलाद्रिरुचिराशीशो नीलपर्वत - सन्निभः ॥८६॥
नीलमणिप्रभारम्यः शशिभूषण - भूषितः।
शशधरः शरीभूतो मुण्डमाला - विभूषितः ॥८७॥
मुण्डस्थो मुण्ड - सन्तुष्टो मुण्डमालाधरोऽनघः।
दिग्वासा विदिगाकारो दिगम्बरवरप्रदः ॥८८॥
दिगम्बरीश आनन्दो दिगम्बर - तनूद्भवः।
पिङ्गलैकजटो धृष्टो डमरुवादनप्रियः ॥८९॥

सृणीकर: सृणीशान: खड्गधृक् खड्गपालक:।
शूलहस्तो मतङ्गाभो मातंगोत्सवसुन्दर: ॥९०॥
अभयङ्कर ऊर्वङ्गो लंकापति-विनाशन:।
नगाशयो नगेशानो नागमण्डन-मण्डित: ॥९१॥
नगाकारो नगाधीशो नगशायी नगप्रिय:।
घटोत्सवो घटाकारो घण्टावाद्य- विशारद: ॥९२॥
कपालपाणिरम्बेश: कपालासनसादन:।
पद्मपाणि: - कृपालश्च त्रिनेत्रो नागवल्लभ: ॥९३॥
किंकिणीजालसन्तुष्टो जलप्रायो जलाकर:।
अपमृत्युहरो मायामोहमूल - विनाशन: ॥९४॥
आयुध: कमलानाथ: कमलाकान्तवल्लभ:।
राज्यदो राजराजेशो राजीवपट्ट - शोभन: ॥९५॥
डाकिनीनायको नित्यो नित्यधर्मपरायण:।
डाकिनीहृदयज्ञानी डाकिनीदेहनाशक: ॥९६॥
डाकिनी - प्राणद: शुद्ध: श्रद्धेयचरितो विभु:।
हेमप्रभो हिमेशानो हिमानीप्रियदर्शन: ॥९७॥
हेमदो मर्मदो. नामी नामधेयो नगात्मज:।
वैकुण्ठो वासुकीप्राणो वासुकी - कण्ठभूषण: ॥९८॥
कुण्डलीशो मखध्वंसी मखराजो मखेश्वर:।
मखाकारो मखाधीशो मखमाला - विभूषण: ॥९९॥
अम्बिकावल्लभो वाणीपतिर्वाणी - विशारद:।
वाणीशो वाच: प्राणश्च वच:स्थो वचन - प्रिय: ॥१००॥
वेलाधरो दिशामीशो दिङ्नागो हि दिगीश्वर:।
दूर्वाप्रियो दुराराध्यो दारिद्रय - भयभञ्जन: ॥१०१॥
तर्कस्तर्कप्रियस्तर्क्यो वितर्क्कस्तर्कवल्लभ:।
तर्कसिद्धोऽतिसिद्धात्मा सिद्धदेहो गुहाशय: ॥१०२॥
ग्रहगर्भो ग्रहेशानो गन्धगन्धी विशारद:।
मङ्गलो मङ्गलाकारो मङ्गलवाद्य-वादक: ॥१०३॥

मङ्गलीशो विमानस्थो विमानो नैकनायकः।
बुधेशो बिबुधाधीशो बुधवारो बुधाकरः ॥१०४॥
बुधनाथो बुधप्रीतो बुधवन्द्यो बुधाधिपः।
बुधसिद्धो बुधप्राणो बुधवुद्धो बुधप्रियः ॥१०५॥
सोमप्रभो मनःसिद्धो मनोज - प्राणनाशनः।
सोमेशो मशकाकारो सोमपाः सोमनायकः ॥१०६॥
कामगः कामहा बौद्धः कामनाफलदोऽधिपः।
त्रिदशो दशरात्रेशो दशानन - विनाशनः ॥१०७॥
लक्ष्मणो लक्ष्यसम्भर्त्ता लक्ष्यसंख्यो मनःप्रियः।
विभावसुर्नलेशानो नायको नगजाप्रियः ॥१०८॥
नलकान्तिर्नलोत्साहो नरदेवो नराकृतिः।
नरपतिर्नरेशानो नारायण - नरेश्वरः ॥१०९॥
अनिलो मारुतो मांसो मांसैककरसेवितः।
मरीचिरमरेशानो मागधो मगधप्रभुः ॥११०॥
सुन्दरो सेवकोद्धारी द्वारदेशनिवासनः।
देवकीगर्भसञ्जातो देवकी - सेवकः कुहूः ॥१११॥
बृहस्पतिः कविः शुक्रः शारदासाधकप्रियः।
शारदासाधकः प्राणः शारदासेवकोत्सुकः ॥११२॥
शारदासाधक—श्रेष्ठो वीतरागो गजप्रभुः।
मांसप्रियो मधुप्राणो मधुमांस - महोत्सवः ॥११३॥
मधुपो मधुपश्रेष्ठो मधुपानसदारतिः।
मोदकादान - सम्प्रीतो मोदकामोदमोदितः ॥११४॥
आमोदामोदितो नन्दो नन्दिकेशो नदेश्वरः।
नदीप्रियो नदीनाथो नदीतीररुहस्तपाः ॥११५॥
तपनस्तापनस्ताम्रतापहा तापकारकः।
पतंगो गोमुखो गौरो गोपालो गोपवर्द्धनः ॥११६॥
गोपतिर्गोपसंहर्ता गोवृन्दैकप्रियोऽतिगः।
गर्विष्ठो गुणरम्यश्च गुणसिन्धुर्गुरुप्रियः ॥११७॥

गुणपूज्यो गुणोपेतो गुणवाद्यो गुणोत्सुकः।
गुणीशः केवलो गर्भः सुगर्भो गर्भरक्षकः॥११८॥
गाम्भीर्यधारको धर्त्ता विधर्ता धर्मपालकः।
जगदीशो जगन्मित्रो जगत्त्राता जगत्प्रभुः॥११९॥
जगद्धाता जगद्भोक्ता जगज्जाप्यविनाशनः।
जगत्कर्ता जगद्धर्ता जगज्जीवन-जीवनः॥१२०॥
मालतीपुष्प - सुप्रीतो मालती - कुसुमोत्सवः।
मालतीकुसुमाकारो मालती - कुसुमप्रभुः॥१२१॥
रसालमञ्जरीरम्यो रसगन्ध - निषेवितः।
रसालमञ्जरीलुब्धो रसालतरुवल्लभः॥१२२॥
रसालतरुवासी वै रसालफलसुन्दरः।
रसालरससन्तुष्टो रसालरसलालसः॥१२३॥
केतकी - पुष्पसन्तुष्टो केतकीगर्भसम्भवः।
केतकीपत्र - संकाशः केतकी - प्राणनाशनः॥१२४॥
गर्त्तस्थो गर्त्तगम्भीरो गर्त्तेशो गर्त्तनायकः।
गर्त्तगेशोऽतिगर्त्तस्थो गर्त्तक्षीरनिवासकः॥१२५॥
गणसेव्यो गणाध्यक्षो गणराजो गणाह्वयः।
आनन्दभैरवो भीरुर्भैरवेशो रुरुर्भगः॥१२६॥
सुब्रह्मभैरवो वामभैरवो भूतभावनः।
भैरवी - तनयो देवीपुत्रः पर्वतसम्भवः॥१२७॥

यहां तक श्री वटुकभैरव के सहस्रनाम कहे गये हैं। इसके पश्चात् इस 'श्री-बटुक-भैरव-सहस्रनाम' के स्तोत्र के पाठ का फल कहा जाता है —

नाम्नाऽनेन सहस्रेण स्तुत्वा वटुकभैरवम्।
लभते ह्यतुलां लक्ष्मीं देवानामपि दुर्लभाम्॥१२८॥
उपदेशं गुरोर्लब्ध्वा योगे त्रिमंगली भवेत्।
अष्टम्यां वा चतुर्दश्यां वासरे भूमिसम्भवे॥१२९॥
शुक्रे वा रविसंक्रांतौ योगोऽयमुत्तमः प्रभो।
तस्मिन् योगे महेशानि सर्वसिद्धिमवाप्नुयात्॥१३०॥

लक्षमावर्त्तयेन्मन्त्री मन्त्रराजं नगेश्वरि।
नित्यकर्म सुसिद्ध्यर्थं तत्फलं लभते ध्रुवम् ॥१३१॥
स्तवमेनं-पठेन्मन्त्री पाठयन् वा यथाविधि।
दुर्लभां लभते सिद्धिं सर्वदेव-नमस्कृताम् ॥१३२॥
न प्रकाश्यं च पुत्रेषु भ्रष्टेषु तु कदाचन।
अन्यथा सिद्धिरोधः स्याद्वातुलो वा भवेत्प्रियः ॥१३३॥
स्तवस्यास्य प्रसादेन देवनायकवत्प्रियः।
संग्रामे विजयेच्छत्रून्मातंगानिव केसरी ॥१३४॥
राजानं वशयेत्सद्यो देवानपि वशं नयेत्।
किं वा परं फलं नाथ स्तवराजस्य कथ्यताम् ॥१३५॥
यद्यन्मनसि संकल्प्य स्तवमेनमुदीरयन्।
तत्तदाप्नोति देवेश वटुकस्य प्रसादतः ॥१३६॥
आपदां हि विनाशाय कारणं कान्त-दुर्लभम्।
देवासुररणे घोरे देवानामुपकारकम् ॥१३७॥
प्रकाशितं मया नाथ तन्त्रे भैरवदीपके।
अपुत्रो लभते पुत्रं षण्मासान्निरतो नरः ॥१३८॥
पठित्वा पाठयित्वाऽपि स्तवराजमनुत्तमम्।
दरिद्रो लभते लक्ष्मीमीप्सितामपि निश्चलाम् ॥१३९॥
कन्यार्थी लभते कन्यां सर्वरूपसमन्विताम्।
प्रदोषे बलिदाने च वशयेदखिलं जगत् ॥१४०॥
वटे वा बिल्वमूले वा रम्भायां विपनेऽपि वा।
जपेत्सततमालक्षं मन्त्रराजस्य सिद्धये ॥१४१॥
वर्णलक्षं जपेद्वापि दिङ्मात्रं हि प्रदर्शितम्।
पूजयेत्तु तिलैर्माषैर्दुग्धैर्मांसैर्झषैस्तथा ॥१४२॥
घृतपक्वान्नतो वाऽपि जेमनै रससंकुलैः।
पूजयेद्धारयेद्वापि स्तवमेनं सुसाधकः ॥१४३॥
पठेद्वा पाठयेद्वापि यथाविधि सुरप्रिये।
शत्रुतो न भयं तस्य नाग्निचौरास्त्रवज्रजम् ॥१४४॥

ज्वरादिसम्भवं वापि सत्यं सत्यं महेश्वरि।
भैरवाराधनाशक्तो यो भवेत्साधकः प्रभो ॥१४५॥
सदाशिवः स विज्ञयो भैरवेणेति भाषितम् ॥१४६॥
श्रीमद्भैरवराजरञ्जनविधौ वैय्यग्य्रमासेदुषः ।
पुंसः पञ्चविधा भवन्ति नवधा ह्यष्टौ तथा सिद्धयः।
क्षोणीपाल - किरीट-कोटिमणिरुन्मालाभरैर्भूयशो-
मौग्ध्यं पादपयोजयोर्विजयते मूर्ध्नि प्रभोऽछत्रताम् ॥१४७॥

जो व्यक्ति इस श्रीवटुकभैरव सहस्रनाम स्तोत्र का यथाविधि पाठ करता है, वह दुर्लभ सिद्धियां पा लेता है। यह स्तोत्र कुपात्र को नहीं बताना चाहिए। वट, बिल्व अथवा केले के वृक्ष के नीचे बैठकर अथवा वन में जाकर जो व्यक्ति इस स्तोत्र का निरन्तर एक लाख की संख्या में जप करता है उसे यह मन्त्रराज सिद्ध हो जाता है और उसकी समस्त मनोकामनायें पूर्ण होती हैं।

[इति श्रीभैरवतन्त्रोक्तं श्रीबटुकभैरवसहस्रनामस्तोत्रं समाप्तम्]

श्री बटुक भैरव के भयनाशक दसनाम

कपाली कुण्डली भीमो भैरवो भीमविक्रमः।
व्यालोपवीती कवची शूली शूरः शिवप्रियः॥
एतानि दशनामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत्।
भैरवी-यातना न स्याद् भयं क्वापि न जायते॥

RASHTRIYA SANSKRIT VIDYAPEETHA ... KENDRIYA SANSKRIT ... SRINGERI ... AUG. 1991

[२]

प्रतिनाम-नमस्कार-युतं 'रुद्रयामल'-प्रोक्तं

श्रीबटुक-भैरव-सहस्रनाम-स्तोत्रम्

वैसे तो भगवान् वटुकभैरव के अनेक सहस्रनाम भिन्न-भिन्न आगम, तन्त्र और यामलों में निर्दिष्ट हैं, किन्तु उनमें रुद्रयामल में दर्शित यह सहस्रनाम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। साथ ही यह पूर्वोक्त 'आपदुद्धारक-बटुक-भैरव-स्तोत्र-रूप अष्टोत्तर-शतनामावली'—(जो कि रुद्रयामल के अनुसार ही है, अतः उस)—के नामों से भी ओत-प्रोत है। सम्भवतः वह नामावली इसी सहस्रनाम से साररूप में संगृहीत है। इसके अतिरिक्त इस सहस्रनाम की एक और विशेषता यह है कि—इसमें भक्ति-पूर्वक प्रायः प्रत्येक नाम के साथ चतुर्थी विभक्ति अथवा सम्बोधन-पूर्वक नमस्कार का भी समन्वय हुआ है। बीच-बीच में नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः इस अर्धाली के द्वारा विशेष रूप से नमन भी किया गया है। अतः इसका पाठ करके इष्टदेव की कृपा प्राप्त करनी चाहिये।

ॐ नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो भद्रस्वरूपाय जगदाद्य नमो नमः॥१॥
नमः कल्पस्वरूपाय विकल्पाय नमो नमः।
नमः शुद्धस्वरूपाय सुप्रकाशाय ते नमः॥२॥
नमः कङ्कालरूपाय कालरूप नमोऽस्तु ते।
नमस्त्र्यम्बरूपाय महाकालाय ते नमः॥३॥
नमः संसारसाराय शारदाय नमो नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः॥४॥
नमः क्षेत्रनिवासाय क्षेत्रपालाय ते नमः।
क्षेत्रक्षेत्रस्वरूपाय क्षेत्रकर्त्रे नमो नमः॥५॥
नमो नागविनाशाय भैरवाय नमो नमः।
नमो मातङ्गरूपाय भाररूप नमोऽस्तु ते॥६॥
नमः सिद्धस्वरूपाय सिद्धिदाय नमो नमः।
नमो बिन्दुस्वरूपाय विन्दुसिन्धुप्रकाशिने॥७॥

नमो मङ्गलरूपाय मालवाय नमो नमः ।
नमः सङ्कटनाशाय शङ्कराय नमो नमः ॥८॥
नमो धर्मस्वरूपाय धर्मदाय नमो नमः ।
नमोऽनन्तस्वरूपाय एकरूप नमोऽस्तुते ॥९॥
नमो वृद्धिस्वरूपाय वृद्धिकार नमोऽस्तुते ।
नमो मोहनरूपाय मोक्षरूपाय ते नमः ॥१०॥
नमो जलदरूपाय सामरूप नमोऽस्तु ते ।
नमः स्थूलस्वरूपाय शुद्धरूपाय ते नमः ॥११॥
नमो नीलस्वरूपाय रङ्गरूपाय ते नमः ।
नमो मण्डलरूपाय मण्डलाय नमो नमः ॥१२॥
नमो रुद्रस्वरूपाय रुद्रनाथाय ते नमः ।
नमो ब्रह्मस्वरूपाय ब्रह्मवक्त्रे नमो नमः ॥१३॥
नमस्त्रिशूलधाराय धाराधारिन्नमोऽस्तु ते ।
नमः संसारबीजाय विरूपाय नमो नमः ॥१४॥
नमो विमलरूपाय भैरवाय नमो नमः ।
नमो जङ्गमरूपाय जलजाय नमो नमः ॥१५॥
नमः कालस्वरूपाय कालरुद्राय ते नमः ।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥१६॥
नमः शत्रुविनाशाय भीषणाय नमो नमः ।
नमः शान्ताय दान्ताय भ्रमरूप नमोऽस्तु ते ॥१७॥
न्यायगम्याय शुद्धाय योगिध्येयाय ते नमः ।
नमः कमलकान्ताय कालवृद्धाय ते नमः ।१८॥
नमो ज्योतिःस्वरूपाय सुप्रकाशाय ते नमः ।
नमः कल्पस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥१९॥
नमो जयस्वरूपाय जगज्जाड्य-निवारिणे ।
महाभूताय भूताय भूतानां पतये नमः ॥२०॥
नमो नन्दाय वृन्दाय वादिने ब्रह्मवादिने ।
नमो वादस्वरूपाय न्यायगम्याय ते नमः ॥२१॥

नमो भवस्वरूपाय मायानिर्माणरूपिणे।
विश्ववन्द्याय वन्द्याय नमो विश्वम्भराय ते ॥२२॥
नमो नेत्रस्वरूपाय नेत्ररूपिन्नमोऽस्तु ते।
नमो वरुणरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥२३॥
नमो यमस्वरूपाय वृद्धरूपाय ते नमः।
नमः कुवेररूपाय कालनाथाय ते नमः ॥२४॥
नम ईशानरूपाय अग्निरूपाय ते नमः।
नमो वायुस्वरूपाय विश्वरूपाय ते नमः ॥२५॥
नमः प्राणस्वरूपाय प्राणाधिपतये नमः।
नमः संहाररूपाय पालकाय नमो नमः ॥२६॥
नमश्चन्द्रस्वरूपाय चण्डरूपाय ते नमः।
नमो मन्दरवासाय वासिने सर्वयोगिनाम् ॥२७॥
योगिगम्याय योग्याय योगिनां पतये नमः।
नमो जङ्गमवासाय वामदेवाय ते नमः ॥२८॥
नमः शत्रु-विनाशाय नीलकण्ठाय ते नमः।
नमो भक्ति-विनोदाय दुर्भगाय नमो नमः ॥२९॥
नमो मान्यस्वरूपाय मानदाय नमो नमः।
नमो भूतिविभूषाय भूषिताय नमो नमः ॥३०॥
नमो रजःस्वरूपाय सात्त्विकाय नमो नमः।
नमस्तामसरूपाय तारणाय नमो नमः ॥३१॥
नमो गङ्गाविनोदाय जयसन्धारिणे नमः।
नमो भैरवरूपाय भीषणाय नमो नमः ॥३२॥
नमः सङ्ग्रामरूपाय सङ्ग्रामजयदायिने।
सङ्ग्रामसाररूपाय पावनाय नमो नमः ॥३३॥
नमो वृद्धिस्वरूपाय वृद्धिदाय नमो नमः।
नमस्त्रिशूलहस्ताय शूलसंहारिणे नमः ।३४॥
नमो द्वन्द्वस्वरूपाय रूपदाय नमो नमः।
नमः शत्रुविनाशाय शत्रुबुद्धिविनाशिने ॥३५॥
महाकालाय कालाय कालनाथाय ते नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥३६॥

नमः शुभस्वरूपाय शम्भुरूपिन्नमोऽस्तु ते।
नमः कमलहस्ताय डमरुहस्ताय ते नमः।३७॥
नमः कुक्कुरवाहाय वहनाय नमो नमः।
नमो विमलनेत्राय त्रिनेत्राय नमो नमः॥३८॥
नमः संसाररूपाय सारमेयाय वाहिने।
संसारज्ञानरूपाय ज्ञाननाथाय ते नमः॥३९॥
नमो मङ्गलरूपाय मङ्गलाय नमो नमः।
नमो न्यायविशालाय मन्त्ररूपाय ते नमः॥४०॥
नमो यन्त्रस्वरूपाय यन्त्रधारिन्नमोऽस्तु ते।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः॥४१॥
नमः कलङ्करूपाय कलङ्काय नमो नमः।
नमः संसारपाराय भैरवाय नमो नमः॥४२॥
रुण्डमालाविभूषाय भीषणाय नमो नमः।
नमो दुःखनिवाराय विहाराय नमो नमः॥४३॥
नमो दण्डस्वरूपाय क्षणरूपाय ते नमः।
नमो मुहूर्तरूपाय सर्वरूपाय ते नमः॥४४॥
नमो मोदस्वरूपाय श्रोत्ररूपाय ते नमः।
नमो नक्षत्ररूपाय क्षेत्ररूपाय ते नमः ॥४५॥
नमो विष्णुस्वरूपाय बिन्दुरूपाय ते नमः।
नमो ब्रह्मस्वरूपाय ब्रह्मचारिन्नमोऽस्तु ते॥४६॥
नमः कन्थानिवासाय पटवासाय ते नमः।
नमो ज्वलनरूपाय ज्वलनाय नमो नमः॥४७॥
नमो बटुकरूपाय धूर्तरूपाय ते नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः॥४८॥
नमो वैद्यस्वरूपाय वैद्यरूपिन्नमोऽस्तु ते।
नम औषधरूपाय औषधायं नमो नमः॥४९॥
नमो व्याधिनिवाराय व्याधिरूपिन्नमो नमः।
नमो द्वारनिवाराय ज्वररूपाय ते नमः॥५०॥
नमो रुद्रस्वरूपाय रुद्राणां पतये नमः।
विरूपाक्षाय देवाय भैरवाय नमो नमः॥५१॥

नमो ग्रहस्वरूपाय ग्रहाणां पतये नमः।
नमः पवित्रधाराय पर्शुधाराय ते नमः॥५२॥
यज्ञोपवीतदेवाय देवदेव नमोऽस्तुते।
नमो यज्ञस्वरूपाय यज्ञानां फलदायिने॥५३॥
नमो रणप्रतापाय तापनाय नमो नमः।
नमो गणेशरूपाय गणरूपाय ते नमः॥५४॥
नमो रश्मिस्वरूपाय रश्मिरूपाय ते नमः।
नमो मलयरूपाय रश्मिरूपाय ते नमः॥५५॥
नमो विभक्तिरूपाय विमलाय नमो नमः।
नमो मधुररूपाय माधिपूर्णकलापिने॥५६॥
कालेश्वराय कालाय कालनाथाय ते नमः।
नमो विश्वप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः॥५७॥
नमो योनिस्वरूपाय मातृरूपाय ते नमः।
नमो भगिनीरूपाय भैरवाय नमो नमः॥५८॥
नमो वृषस्वरूपाय कर्मरूपाय ते नमः।
नमो वेदान्तवेद्याय वेदसिद्धान्तसारिणे॥५९॥
नमः शाखाप्रकाशाय पुरुषाय नमो नमः।
नमः प्रकृतिरूपाय भैरवाय नमो नमः॥६०॥
नमो विश्वस्वरूपाय शिवरूपाय ते नमः।
नमो ज्योतिःस्वरूपाय निर्गुणाय नमो नमः॥६१॥
निरञ्जनाय शान्ताय निर्विकाराय ते नमः।
निर्ममाय विमोहाय विश्वनाथाय ते नमः॥६२॥
नमः कण्ठप्रकाशाय शत्रुनाथाय ते नमः।
नम आशाप्रकाशाय आशापूरकृते नमः॥६३॥
नमो मत्स्यस्वरूपाय योगरूपाय ते नमः।
नमो वाराहरूपाय वामनाय नमो नमः॥६४॥
नम आनन्दरूपाय आनन्दाय नमो नमः।
नमोऽस्त्वनर्घकेशाय ज्वलत्केशाय ते नमः॥६५॥
नमः पापविमोक्षाय मोक्षाय च नमो नमः।
नमः कैलाशनाथाय कालनाथाय ते नमः॥६६॥

नमो बिन्दुदबिन्दाय बिन्दुभाय नमो नमः।
नमः प्रणवरूपाय भैरवाय नमो नमः॥६७॥
नमो मेरुनिवासाय रक्तवासाय ते नमः।
नमो मेरुस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः॥६८॥
नमो भद्रस्वरूपाय भद्ररूपाय ते नमः।
नमो योगिस्वरूपाय योगिनां पतये नमः॥६९॥
नमो मन्त्रस्वरूपाय मित्ररूपाय ते नमः।
नमो ब्रह्मनिवासाय काशीनाथाय ते नमः॥७०॥
नमो ब्रह्माण्डवासाय ब्रह्मवासाय ते नमः।
नमो मातङ्गवासाय सूक्ष्मवासाय ते नमः॥७१॥
नमो मातृनिवासाय भ्रातृवासाय ते नमः।
नमो जगन्निवासाय जलावासाय ते नमः॥७२॥
नमः कौलनिवासाय नेत्रवासाय ते नमः।
नमो भैरववासाय भैरवाय नमो नमः॥७३॥
नमः समुद्रवासाय वह्निवासाय ते नमः।
नमश्चन्द्रनिवासाय चन्द्रावासाय ते नमः॥७४॥
नमः कलिङ्गवासाय कलिङ्गाय नमो नमः।
नमः उत्कलवासाय इन्द्रवासाय ते नमः॥७५॥
नमः कर्पूरवासाय सिद्धिवासाय ते नमः।
नमः सुन्दर-वासाय भैरवाय नमो नमः॥७६॥
नमः आकाशवासाय वासिने सर्वयोगिनाम्।
नमो ब्राह्मणवासाय शूद्रवासाय ते नमः॥७७॥
नमः क्षत्रियवासाय वैश्यवासाय ते नमः।
नमः पक्षिनिवासाय भैरवाय नमो नमः॥७८॥
नमः पातालमूलाय मूलावासाय ते नमः।
नमो रसातलवासाय सर्वपातालवासिने॥७९॥
नमः कङ्कालवासाय कङ्कवासाय ते नमः।
नमो मन्त्रनिवासाय भैरवाय नमो नमः॥८०॥
नमोऽहङ्काररूपाय रजोरूपाय ते नमः।
नमः सत्त्वनिवासाय भैरवाय नमो नमः॥८१॥

नमो नलिनरूपाय नलिनाङ्गप्रकाशिने।
नमः सूर्यस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥८२॥
नमो दुष्टनिवासाय साधूपायस्वरूपिणे।
नमो नम्रस्वरूपाय स्तम्भनाय नमो नमः ॥८३॥
पञ्चयोनिप्रकाशाय चतुर्योनिप्रकाशिने।
नवयोनिप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः ॥८४॥
नमः षोडशरूपाय नमः षोडशधारिणे।
चतुःषष्टिप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः ॥८५॥
नमो विन्दुप्रकाशाय सुप्रकाशाय ते नमः।
नमो गणस्वरूपाय सुखरूप नमोऽस्तुते ॥८६॥
नमोऽम्बरस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो नानास्वरूपाय मुखरूप नमोऽस्तुते ॥८७॥
नमो दुर्गस्वरूपाय दुःखहन्त्रे नमोऽस्तुते।
नमो विशुद्धदेहाय दिव्यदेहाय ते नमः ॥८८॥
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः प्रेतनिवासाय पिशाचाय नमो नमः ॥८९॥
नमो निशाप्रकाशाय निशारूप नमोऽस्तुते।
नमः सोमार्धरामाय धराधीशाय ते नमः ॥९०॥
नमः संसारभाराय भारकाय नमो नमः।
नमो देहस्वरूपाय अदेहाय नमो नमः ॥९१॥
देवदेहाय देवाय भैरवाय नमो नमः।
विश्वेश्वराय विश्वाय विश्वधारिन्नमोऽस्तु ते ॥९२॥
स्वप्रकाशप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः।
स्थितिरूपाय स्थित्याय स्थितीनां पतये नमः ॥९३॥
सुस्थिराय सुकेशाय केशवाय नमो नमः।
स्थविष्ठाय गरिष्ठाय प्रेष्ठाय परमात्मने ॥९४॥
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः पारदरूपाय पवित्राय नमो नमः ॥९५॥
नमो वेधकरूपाय अनिन्दाय नमो नमः।
नमः शब्दस्वरूपाय शब्दातीताय ते नमः ॥९६॥

नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो निन्दास्वरूपाय अनिन्दाय नमो नमः ॥९७॥
नमो विष्णुस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः शरण्यशरण शरण्यानां सुखाय ते ॥९८॥
नमः शरण्यरक्षाय भैरवाय नमो नमः।
नमः स्वाहास्वरूपाय स्वधारूपाय ते नमः ॥९९॥
नमो वौषट्स्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
अक्षराय नमस्तुभ्यं त्रिधामात्रास्वरूपिणे ॥१००॥
नमोऽक्षराय शुद्धाय भैरवाय नमो नमः।
अर्धमात्राय पूर्णाम पूर्णाय ते नमो नमः ॥१०१॥
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमोऽष्टचक्ररूपाय ब्रह्मरूपाय ते नमः ॥१०२॥
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः सृष्टिस्वरूपाय सृष्टिकर्त्रे महात्मने ॥१०३॥
नमः पाल्यस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
सनातनाय नित्याय निर्गुणाय गुणाय ते ॥१०४॥
नमः सिद्धाय शान्ताय भैरवाय नमो नमः।
नमो धारास्वरूपाय खड्गहस्ताय ते नमः ॥१०५॥
नमस्त्रिशूलहस्ताय भैरवाय नमो नमः।
नमः कुण्डलवर्णाय शवमुण्डविभूषिणे ॥१०६॥
महाक्रुद्धाय चण्डाय भैरवाय नमो नमः।
नमो वासुकिभूषाय सर्पभूषाय ते नमः ॥१०८॥
नमः कपालहस्ताय भैरवाय नमो नमः।
पानपात्रप्रमत्ताय मत्तरूपाय ते नमः ॥१०८॥
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो माधवरूपाय माधवाय नमो नमः ॥१०९॥
नमो माङ्गल्यरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः कुमाररूपाय स्त्रीरूपाय नमो नमः ॥११०॥
नमो गन्धस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो दुर्गन्धरूपाय सुगन्धाय नमो नमः ॥१११॥

नमः पुष्पस्वरूपाय पुष्पभूषण ते नमः।
नमः पुष्पप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः॥११२॥
नमः पुष्पविनोदाय पुष्पपूजाय ते नमः।
नमो भक्तिनिवासाय भक्तदुःखनिवारिणे॥११३॥
भक्तप्रियाय शान्ताय भैरवाय नमो नमः।
नमो भक्तस्वरूपाय रूपदाय नमो नमः॥११४॥
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो वासाय भद्राय वीरभद्राय ते नमः॥११५॥
नमः संग्रामसाराय भैरवाय नमो नमः।
नमः खट्वाङ्गहस्ताय कालहस्ताय ते नमः॥११६॥
नमऽघोराय घोराय घोराघोरस्वरूपिणे।
घोरधर्माय घोराय भैरवाय नमो नमः॥११७॥
घोरत्रिशूलहस्ताय घोरपानाय ते नमः।
घोररूपाय नीलाय भैरवाय नमो नमः॥११८॥
घोरवाहनगम्याय अगम्याय नमो नमः।
घोरब्रह्मस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः॥११९॥
घोरशब्दाय घोराय घोरदेहाय ते नमः।
घोरद्रव्याय घोराय भैरवाय नमो नमः॥१२०॥
घोरसङ्गाय सिंहाय सिद्धसिंहाय ते नमः।
नमः प्रचण्डसिंहाय सिंहरूपाय ते नमः॥१२१॥
नमः सिंहप्रकाशाय सुप्रकाशाय ते नमः।
नमो विजयरूपाय जगदाद्य नमो नमः॥१२२॥
नमो भार्गवरूपाय गर्भरूपाय ते नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः॥१२३॥
नमो मेध्याय शुद्धाय मायाधीशाय ते नमः।
नमो मेघप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः॥१२४॥
दुर्ज्ञेयाय दुरन्ताय दुर्लभाय दुरात्मने।
भक्तिलभ्याय भव्याय भविताय नमो नमः॥१२५॥
नमो गौरवरूपाय गौरवाय नमो नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः॥१२६॥

नमो विघ्ननिवाराय विघ्नराशिन्नमोऽस्तुते।
नमो विघ्नविदाराय भैरवाय नमो नमः ॥१२७॥
नमः किंशुकरूपाय रजोरूपाय ते नमः।
नमो नीलस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥१२८॥
नमो गणस्वरूपाय गणनाथाय ते नमः।
नमो विश्वप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः ॥१२९॥
नमो योगिप्रकाशाय योगिगम्याय ते नमः।
नमो हेरम्बरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥१३०॥
नमस्त्रिधा स्वरूपाय रूपदाय नमो नमः।
नमः स्वरस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥१३१॥
नमः सरस्वतीरूप बुद्धिरूपाय ते नमः।
नमो वन्द्यस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥१३२॥
नमस्त्रिविक्रमरूपाय त्रिस्वरूपाय ते नमः।
नमः शशाङ्करूपाय भैरवाय नमो नमः ॥१३३॥
नमो व्यापकरूपाय व्याप्यरूपाय ते नमः।
नमो भैरवरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥१३४॥
नमो विशदरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः सत्त्वस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥१३५॥
नमः सूक्तस्वरूपाय शिवदाय नमो नमः।
नमो गङ्गास्वरूपाय यमुनारूपिणे नमः ॥१३६॥
नमो गौरीस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमो दुःखविनाशाय दुःखमोक्षस्वरूपिणे ॥१३७॥
महाचलाय वन्द्याय भैरवाय नमो नमः।
नमो नन्दस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥१३८॥
नमो नन्दिस्वरूपाय स्थिररूपाय ते नमः।
नमः केलिस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः ॥१३९॥
नमः क्षेत्रनिवासाय वासिने ब्रह्मवादिने।
नमः शान्ताय शुद्धाय भैरवाय नमो नमः ॥१४०॥
नमो नर्मदरूपाय जलरूपाय ते नमः।
नमो विश्वविनोदाय जयदाय नमो नमः ॥१४१॥

नमो महेन्द्ररूपाय महनीयाय ते नमः।
नमः संसृतिरूपाय शरणीयाय ते नमः॥१४२॥
नमस्त्रिबन्धुवासाय बालकाय नमो नमः।
नमः संसारसाराय सरसां पतये नमः॥१४३॥
नमस्ते जलरूपाय भैरवाय नमो नमः।
नमः काव्यस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः॥१४४॥
नमो गोकर्णरूपाय ब्रह्मवर्णाय ते नमः।
नमः शङ्करवर्णाय हस्तिकर्णाय ते नमः॥१४५॥
नमो विष्टरकर्णाय यज्ञकर्णाय ते नमः।
नमः शम्बुककर्णाय भैरवाय नमो नमः॥१४६॥
नमो दिव्यसुकर्णाय कालकर्णाय ते नमः।
नमो भयदकर्णाय भैरवाय नमो नमः॥१४७॥
नम आकाशवर्णाय कालकर्णाय ते नमः।
नमो दिग्रूपकर्णाय भैरवाय नमो नमः॥१४८॥
नमो विशुद्धकर्णाय विमलाय नमो नमः।
नमः सहस्रकर्णाय भैरवाय नमो नमः॥१४९॥
नमो नेत्रप्रकाशाय सुनेत्राय नमो नमः।
नमो वरदनेत्राय जयनेत्राय ते नमः॥१५०॥
नमो विमलनेत्राय योगिनेत्राय ते नमः।
नमः सहस्रनेत्राय भैरवाय नमो नमः॥१५१॥
नमः कलिन्दरूपाय कलिन्दाय नमो नमः।
नमो ज्योतिःस्वरूपाय ज्योतिषाय नमो नमः॥१५२॥
नमस्तारप्रकाशाय ताररूपिन् नमोऽस्तुते।
नमो नक्षत्रनेत्राय भैरवाय नमो नमः॥१५३॥
नमश्चन्द्रप्रकाशाय चन्द्ररूप नमोऽस्तु ते।
नमो रश्मिस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः॥१५४॥
नम आनन्दरूपाय जयानन्दस्वरूपिणे।
नमो द्रविडरूपाय भैरवाय नमो नमः॥१५५॥
नमः शङ्खनिवासाय शङ्कराय नमो नमः।
नमो मुद्राप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः॥१५६॥

नमो न्यासस्वरूपाय न्यासरूप नमोऽस्तुते।
नमो बिन्दुस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः॥१५७॥
नमो विसर्गरूपाय प्रणवरूप ते नमः।
नमो मन्त्रप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः॥१५८॥
नमो जम्बुकरूपायाय जङ्गमाय नमो नमः।
नमो गरुडरूपाय भैरवाय नमो नमः॥१५९॥
नमो लम्बुकरूपाय लम्बिकाय नमो नमः।
नमो लक्ष्मीस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः॥१६०॥
नमो वीरस्वरूपाय वीरणाय नमो नमः।
नमः प्रचण्डरूपाय भैरवाय नमो नमः॥१६१॥
नमो दम्भस्वरूपाय डमरुधारिन्नमोऽस्तु ते।
नमः कलङ्कनाशाय कालनाथाय ते नमः॥१६२॥
नमः सिद्धिप्रकाशाय सिद्धिदाय नमो नमः।
नमः सिद्धस्वरूपाय भैरवाय नमो नमः॥१६३॥
नमो धर्मप्रकाशाय धर्मनाथाय ते नमः।
धर्माय धर्मराजाय भैरवाय नमो नमः॥१६४॥
नमो धर्माधिपतये धर्मध्येयाय ते नमः।
नमो धर्मार्थसिद्धाय भैरवाय नमो नमः॥१६५॥
नमो निर्जररूपाय रूपारूपप्रकाशिने।
नमो राजप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः॥१६६॥
नमः प्रतापसिंहाय प्रतापाय नमो नमः।
नमः कोटिप्रतापाय भैरवाय नमो नमः॥१६७॥
नमः सहस्ररूपाय कोटिरूपाय ते नमः।
नम आनन्दरूपाय भैरवाय नमो नमः॥१६८॥
नमः संहारबन्धाय बन्धकाय नमो नमः।
नमो विमोक्षरूपाय मोक्षदाय नमो नमः॥१६९॥
नमो विष्णुस्वरूपाय व्यापकाय नमो नमः।
नमो माङ्गल्यनाथाय शिवनाथाय ते नमः॥१७०॥
नमो व्यालाय व्याघ्राय व्याघ्ररूप नमोऽस्तु ते।
नमो व्यालविभूषाय भैरवाय नमो नमः॥१७१॥

नमो विद्याप्रकाशाय विद्यानां पतये नमः।
नमो योगिस्वरूपाय क्रूररूपाय ते नमः॥१७२॥
नमः संहाररूपाय शत्रुनाशाय ते नमः।
नमो पालकरूपाय भैरवाय नमो नमः॥१७३॥
नमः कारुण्यदेवाय देवदेवाय ते नमः।
नमो विश्वविलाशाय भैरवाय नमो नमः॥१७४॥
नमो नमः प्रकाशाय काशीवासिन्नमोऽस्तुते।
नमो भैरवक्षेत्राय क्षेत्रपालाय ते नमः॥१७५॥
नमो भद्रस्वरूपाय भद्रकाय नमो नमः।
नमो भद्राधिपतये भयहन्त्रे नमोऽस्तु ते॥१७६॥
नमो मायाविनोदाय मायिने मदरूपिणे।
नमो मत्ताय शान्ताय भैरवाय नमो नमः॥१७७॥
नमो मलयवासाय कैलाशाय नमो नमः।
नमः कैलाशवासाय कालिकातनयाय ते॥१७८॥
नमः संसारसाराय भैरवाय नमो नमः।
नमो मातृविनोदाय विमलाय नमो नमः॥१७९॥
नमो यमप्रकाशाय नियमाय नमो नमः।
नमः प्राणप्रकाशाय ध्यानाधिपतये नमः॥१८०॥
नमः समाधिरूपाय निर्गुणाय नमो नमः।
नमो मन्त्रप्रकाशाय मन्त्ररूपाय ते नमः॥१८१॥
नमो वृन्दविनोदाय वृन्दकाय नमो नमः।
नमो बृंहितरूपाय भैरवाय नमो नमः॥१८२॥
नमो मान्यस्वरूपाय मानदाय नमो नमः।
नमो विश्वप्रकाशाय भैरवाय नमो नमः॥१८३॥
नमो नैमिषपीठाय सिद्धपीठाय ते नमः।
नमो मण्डलपीठाय भक्तपीठाय ते नमः॥१८४॥
नमो यशोदानाथाय कामनाथाय ते नमः।
नमो विनोदनाथाय सिद्धनाथाय ते नमः॥१८५॥
नमो नाथाय नाथाय ज्ञाननाथाय ते नमः।
नमः शङ्करनाथाय जयनाथाय ते नमः॥१८६॥

नमो मुद्‌गलनाथाय नीलनाथाय ते नमः।
नमो बालकनाथाय धर्मनाथाय ते नमः॥१८७॥
विश्वनाथाय नाथाय कार्यनाथाय ते नमः।
नमो भैरवनाथाय महानाथाय ते नमः॥१८८॥
नमो ब्रह्मसनाथाय योगनाथाय ते नमः।
नमो विश्वविहाराय विश्वमाराय ते नमः॥१८९॥
नमो रङ्गसनाथाय रङ्गनाथाय ते नमः।
नमो मोक्षसनाथाय भैरवाय नमो नमः॥१९०॥
नमो गोरक्षनाथाय गोरक्षाय नमो नमः।
नमो मन्दारनाथाय नन्दनाथाय ते नमः॥१९१॥
नमो मङ्गलनाथाय चम्पानाथाय ते नमः।
नमः सन्तोषनाथाय भैरवाय नमो नमः॥१९२॥
नमो निर्धननाथाय सुखनाथाय ते नमः।
नमः कारुण्यनाथाय भैरवाय नमो नमः॥१९३॥
नमो द्रविडनाथाय दरिनाथाय ते नमः।
नमः संसारनाथाय जगन्नाथाय ते नमः॥१९४॥
नमो माध्वीकनाथाय मन्त्रनाथाय ते नमः।
नमो न्यासमनाथाय ध्याननाथाय ते नमः॥१९५॥
नमो गोकर्णनाथाय महानाथाय ते नमः।
नमः शुभ्रसनाथाय भैरवाय ते नमः॥१९६॥
नमो विमलनाथाय मण्डलनाथाय ते नमः।
नमः सरोजनाथाय सत्यनाथाय ते नमः॥१९७॥
नमो भक्तसनाथाय भक्तिनाथाय ते नमः।
नमो मोहननाथाय वत्सनाथाय ते नमः १९८॥
नमो मातृसनाथाय विश्वनाथाय ते नमः।
नमो बिन्दुसनाथाय जयनाथाय ते नमः॥१९९॥
नमो मङ्गलनाथाय धर्मनाथाय ते नमः।
नमो गङ्गासनाथाय भूमिनाथाय ते नमः॥२००॥
नमो धीरसनाथाय बिन्दुनाथाय ते नमः।
नमः कञ्चुकिनाथाय शृङ्गिनाथाय ते नमः॥२०१॥

नमः समुद्रनाथाय गिरिनाथाय ते नमः।
नमो माङ्गल्यनाथाय कद्रुनाथाय ते नमः ॥२०२॥
नमो वेदान्तनाथाय श्रीनाथाय नमो नमः।
नमो व्रह्माण्डनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥२०३॥
नमो गिरीशनाथाय वामनाथाय ते नमः।
नमो बीजसनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥२०४॥
नमो मन्दिरनाथाय मनोनाथाय ते नमः।
नमो भैरवनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥२०५॥
अम्बानाथाय नाथाय जन्तुनाथाय ते नमः।
नमः कालिसनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥२०६॥
नमो मुकुन्दनाथाय कुन्दनाथाय ते नमः।
नमः कुण्डलनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥२०७॥
नमोऽष्टचक्रनाथाय शूलनाथाय ते नमः।
नमो विभूतिनाथाय शूलनाथाय ते नमः ॥२०८॥
नमो न्यायसनाथाय न्यायनाथाय ते नमः।
नमो दयासनाथाय जङ्गमनाथाय ते नमः ॥२०९॥
नमो विशदनाथाय जगन्नाथाय ते नमः।
नमः कामिकनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥२१०॥
नमः क्षेत्रसनाथाय जीवनाथाय ते नमः।
नमः शैलसनाथाय चैलनाथाय ते नमः ॥२११॥
नमो मात्रासनाथाय अमात्राय नमो नमः।
नमो द्वन्द्वसनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥२१२॥
नमः शूरसनाथाय शूरनाथाय ते नमः।
नमः सौजन्यनाथाय सौजन्याय नमो नमः ॥२१३॥
नमो दुष्टसनाथाय भैरवाय नमो नमः।
नमो भय-सनाथाय बिम्बनाथाय ते नमः ॥११४॥
नमो भैरवनाथाय भैरवाय नमो नमः।
नमो विटङ्कनाथाय टङ्कनाथाय ते नमः ॥२१५॥
नमश्चर्मसनाथाय खड्गनाथाय ते नमः।
नमः शक्तिसनाथाय धनुर्नाथाय ते नमः ॥२१६॥

नमो बाणसनाथाय शापनाथाय ते नमः।
नमो यन्त्रसनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥२१७॥
नमो गण्डूषनाथाय गण्डूषाय नमो नमः।
नमो डाकिनीनाथाय भैरवाय नमो नमः ॥२१८॥
नमो डामरनाथाय डारकाय नमो नमः।
नमो डङ्कसनाथाय डङ्कनाथाय ते नमः ॥२१९॥
नमो माण्डवनाथाय यज्ञनाथाय ते नमः।
नमो यजुःसनाथाय क्रीडानाथाय ते नमः ॥२२०॥
नमः सामसनाथायाथर्वनाथाय ते नमः।
नमः शून्याय नाथाय स्वर्गनाथाय ते नमः ॥२२१॥

इस सहस्रनाम के अन्त में २२ पद्यों से पाठ की महिमा एवं फलश्रुति दी गई है, जिसमें, नित्यपाठ, त्रिकालपाठ, श्रद्धापूर्वक श्रवण, रात्रि में पाठ, देवगृह और श्मशान भूमि में पाठ का महत्त्व बतलाकर प्रत्येक पाठ से मनःकामनाओं की पूर्ति का उल्लेख है।

इसी सहस्रनाम का पाठ करने के लिये भगवान् रुद्र ने श्रीराम को उपदेश दिया था। तदनन्तर क्रमशः लक्ष्मण, दुर्वासा, पाण्डव और कृष्ण ने पाठ करके कृपा प्राप्त की तथा श्रीकृष्ण के द्वारा ही यह सर्वत्र प्रस्तुत हुआ, यह भी बताया है। अन्त में कहा गया है कि—

अनेन स्तोत्रपाठेन किमलभ्यं भवेदिति।
सर्वलोकस्य पूज्यस्तु सत्यं सत्यं न संशयः ॥२४२॥ इति।

इति श्रीरुद्रयामलोक्तं श्रीवटुकभैरव-सहस्रनामस्तोत्रम् ॥

—०—

श्रीक्षेत्रपाल-भैरवाष्टक-स्तोत्रम्

ॐ यं यं यं यक्षरूपं दश दिशिवदनं भूमिकम्पायमानं,
सं सं संहारमूर्ति शुभमुकुटजटाशेखरं चन्द्रबिम्बम्।
दं दं दं दीर्घकायं विकृतनखमुखं चोर्ध्वरोमं करालं,
पं पं पं पापनाशं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥१॥
रं रं रं रक्तवर्णं कटकटिततनुं तीक्ष्णदंष्ट्राविशालं,
घं घं घं घोरघोषं घघघघघटितं घर्घराघोरनादम्।
कं कं कं कालरूपं धगधगधगितं ज्वालितं कामदेहं,
दं दं दं दिव्यदेहं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥२॥

लं लं लं लम्बदन्तं लललललुलितं दीर्घजिह्वं करालं,
धूं धूं धूं धूम्रवर्णं स्फुटविकृतमुखं भासुरं भीमरूपम्।
रुं रुं रुं रुण्डमालं रुधिरमयमुखं ताम्रनेत्रं विशालं,
नं नं नं नग्नरूपं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥३॥
वं वं वं वायुवेगं प्रलयपरिमितं ब्रह्मरूपं स्वरूपं,
खं खं खं खड्गहस्तं त्रिभुवननिलयं भास्करं भीमरूपम्।
चं चं चं चालयन्तं चलचलचलितं चालितं भूतचक्रं,
मं मं मं मायकायं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥४॥
शं शं शं शङ्खहस्तं शशिकरधवलं पूर्णतेजःस्वरूपं,
भं भं भं भावरूपं कुलमकुलकुलं मन्त्रमूर्ति स्वतत्त्वम्।
भं भं भं भूतनाथं किलकिलितवचश्चारु जिह्वालुलन्तं,
अं अं अं अन्तरिक्षं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥५॥
खं खं खं खड्गभेदं विषममृतमयं काल-कालान्धकारं,
क्षिं क्षिं क्षिं क्षिप्रवेगं दह दह दहनं नेत्रसन्दीप्यमानम्।
हूं हूं हुङ्कारशब्दं प्रकटितगहनं गर्जितं भूमिकम्पं,
वं वं वं वाललीलं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥६॥
सं सं सं सिद्धियोगं सकलगुणमयं देवदेवं प्रसन्नं,
पं पं पं पद्मनाभं हरिहरवदनं चन्द्रसूर्याग्निनेत्रम्।
यं यं यं यक्षनाथं सततभयहरं सर्वदेवस्वरूपम्,
रौं रौं रौं रौद्ररूपं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥७॥
हं हं हं हंसघोषं हसितकहकहाराव - रौद्राट्टहासं,
यं यं यं यक्षरूपं शिरसि कनकजं मौकुटं सन्दधानम्।
रं रं रं रङ्गरङ्ग—प्रहसितवदनं पिङ्गलं श्यामवर्णं,
सं सं सं सिद्धनाथं प्रणमत सततं भैरवं क्षेत्रपालम् ॥८॥
एवं वै भावयुक्तः प्रपठति मनुजो भैरवस्याष्टकं यो,
निर्विघ्नं दुःखनाशं भवति भयहरं शाकिनीनां विनाशम्।
दस्यूनां व्याघ्रसर्पोद्भवजनितभियां जायते सर्वनाशः,
सर्वे नश्यन्ति दुष्टा ग्रहगणविषमा लभ्यते चेष्टसिद्धिः ॥९॥

॥ इति विश्वसारोद्धारे क्षेत्रपालभैरवाष्टकस्तोत्रम् ॥

———

श्रीबटुक-भैरव-मन्त्र-साधना

श्री वटुकभैरव की साधना में मन्त्र, यन्त्र, तन्त्र और स्तोत्र-रूप साधनाएं प्रमुख हैं। हमने प्रारम्भ में सामान्यतः 'मन्त्रजप-विधि' के पश्चात् स्तोत्र-साधना के विविध रूप प्रस्तुत किये हैं। अब यहां संक्षेप में मन्त्रादि साधनाओं का भी वर्णन करते हैं। साधक जिस रूप में साधना करना चाहें गुरु-उपदेश से करें।

मन्त्र-साधना में 'विनियोग, न्यास और ध्यान के साथ मन्त्र का जप होता है। जैसा मन्त्र का स्वरूप होता है उसके अनुसार ही विनियोगादि में भी परिवर्तन होता रहता है। मन्त्रों के साथ कामना की दृष्टि से वीजमन्त्रों का संयोग पल्लव अथवा सम्पुट के रूप में किया जाता है। इसके कारण भी विधि में कुछ परिवर्तन-परिवर्धन होते हैं।

श्रीवटुकभैरव का प्रसिद्ध मन्त्र—ह्रीं वटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं' यह २१ अक्षरों का है। 'तन्त्रसार' में 'एकविंशत्यक्षरात्मा शक्तिरुद्धो महामनुः' कहकर इसी मन्त्र की महिमा बतलाई है। 'रुद्रयामल' में इस मन्त्र के आदि में 'ॐ' लगाने की भी सूचना है—'आदौ प्रणवमुद्धृत्य देवीप्रणवमुद्धरेत् इत्यादि।'[1]

इस मन्त्र के जप की संक्षिप्त विधि यहां पहले दिखाई गई है। उसमें विशेष यह ज्ञातव्य है कि—जप से पूर्व मुख्य रूप से १० न्यास और करने का आदेश रुद्रयामल में दिया गया है। उन न्यासों के नाम इस प्रकार हैं—

१. प्रेतवीज न्यास २. सिंहवीज न्यास, ३. क्वाणवीज न्यास, ४. मन्त्र-वीज न्यास, ५. महाश्रीवीजन्यास ६. प्राणवीज न्यास, ७. घण्टावीज न्यास ८. ख्यातिवीज न्यास ९. मूलवीज न्यास तथा १०. भ्रामरीवीज न्यास।

इनके अतिरिक्त 'मर्मन्यास विधि' में १. आकूति वीजन्यास, २. कालवीजन्यास, ३. विद्यावीज न्यास एवं कतिपय अन्य (क) शृंखलावीज न्यास (महापराख्यवीज न्यास), (ख) मातृकावीज न्यास और महासरस्वतीवीज न्यास के भी विधान हैं।

इसी साधना में ऊर्ध्वाम्नाय में 'महाषोढा न्यास'—जिसमें १. प्रपञ्चन्यास, २. भुवन न्यास, ३. मूर्तिन्यास, ४. मन्त्रन्यास, ५. दैवतन्यास और ६. मातृकान्यास का आदेश है। 'सिंहसिद्धान्त-सिन्धु' खण्ड २ में इस सम्बन्ध में विस्तार से प्रतिपादन हुआ है जो वहीं द्रष्टव्य है।

श्रीवटुक-भैरव के अन्य मन्त्र

१. 'कालसंकर्षण-तन्त्र' में—

तारो माया तदनु वटुकाय द्वयं क्षरौं तदाप—
च्छब्दोद्धाराय च शिरसि कुरु द्वन्द्वमुक्तञ्च सम्यक्।

---

१. 'वटुक भैरव—ब्रह्मकवच' में प्रणवसहित यन्त्र के लिए ही—'द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रः क्रमेण जगदीश्वरि' कहा गया है तथा अन्यत्र आद्यन्त में प्रणव भी माना है।

ह्लींबीजं यद्वटुकपुटितं भौवनं चाग्निजाया —
एषा विद्या वटुक भव ते वाञ्छितं मे ददातु ॥

कहकर "ॐ ह्लीं वां बटुकाय क्षौं, क्षौं आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्लीं वटुकाय स्वाहा" यह मन्त्र बतलाया है। इस मन्त्र के ऋषि कालाग्निरुद्र हैं।

२. ॐ ह्लीं क्ष्मौं व्रौं ह्लीं ॐ स्वाहा आपदुद्धारणभैरवाय नमः।

यह मन्त्र भी अन्यत्र संकेतित है।

३. —रक्षा-प्राप्ति के लिए निम्नलिखित मन्त्र का जप करें—

ॐ ह्लीं भैरव भैरव भयकरहर मां रक्ष रक्ष हुं फट् स्वाहा।

४. सर्वविध बाधा-निवारण के लिए यह मन्त्र उत्तम है—

ॐ भैरवाय वं वं वं ह्लां क्ष्रौं नमः।

५. सिद्धिप्रद-वटुक-भैरव मन्त्र

ॐ ह्लीं वटुकाय क्ष्रौं क्ष्रौं आपदुद्धारणाय सर्वबाधाविनिर्मुक्तं धनधान्य-समन्वितं च मां कुरु कुरु वटुकाय ह्लीं ॐ नमः।

६. श्रीवटुक-मालामन्त्र (मन्त्रदीपप्रकाशिकोक्त)

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॐ ह्रीं बटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु बटुकाय ह्रीं द्रां द्रीं क्लीं ल्वं सः ह्रौं ह्रौं हां ह्रीं द्रुं भ्रां भ्रीं भ्रूं व्रं शलवरयूं महाकालाय महाभैरवाय मां रक्ष रक्ष मम पुत्रान् रक्ष रक्ष मम भ्रातरं रक्ष रक्ष मम शिष्यान् रक्ष रक्ष साधकान् रक्ष रक्ष समं परि-वारं रक्ष रक्ष ममोपरि दुष्टदृष्टि दुष्टबुद्धि प्रयोगान् कुर्वन्ति कारयन्ति करिष्यन्ति तान् हन हन पापं मथ आरोग्यं कुरु परबलानि क्षोभय क्षोभय क्ष्रौं क्ष्रौं क्ष्रौं ह्रीं वटुकाय केलिरुद्राय नमः।

यह माला-मन्त्र मूल-मन्त्र जप के आदि और अन्त में ३-३ वार जपना चाहिये।

७. अरिष्टनिवारण-मन्त्र

ॐ क्ष्रौं क्ष्रौं स्वाहा।

८. श्री बटुक-गायत्री (शान्तिप्राप्ति के लिये)

ॐ ह्लां ह्लौं नमः ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ ह्लीं बटुकाय विद्महे आपदुद्धारणाय धीमहि तन्नो बटुकः प्रचोदयात् ॐ स्वः ॐ भुवः ॐ भूः ॐ नमः ह्लौं ह्लां ॐ।

इसी प्रकार भैरव के अनन्तरूपों के अनन्त मन्त्र आगमों में प्राप्त होते हैं तथा 'आकाश-भैरव' (पक्षिराज शरभ) तथा 'स्वर्णाकर्पण-भैरव की उपासना तो अनेक साधक करते भी हैं।

साधक गण उत्तरोत्तर साधना करते हुए आगे बढ़ें और शास्त्राज्ञा एवं गुरु-उपदेश के अनुसार अपनी प्रगति कर भगवान् भैरव की कृपा प्राप्त करें।

श्रीबटुक-भैरव-यन्त्र-साधना

यन्त्ररूप साधना में इष्टदेव का आवास यन्त्र में ही माना जाता है। प्रतिमा के समान प्रतीकात्मक यन्त्र की शास्त्राज्ञा के अनुसार सुवर्ण, रजत, ताम्र, अष्टधातु, त्रिधातु अथवा स्फटिक आदि मणियों पर आकृति बनवाकर पूजा की जाती है। यदि वैसा न हो सके तो भूर्जपत्र पर लिखकर अथवा किसी पात्र में ही नित्य लिखकर पूजा करते हैं। ये यन्त्र मुख्यत:[1] १—पूजा के लिए और २—धारण करने के लिए बनाये जाते हैं। इनके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

श्री बटुकभैरव-पूजा-यन्त्र

मध्ये चाष्टदलं पद्मं कर्णिकाकेसरोज्ज्वलम्।
त्रिकोणं च तत: कृत्वा षट्कोणं च ततो न्यसेत्॥
वर्तुलं चाष्टपत्रं च चतुरस्रत्रयात्मकम्।

इस प्रमाण के अनुसार श्रीभैरव का यन्त्र विधिपूर्वक बनाकर प्रतिष्ठित कर लें तथा बाद में जप करने से पूर्व प्रतिदिन इसकी पूजा करें। यन्त्र की आकृति इस प्रकार है—

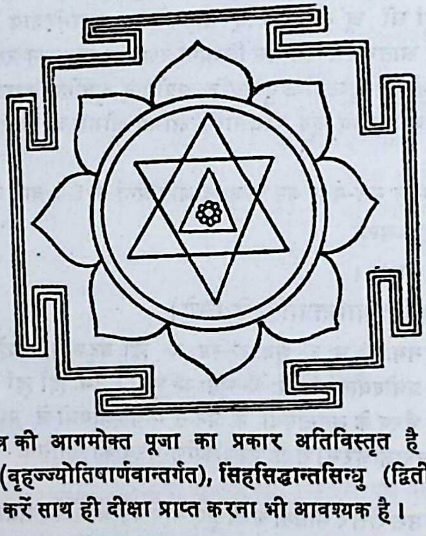

इस यन्त्र की आगमोक्त पूजा का प्रकार अतिविस्तृत है जिसे 'बटुकभैरवोपासना'—ग्रन्थ (बृहज्ज्योतिषार्णवान्तर्गत), सिंहसिद्धान्तसिन्धु (द्वितीय खण्ड) तथा अन्य आगमों से प्राप्त करें साथ ही दीक्षा प्राप्त करना भी आवश्यक है।

---

१. यन्त्रों के विभिन्न प्रयोगों के बारे में देखें हमारी पुस्तक, 'यन्त्र-शक्ति' भा. १—२।

१—यन्त्र-प्राण-प्रतिष्ठाविधि

हाथ में जल, अक्षत और पुष्प लेकर—

ॐ अद्य ब्रह्मणो द्वितीये परार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंश-तितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे भूर्लोके भरतखण्डे रामराज्ये आर्यावर्तैकदेशान्तर्गतपुण्य-क्षेत्रे[1] शालिवाहनकृते शके…अमुकसंवत्सरे……मासे,…पक्षे…तिथौ…वासरे मम…आत्मनः श्रुतिस्मृति-पुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं अमुकयन्त्रस्य……[1] ताडनावघातादिदोषप-रिहारार्थमग्न्युत्तारण (धूपोत्तारण) पूर्वकं प्राणप्रतिष्ठां करिष्ये।[1]

यह बोल कर किसी पात्र में उन्हें छोड़ दें और यदि यन्त्र किसी धातु का बना हुआ हो तो उस पर शुद्ध घी लगा दें। यदि कागज पर हो तो उसके सामने घृत की धूप देकर उससे धूपित करें। फिर दूध और जल मिलाकर उससे स्नान कराए और इष्ट मन्त्र बोलता रहे। फिर विनियोग करे।

ॐ अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि प्राणशक्तिर्देवता आं बीजं ह्रीं शक्तिः क्रों कीलकं अस्मिन् यन्त्रे प्राणप्रतिष्ठापने विनि-योगः। (इससे जल छोड़ें।)

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं सः ह्रीं ॐ आं ह्रीं क्रों अस्य यन्त्रस्य प्राणा इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हं सः ह्रीं ॐ आं ह्रीं क्रों अस्य यन्त्रस्य जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हं सः ह्रीं ॐ आं ह्रीं क्रों अस्य यन्त्रस्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहागत्य इहैव सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनो त्वरिष्टं यज्ञं समिमं दधातु। विश्वे देवास इह मादयन्ताम् ॐ प्रतिष्ठ॥

एष वै प्रतिष्ठा नाम यज्ञो यत्रैतेन यज्ञेन यजन्ते। सर्वमेव प्रतिष्ठितं भवति॥ अस्मिन् यन्त्रे यन्त्रदेवता सुप्रतिष्ठिता वरदा भवतु।

---

१. यहाँ खाली छोड़े हुए स्थानों में स्थान, शक, वर्ष, मास, पक्ष, तिथि, वार और अपना नाम क्रमशः बोलें तथा जिस देवता का यन्त्र हो उनका नाम लें।

२. मन्त्र और तन्त्रशास्त्रों में विभिन्न यन्त्रों की प्रतिष्ठा एवं पूजा-पद्धतियों का बड़े विस्तार के साथ विवेचन किया है। प्रसिद्ध-प्रसिद्ध पूजा-यन्त्र की नित्य-पूजा में आवरण पूजा का विधान है। इसमें यन्त्र में आलिखित बिन्दु, त्रिकोण, षट्कोण, अष्टदल एवं भूपुर आदि स्थानों तथा दिशा-विदिशाओं में स्थापित होनेवाले देवताओं की पूजा और तर्पण किये जाते हैं।

यह सब कार्य समय और सुविधा, निष्ठा और व्यवस्था एवं कर्मसम्बन्धी ज्ञान तथा क्रिया को दृष्टि में रखकर करना चाहिए।

फिर गन्ध पुष्पादि पञ्चोपचार से पूजन करे और यन्त्र के षोडश संस्कारों[1] की सिद्धि के लिए १६ वारं इष्ट-मन्त्र का जप करे। फिर—

अस्य यन्त्रस्य षोडश संस्काराः सम्पद्यन्ताम्।

इतना बोलकर प्रणाम करे। फिर यन्त्र पूजन का हो तो नित्य पूजन करे और धारण करने का यन्त्र हो तो उसे धारण करे।

अथवा संक्षेप में इतना ही करे—

संक्षिप्त प्राण-प्रतिष्ठा-मन्त्र—

कुशा अथवा दूर्वा लेकर उससे यन्त्र का स्पर्श करते हुए—

ॐ ऐं ह्रीं आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं ॐ हं सः सोहं सोहं हंसः शिवः अस्य यन्त्रस्य प्राणा इह प्राणाः।

ऐं ह्रीं श्रीं आं ह्रीं क्रों अस्य यन्त्रस्य जीव इह स्थितः। सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं असुनीते पुनरस्मासु चक्षुः पुनः प्राणमिह नो धेहि भोगम्। ज्योक् पश्येम सूर्यमुच्चरन्तमनुमते मृडया नः स्वस्ति ॥

इन मन्त्रों को बोलकर यन्त्र में प्राण, जीव, वाणी, मन, त्वचा, नेत्र, कर्ण, जिह्वा, नासिका आदि सभी इन्द्रियाँ निवास कर रही हैं और यह यन्त्र साक्षात् भगवत्स्वरूप हो गया है ऐसा मानकर यन्त्र की लिखे अनुसार पूजा करे।

२—यन्त्र-धारण-विधि

सभी प्रकार के यन्त्रों को धारण करने के लिए तन्त्रशास्त्रों में जो विधि कही गई है, वह इस प्रकार है—

सुस्नातः सुवस्त्र-चन्दनाद्रिभिर्भूषितो यथोक्तद्रव्यैः शुद्धदेशे यन्त्रं लिखेत्। तत्रादौ षष्ठ्यन्तं साधकपदं मध्ये बीजं तदधो द्वितीयान्तं साध्यनाम तत्पार्श्वयोः 'कुरु-कुरु' तदधो वियद्युक्तं सर्गबीजं लिखेत्। तत ईशानादि-चतुष्कोणेषु 'हंसः सोऽहं' प्राणबीजं चतुर्दिक्षु दिग्बीजानि प्रतिदिशं यन्त्रगायत्रीवर्णान् लिखेत्। ततः प्राणप्रतिष्ठामन्त्रवर्णैश्च यन्त्रं वेष्टयेत्।

(जो साधक यन्त्र को धारण करना चाहता हो वह शुभमुहूर्तवाले दिन प्रातः) शुद्ध स्नान करके, शुद्ध धुले हुए वस्त्र धारण कर मस्तक पर तिलक लगाए तथा 'यन्त्र लिखने के लिए दिखाए गए द्रव्यों से' किसी शुद्ध स्थान पर बैठकर यन्त्र लिखे।

---

१. सोलह संस्कार जिस प्रचार बालक के गर्भ से लेकर जीवन के अन्त तक चलते हैं वैसे ही यहाँ भी होते हैं।

यह यन्त्र चौकोर, दिशाओं के द्वार से युक्त लिखे और इसके बीच में पहले एक लाइन में साधक के नाम के साथ षष्ठी विभक्ति लगाकर लिखे, उसके नीचे 'क्लीं' बीज और उसके नीचे जो कार्य सिद्ध करना हो वह वाक्य द्वितीया विभक्ति लगाकर लिखे। उसके आस-पास 'कुरु-कुरु' लिखे तथा उसके नीचे 'अः' लिखना चाहिए। फिर ईशान आदि चार कोणों में 'हंसः सोऽहं' यह प्राण बीज' लिखे। पूर्व आदि चारों दिशाओं में उन-उन दिशाओं के बीज अथवा इन्द्रवरुण, कुबेर और यम के नामों के साथ चतुर्थी विभक्ति सहित नमः पद जोड़ कर लिखे (अथवा इन चारों देवताओं के आयुधों की आकृति बनाए।) इसके पश्चात् आठों दिशाओं में यन्त्रगायत्री—'यन्त्रराजाय विद्महे, महायन्त्राय धीमहि। तन्नो यन्त्रः प्रचोदयात्।' (इस मन्त्र) के तीन-तीन अक्षर लिखे। तदनन्तर प्राण-प्रतिष्ठा मन्त्र के अक्षर "आं ह्रीं क्रों" से यन्त्र को वेष्टित करे। इसके अनुसार लिखे गए यन्त्र का स्वरूप इस प्रकार होगा—

यन्त्र-प्रतिष्ठा-यन्त्र

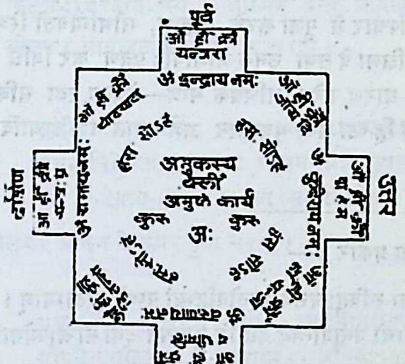

इस प्रकार यन्त्र लिखकर सावधानी से उस पर अपनी इष्ट कार्यसिद्धि के लिए भूर्जपत्रादि पर लिखा हुआ यन्त्र सोना, चाँदी, तांबा आदि के बने तावीज में रखकर उसकी प्राण-प्रतिष्ठा करे।

प्राणप्रतिष्ठा विधि—सबसे पहले एक श्वेत वस्त्र पर सर्वतोभद्र अथवा अष्टदल कमल का आकार चावलों से बनाए। फिर उसके मध्यभाग में कलश-स्थापन करने की विधि से कलश स्थापित करे। उस कलश पर एक पात्र (छोटी थाली या कटोरी) चावल भर कर रखे। और उसमें ऊपर लिखा हुआ यन्त्र खुला हुआ रखकर उसके बीच में (तावीज में रखे हुए) यन्त्र की स्थापना करे।

मण्डलस्य कोणचतुष्टये चतुष्कलशान् संस्थाप्य प्रतिकलशं 'आं ह्रीं क्रों' इति त्र्यक्षरीं विद्यां कूर्चबीजयुतां सहस्रं जपेत् ।

भद्रमण्डल के चारों कोनों पर चार कलश स्थापित कर प्रत्येक पर 'आं ह्रीं क्रों स्वाहा' इस (त्र्यक्षरी) विद्या का एक सहस्र वार जप करे।

ततस्तद्यन्त्रं चतुष्कलशोदकैरभिषेकमन्त्रैरभिषिच्य गन्धादिभिः सम्पूज्य यन्त्रे प्राण-प्रतिष्ठामन्त्रेण यन्त्रदेवताप्राणान् प्रतिष्ठाप्य यन्त्रगायत्र्या यन्त्रं षोडशोपचारैः सम्पूज्य ब्राह्मणान् सुवासिनीः कुमारीश्च सम्भोज्य दक्षिणां दत्त्वा तेषामाशिषो गृहीत्वा यथोक्तांगे यन्त्रं बध्नीयात् ।

तदनन्तर चारों दिशाओं में स्थापित कलशों के जल के द्वारा अभिषेक के मन्त्र बोलते हुए मन्त्र का प्रोक्षण करे फिर गन्ध आदि से उसकी पूजा करके यन्त्र पर प्राण-प्रतिष्ठा के मन्त्रों से यन्त्रदेवता के प्राणों को आवाहित कर प्रतिष्ठित करे तथा यन्त्रगायत्री द्वारा यन्त्र की षोडशोपचार से पूजा करके ब्राह्मण, सौभाग्यवती स्त्रियां और कन्याओं को भोजन कराकर दक्षिणा दे तथा उनके आशीर्वाद ग्रहण कर विधि में बताए अनुसार अपने अंग पर यन्त्र धारण करे। अभिषेक मन्त्र—देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनो[1] इत्यादि अथवा 'आपो हि ष्ठा मयो भुवस्तान ऊर्जे दधात न[2]' इत्यादि तीन मन्त्र बोलने चाहिए।

---

१. पूरे मन्त्र इस प्रकार हैं—

ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
सरस्वत्यै व्वाचो यन्तुर्यन्त्रिये दधामि बृहस्पतेष्ट्वा साम्राज्येनाभिषिञ्चाम्यसौ ॥
ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
सरस्वत्यै व्वाचो यन्तुर्यन्त्रेणाग्नेः साम्राज्येनाभिषिञ्चामि ॥
ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ।
अश्विनोर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिञ्चामि ॥
सरस्वत्यै भैषज्येन व्वीर्य्यायान्नाद्यायाभिषिञ्चामि ।
इन्द्रस्येन्द्रियेण बलाय श्रियै यशसेभिषिञ्चामि ॥

२. ॐ आपो हिष्ठा मयोभुवस्तान ऊर्जे दधातन ।
महेरणाय चक्षसे ॥
ॐ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयते ह नः । उशतीरिव मातरः ।
ॐ तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ । आपो जनयथा च नः ॥

किन्तु सर्व साधारण की सुविधा के लिए हम यहां यन्त्र पूजन-प्रकार हिन्दी अर्थ सहित दे रहे हैं। साधक प्रारम्भ में इसी से लाभ उठाकर भगवत् कृपा प्राप्त करें।[1]

३—सर्वविधि यन्त्र-पूजन-विधि

१. ध्यान—

जिस यन्त्र का पूजन करना हो, उसके अधिष्ठाता देव-देवी का सर्वप्रथम ध्यान करना चाहिए। ध्यान के समय दोनों हाथों की अञ्जलि बनाकर उसमें पुष्प रख ले और ध्यान का श्लोक बोलकर नमस्कार करते हुए अञ्जलि के पुष्प यन्त्र पर इस भावना से चढ़ाए कि देवता इसमें विराजमान हैं।

२. आवाहन—

आगच्छेह महादेव ! सर्वसम्पत्प्रदायक !।
यावज्जपं समाप्येत तावत् त्वं सन्निधौ भव ॥
श्री···/वटुकभैरवदेवाय नमः। अस्मिन् यन्त्रे आवाहनं समर्पयामि।

इतना बोलकर आवाहन के लिए पुष्प चढ़ाए।

३. आसन—

प्रसीद जगतां नाथ संसारार्णव-तारक।
मया निवेदितं भक्त्या आसनं प्रतिगृह्यताम्।
श्री···,देवाय नमः, आसनं समर्पयामि।

यह बोलकर आसन के ऊपर पुष्प चढ़ाए।

४. पाद्य—

गङ्गादि-सर्वतीर्थेभ्यो मया प्रार्थनयाऽऽहृतम्।
तोयमेतत्सुखस्पर्शं पाद्यार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री···/देवाय पाद्यं समर्पयामि।

इससे पाद्य के लिए जल चढ़ाए।

५. अर्घ्य—

निधीनां सर्वदेवानां त्वमनर्घ्यगुणो ह्यसि।
सारमेयस्थ देवेश ! गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते ॥
श्री···/देवाय अर्घ्यं समर्पयामि।

---

१. यहाँ यदि किसी देवी के यन्त्र की पूजा कर रहे हों तो वहाँ 'महादेवि' ऐसा पद बदल कर पढ़ना चाहिये। इसी प्रकार अन्यत्र भी जहाँ देव लिखा हो, वहाँ ! देवि ऐसा पद बदलकर बोलें।

६. आचमन—

कर्पूरेण सुगन्धेन सुरभि स्वादु शीतलम्।
तोयमाचमनीयार्थं देवेदं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री···/देवाय आचमनीयं समर्पयामि।

७. स्नान—

मन्दाकिन्याः समानीतंहेमाम्भोरुहवासितम्।
स्नानं कुरुष्व देवेश! सलिलैश्च सुगन्धिभिः ॥
श्री···/देवाय स्नानं समर्पयामि।

८. पञ्चामृतस्नान—

पयो दधि घृतं चैव मधु च शर्करायुतम्।
पञ्चामृतं मयाऽऽनीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री···/देवाय पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि।

९. उद्वर्तन-स्नान—

नानासुगन्धिद्रव्यं च चन्दनं रजनीयुतम्।
उद्वर्तनं मया दत्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥
देवाय उद्वर्तनं समर्पयामि तदनन्तरं स्नानं
समर्पयामि आचमनीयं च समर्पयामि।

१०. वस्त्र तथा उपवस्त्र—

पट्टकूलयुगं देव! शाटकेन समन्वितम्।
परिधेहि कृपां कृत्वा, प्रसीद परमेश्वर! ॥
श्री···/देवाय वस्त्रं उपवस्त्रं च समर्पयामि।

११. चन्दन—

श्रीखण्डचन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।
विलेपनं च देवेश! चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥
श्री···/देवाय चन्दनं समर्पयामि।

१२. अक्षत—

अक्षतान् निर्मलान् शुभ्रान् मुक्ताफलसमन्वितान्।
गृहाणेमान् महादेव! देहि मे निर्मलां मतिम् ॥
श्री···/देवाय अक्षतान् समर्पयामि।

१३. परिमल द्रव्य—

हरिद्रां कुङ्कुमं चैव सिन्दूरं कज्जलं तथा।
भक्त्या निवेदितं देव! गृह्यतां मङ्गलं कुरु॥
श्री···/देवाय परिमलद्रव्यं समर्पयामि।

१४. पुष्पमाला आदि—

मन्दारपारिजातादि-पाटला-केतकानि च।
जातीचम्पकपुष्पाणि गृहाणेमानि शोभन।
श्री···/देवाय पुष्पाणि समर्पयामि।

१५. धूप—

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥
श्री···/देवाय धूपं समर्पयामि।

१६. दीप—

आज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया।
दीपं गृहाण देवेश! त्रैलोक्यतिमिरापहम्॥
श्री···/देवाय दीपं दर्शयामि।

१७. नैवेद्य, फल आदि—

अन्नं चतुर्विधं स्वादु रसैः षड्भिः समन्वितम्।
नैवेद्यं गृह्यतां देव! भक्तिं मे निश्चलां कुरु॥
श्री···/देवाय नैवेद्यं फलं च समर्पयामि।

१८. ताम्बूल (पान सुपारी)—

एलालवङ्गकस्तूरीकर्पूरैश्च सुवासितम्।
ताम्बूलं मुखवासार्थमर्पयामि सुरेश्वर!॥
श्री···/देवाय ताम्बूलं समर्पयामि।

१९. दक्षिणा—

पूजाफलसमृद्ध्यर्थं तवाग्रे द्रव्यदक्षिणा।
स्थापिता तव प्रीत्यर्थं पूर्णान् कुरु मनोरथान्॥
श्री···/देवाय दक्षिणां समर्पयामि।

२०. आरती—

दीपवर्तिसमायुक्तं कर्पूरेण समन्वितम्।
आरार्तिक्यं तव प्रीत्यै भक्त्या देव समर्पये॥
श्री···/देवाय आरार्तिक्यं समर्पयामि।

२१. पुष्पाञ्जलि—

नानासुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च।
पुष्पाञ्जलौ प्रदत्तानि गृहाण परमेश्वर॥
श्री···/देवाय पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि।

२२. प्रदक्षिणा—

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण-पदे पदे॥

२३. प्रार्थना—

अपराध-सहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया।
दासोऽयमिति मां मत्वा क्षम्यतां परमेश्वर॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वर।
यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे॥

यह पूजाविधि अधिक न हो सके तो यन्त्र-पूजन अथवा यन्त्र-धारण करने से पूर्व एक बार अवश्य करें। बाद में मन्त्र न बोलकर केवल उनके नीचे लिखी हुई पंक्तियों को बोलकर ही पूजा कर लेनी चाहिए। ऐसा करने से मन की पवित्रता, वातावरण की शुद्धता, भावों की एकाग्रता तथा उत्साह की तीव्रता प्राप्त होती है। पूजा को उपासना का मुख्य अंग माना गया है। ऊपर बताई गई पूजा-विधि में सामान्यतः न्यूनाधिकता हो सकती है तथा मन्त्रों में भी पाठान्तर या अन्य मन्त्र भी बहुत से प्राप्त होते हैं। वैदिक मन्त्रों के द्वारा पूजा करने के इच्छुक 'पुरुषसूक्त' के सोलह मन्त्रों से पुरुष-देवों की और 'श्रीसूक्त' के सोलह मन्त्रों से स्त्रीदेवियों की पूजा करते हैं। नाममन्त्र अथवा इष्टमन्त्र से भी यह पूजा की जा सकती है। यदि यह पूजा करने में कोई साधक अपने को असमर्थ समझे तो किसी विद्वान् पुरोहित से करवा ले।

—×—

१. सर्वसिद्धिप्रद श्रीबटुक-भैरव यन्त्र

'रुद्रयामल' में 'वटुक-भैरव-यन्त्र' का उद्धार इस प्रकार दिया है—

त्रिकोणं च तथा दत्वा षट्कोणं च ततो न्यसेत्।
ततश्च वलयं कुर्याच्चतुष्कोणं ततश्चरेत् ॥१३॥
मन्त्रं दलं समारभ्य मन्त्राक्षराणि पूरयेत्।
उपरि तानि सव्येन सर्वाणि पूरयेत् क्रमात् ॥१४॥
उर्वरितदले तत्र लक्ष्मीवीजं न्यसेत् सदा।
दिक्पालांश्च समारोप्य कोणेऽष्टभैरवान् लिखेत् ॥ १५ ॥

इसके अनुसार त्रिकोण, षट्कोण, वृत्त और चतुष्कोण में यह मन्त्र बनता है तथा इसमें मूल-मन्त्र के दक्षिण क्रम से वर्ण लिखे। बीच में 'श्रीं' बीज तथा आठों कोणों में अष्ट भैरवों के नाम लिखे।[1]

इस मन्त्र की प्रतिष्ठा करके विधिवत् पूजा करे तथा श्रीवटुकभगवान् की प्रसन्नता के लिये मन्त्र के अक्षरों की संख्या २१ के अनुसार कच्चे सूत की वत्तियां बनाकर शुद्ध घृत का दीप जलाकर नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर दीपक अर्पित करे—

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं श्रीं वं सर्वज्ञाय महाबाल पराक्रमाय वटुकाय इमं दीपं गृहाण सर्वकार्यार्थसाधकाय दुष्टान्नाशय २ त्रासय २ सर्वतो मम रक्षां कुरु २ फट् स्वाहा।

तदनन्तर मूलमन्त्र से तीन आचमन कर हस्त-प्रक्षालन करे तथा इसके पश्चात् मन्त्रजप करे। इससे सर्वकार्यसिद्धि होती है।

२. श्रीबटुकभैरव-यन्त्र (आयुरारोग्यैश्वर्यकर)

अष्टदल, षट्कोण तथा त्रिकोण से भी भैरव-मन्त्र की रचना की जाती है। जिसमें अष्टभैरव आसिताङ्गादि अष्टदल में, षडङ्ग षट्कोण में, डाकिनीपुत्रादि त्रयोदश पुत्र-वर्ग षट्कोण के बाहर तथा मध्य में, बाह्य कमलपत्रों में दस लोकेशवटुक दसों दिशाओं में, पुनः वहीं श्रीकण्ठादि और बाह्यभाग में क्रोधीश्वरादि तथा ३ नकुलीशादि, दिव्य, अन्तरिक्ष एवं भौम योगीश शाकिनीसहित पूजा की जाती है।

इस मन्त्र की आराधना से आयु, आरोग्य तथा ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है।

१—इस यन्त्र की आकृति पहले दी गई है।

३. सर्वकामप्रद-भैरवयन्त्र

अथ यन्त्रं प्रवक्ष्यामि बटुकस्य सुरार्चिते।
आलिख्याष्टदलं पद्मं कर्णिकायां समालिखेत्॥

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं क्षौमिति तत्पत्रेषु परमेश्वरि।
बटुकायेत्यक्षराणि द्विरावृत्य लिखेत् प्रिये॥

बहिः षोडश पत्राढ्यं पद्मं कृत्वा सुशोभनम्।
तत्पत्रे लिखेद् देवि शिष्टान् वर्णांस्तु षोडश॥

मन्त्रश्च तद्बहिश्चापि पद्मं षोडशपत्रकम्।
तत्र तेषु लिखेद् देवि स्वरान् षोडश सुव्रते॥

द्वात्रिंशत्पत्रसंयुक्तं पद्मं कृत्वाऽथ तद्बहिः।
कादिक्षान्तांल्लिखेत्तस्य पत्रेषु परमेश्वरि॥

वेष्टयेच्चतुरस्रेण यन्त्रमेतद्वरानने।

(बटुकभैरवोपासना ४६३-४६७)

इसके अनुसार यह यन्त्र ८ दल, १६ दल, १६ दल, ३२ दल और चतुरस्र-भूपुर द्वारा बनता है तथा इसमें बीजमन्त्र, मन्त्राक्षर और वर्णमाला का आलेखन किया जाता है। इसका स्वरूप इस प्रकार है।

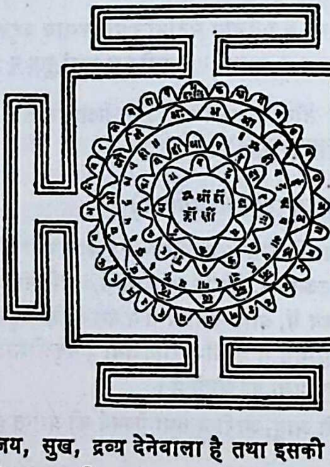

यह यन्त्र जय, सुख, द्रव्य देनेवाला है तथा इसकी उपासना-पूजा अथवा धारण करने से मृत्यु, दारिद्रय, व्याधि, दुष्टग्रह, भूत-बाधा, अपस्मार, कृत्या आदि का नाश होकर सुरक्षा प्राप्त होती है।

४. सर्वकामना-पूरक तथा सर्वमोहन यन्त्र

इस तन्त्र का 'त्रोतल-तन्त्र' में उद्धार इस प्रकार है—

व्योमाब्जं वसुपत्रकेसरधरं शक्त्यावरं षड्दलं,
पद्मं चाष्टदलं ततः सुविमलं भागेह दीप्तौ विलम् ।।
वेदद्वारविशालसुन्दरतरं पुष्पादिगन्धोत्कटं,
श्रीमद्भैरवसर्वमोहनकरं यन्त्रं त्वदीयं भजे ।।

इसके अनुसार यह यन्त्र 'त्रिकोण, केसर एवं पत्रों से युक्त अष्टदल, षड्दल और अष्ट दल से बनाकर बाहर भूपुर की रचना करने से बनता है। सुगन्धित पुष्पों से इसकी विशेष अर्चना करने से श्रीभैरवनाथ की कृपा-प्राप्ति होकर सर्वकामना-पूर्ति एवं सर्व-मोहन होता है।

५. सर्वसिद्धिकर वटुक भैरव-यन्त्र

पांच रेखाओं से निर्मित होनेवाला यह तन्त्र एक त्रिकोण (ऊर्ध्वमुख) तथा उसमें वाम और दक्षिण की दो-दो रेखाओं से बनता है।

उसमें ऊपर 'ह्रीं', वामभाग में 'कुं', दक्षिण भाग में वं' तथा बीच में 'देवदत्त' लिखा जाता है। देवदत्त के स्थान पर कामना अथवा साध्य कार्य का उल्लेख करना चाहिये। इसकी विधि इस प्रकार है—

प्रथम कांस्यपात्र में सिन्दूर का चौंका लगायें, उसमें यन्त्र लिखें। तत्पश्चात् संकल्प करके आवाहनादि षोडशोपचार पूजा करें। यन्त्र के समक्ष विशेष रूप से नैवेद्य में—उर्द की दाल के बड़े तिल्ली के तैल में तले हुए, दही में मिला सिन्दूर उनपर लगा-कर, कच्चा दूध गुड़ मिला हुआ, भुना हुआ केला, नुक्ती के लड्डू और इमरती।

लाल कनेर तथा गुडहल के पुष्पों से पूजन करें। रात्रि के ६ बजे से ३ बजे तक यन्त्र के समक्ष मन्त्रजप करके जितना जप किया हो उसका दशांश हवन घी, शुद्ध शहद तथा चीनी से करें। यह प्रयोग ११ दिन तक करने से सर्वविध कार्यसिद्धि होती है।

आगमों और तन्त्रों में इस प्रकार के अनेक यन्त्र उपलब्ध होते हैं। शास्त्रीय एवं लौकिक पद्धतियों के आधार पर साधकगण ऐसे यन्त्र पुरश्चरणादि विधानपूर्वक सिद्ध करके अपनी तथा अन्य भावुकजनों का कल्याण करते रहते हैं। इस प्रकार के बहुत-से यन्त्रों का विस्तार से परिचय प्राप्त करने के लिए पाठक गण हमारी पुस्तकें 'यन्त्र-शक्ति' (भाग १ तथा २) का अवलोकन करें। इनमें परिचय तथा प्रयोग दोनों ही इस मार्ग में पूर्ण सहायक होंगे, प्रत्येक यन्त्र की धारणा विधि, प्रतिष्ठाविधि और पूजा-विधि का ज्ञान भी अत्यावश्यक है, जिसे यहां पहले दिया गया है, उसका उपयोग करें।

श्री बटुक-भैरव-तन्त्र-साधना

हमारी समस्त साधनाएँ परस्पर एक-दूसरी से घुली-मिली हुई हैं किन्तु वेदान्त के पञ्चीकरण की भाँति जब जिसकी जिसमें अधिकता होती है, वह उसी की साधना कह-लाती हैं। जैसे मन्त्र की प्रधानता रहने पर 'मन्त्र-साधना' और तन्त्र की प्रधानता रहने पर 'तन्त्र-साधना'। किन्तु उसका यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि जब तन्त्र की साधना की जाए तो उसमें मन्त्र अथवा यन्त्र का समावेश न हो, अथवा योग एवं अन्य पद्धति-विशेष का उसमें आश्रय नहीं लिया जाए ?

श्रीवटुक-भैरव की तन्त्र-साधना भी इसी प्रकार की एक साधना है। इसमें मुख्य-रूप से कार्यभेद के आधार पर हवन-वस्तु के प्रयोग और दीपदान के प्रयोग आते हैं। किस वस्तु का किस कार्य में उपयोग करना चाहिये यह बात प्रत्येक साधक को विस्तार-पूर्वक समझ लेना चाहिये इसी के आधार पर कार्य-सिद्धि अवलम्बित है। ऐसे विषयों को विशेष रूप से 'पटल' में व्यक्त किया जाता है। 'श्रीवटुक-भैरव-पटल' में से कुछ ज्ञातव्य विषयों का निर्देश यहां पाठकों की सुविधा के लिये हम दे रहे हैं—

'शिवागमसार' में प्रदर्शित 'पटल' में कहा गया है कि—

अन्ये देवास्तु कालेन प्रसन्नाः सम्भवन्ति हि।
वटुकः सेवितः सद्यः प्रसीदति ध्रुवं शिवे ॥६॥

अर्थात्—अन्य देवता तो दीर्घकाल तक उपासना करने के पश्चात् प्रसन्न होते हैं, किन्तु हे पार्वती ! श्री वटुकभैरव नाथ तो उपासित होने पर शीघ्र ही प्रसन्न हो जाते हैं, यह ध्रुव है। और इसी लिये सर्वकामनाओं की सिद्धि के लिये श्रीवटुकभैरव की उपा-सना करनी चाहिये।' इसी प्रसंग में यह भी कहा गया है कि—'साधक को सर्वप्रथम वीर-शान्ति करनी चाहिये, क्योंकि वे श्रीभैरवनाथ की आज्ञा से अपूजित रहने पर साधकों के मनोरथों को नष्ट करते रहते हैं।

१. वीरशान्ति प्रयोग

इस दृष्टि से सर्वप्रथम साधक अपने समक्ष 'अष्टदल, षोडशदल, अष्टदल और भूपुर' से युक्त एक मण्डल बनाकर उसमें मूलमन्त्र द्वारा अष्टभैरव, षोडश भैरव, अष्ट-मातृका तथा दशदिग्पालों की पूजा करके पायस का नैवेद्य अर्पित करे। तदनन्तर वीर-शान्ति का पाठ करते हुए १-चण्ड, २-प्रचण्ड, ३-ऊर्ध्वकेश, ४-भीषण, ५-अभीषण, ६-व्योमकेश, ७-व्योम-बाहु तथा ८-व्योम-व्यापक' इन आठ वीरों की आवाहनादिपूर्वक नैवेद्य-समर्पणान्त पूजा करे।

२. वन्ध्या पुत्रप्रद-प्रयोग

आधा पल हल्दी और उतना ही वचा (वछ) का चूर्ण गोमूत्र तथा गोघृत मिला कर उसकी गोली बनाये तथा उसे कमल की पंखुडी में रखकर वटुकनाथ के समक्ष रखे और १००० संख्या में मन्त्र का जप करे। बाद में उसे महौषधि के रूप में प्रभुप्राप्ति की कामना से वह गोली खिला दे तो पुत्रप्राप्ति होगी। वह पुत्र आयुष्मान्, धन-धान्य से युक्त, विद्या एवं बल से सम्पन्न तथा सुन्दर आकृति वाला होगा।

३. श्रीवटुकभैरव-षट्कर्मप्रयोगविधिः

(रुद्रयामलतन्त्रे एकदिवसीयप्रयोगः)

१—स्तम्भनप्रयोगः

रविवार के दिन प्रातःकाल श्मशान में जाकर मूलमन्त्र का १०,००० जप करे तथा अर्ध रात्रि के समय जायफल, जावित्री तथा कनेर के फूल घृत में मिलाकर दशांश हवन करे तो शत्रुस्तम्भ हो।

२—मोहनप्रयोगः

सोमवार को मध्याह्न के समय कूपजल से स्नान कर गूणी में बैठकर मूलमन्त्र का १०,००० जप करे तथा महिष का घृत, दही और चीनी इनको मिलाकर हवन करे तथा हवन का तिलक करे तो जो देखे वही वश में हो।

३—मारणप्रयोगः

मंगलवार को अर्धरात्रि के समय चौराहे पर जाकर मूलमन्त्र का १०,००० जप करे। घृत, खीर, लाल चन्दन व स्त्री के केश मिलाकर दशांश हवन करे तो काल के समान होने पर भी शत्रु अवश्य नाश को प्राप्त हो।

४—आकर्षणप्रयोगः

बुधवार को चार घड़ी सूर्य रहे तब सूने घर में जाकर मूलमन्त्र का जप १०,००० करे। फिर घृत, खांड, सनैली का फूल अथवा कनेर के फूल विल्व का फल, इन सब की दशांश आहुति दे तो रम्भादिक अप्सरा भी आकर्षित हों।

५—वशीकरणप्रयोगः

बृहस्पतिवार को प्रातःकाल सूर्योदय के समय नदी के किनारे जाकर मूलमन्त्र का १०,००० जप करे तथा घृत, आंवला और विल्वफल का दशांश हवन करे तो वशीकरण हो।

६—उच्चाटनप्रयोगः

शुक्रवार के दिन सायंकाल वटवृक्ष के नीचे बैठ कर मूलमन्त्र का १०,००० जप

करे फिर घृत, दूध, दही, ईख का रस, गोमूत्र और खीर मिलाकर दशांश का हवन करे तो शत्रु का उच्चाटन हो।

(१) अथ मूलमन्त्रः

ॐ ह्रीं वटुकाय आपदुद्धारणं कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं ॐ स्वाहा ॥

(२) भैरवमन्त्रः

ॐ वं वं वं वटुकभैरवाय नमः। कृष्णभैरवाय नमः।

४. विविध-हवन-सामग्री-प्रयोग

१. वशीकरण के लिये—लाल पुष्प।
२. लक्ष्मीप्राप्ति के लिये—कमलपुष्प।
३. दीर्घ आयु के लिये—दूर्वा।
४. कुरोगनाश के लिये—गुड।
५. वस्त्र प्राप्ति के लिये—वस्त्र।
६. धान्यप्राप्ति के लिये—धान्य।
७. सर्वसिद्धि के लिये—पुत्रजीवफल।
८. पुत्र प्राप्ति के लिए—अश्वत्थसमिधा।
९. शत्रुनाश के लिये—लवण-घृत।
१०. वाक्सिद्धि के लिये—पलाशपुष्प।
११. कवित्वप्राप्ति के लिये—कर्पूर-अगरु-गूगल।
१२. राजवश्य के लिये—सरसों तथा पटसन।
१३. अन्नवृद्धि के लिये—घृताक्त अन्न।
१४. चिरंजीविता के लिये—लाजा और घृत।

इसी प्रकार वहुत-सी वस्तुओं के द्वारा 'तिलक' करने से, 'अञ्जन' वनाकर लगाने से, 'मार्जन' करने से तथा अन्य तान्त्रिक विधानों से भी कार्यसिद्धियाँ होती हैं।[1]

इन सब में श्रीवटुकभैरव का मन्त्र-जप आवश्यक है। आपदुद्धारक वटुक-भैरव-अष्टोत्तर शत नामावली का पाठ भी इन कार्यों की सिद्धि के लिये अत्यन्त उपयोगी माना गया है। ग्रहण अथवा उत्तम पर्वों के अवसर पर मन्त्र का पुरश्चरण कर लेने से ये प्रयोग शीघ्र फल-प्रदान करनेवाले कहे गये हैं।

---

१. तन्त्र सम्बन्धी सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करने के लिये देखिये हमारी पुस्तक 'तन्त्रशक्ति'

अथ श्रीबटुकभैरव-दीपदान-विधिः

दीपदान-माहात्म्य

जिस प्रकार तन्त्रों में अन्यान्य प्रयोगों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने के लिए भगवती पार्वती ने प्रश्न किये हैं और उनके उत्तर में शिवजी ने उत्तर देते हुए प्रयोग दिखलाए हैं, उसी प्रकार रुद्रयामल[1] में श्रीपार्वती ने पूछा कि—हे देव ! ऐसा कोई प्रयोग बतलाइए कि जिसके करने से षट्कर्म-साधना सरलता से हो सके ? इसके उत्तर में भगवान् शिव ने बताया कि—हे देवि ! आपत्ति के समय दीपदान करना चाहिए। इस प्रयोग के लिए तिथि, नक्षत्र, करण, राशि, सूर्यादिग्रह-विचार आदि अपेक्षित नहीं हैं और इसी सम्बन्ध में विस्तार से पात्र-निर्माण वस्तु, पात्रमान, आकार, घृत-तैलमान, वर्तिकामान, आधार भूमि (वेदी), विघ्ननाशन के लिए अन्य देवपूजन एवं दीपदान, कीलक खनन आदि अनेक बातें समझाई हैं। इसी प्रकार कामना की दृष्टि से कर्तव्य कर्म का संकेत भी वहीं किया है। वैसे तान्त्रिक-कर्मों की साधना सामान्यतः गुरु द्वारा ही सीखनी चाहिए तथापि हम सर्वसाधारण के लिए सरल एवं साररूप में परिचय एवं विधि यहां दे रहे हैं।

१. दीपदान-परिचय—

हमारे सभी उपासना-कर्मों में दीपदान का बड़ा महत्त्व है। सूर्य, चन्द्र और अग्नि ये तीनों तेजोमय देव कर्मसाक्षी है। दीपदान के दो प्रकार हैं—१. पूजा अथवा पाठ के आरम्भ से पूर्व और २. पाठ-पूजन समाप्ति के पश्चात्। वैसे कामना-विशेष की दृष्टि से

---

१. यथा :—

श्रीपार्वत्युवाच।

यत्सूचितं पुरा नाथ ! वृद्धि वै बटुकस्य च ।
येन विज्ञातमात्रेण षट्कर्माणि साधयेत् ॥

× × × ×

आपत्काले महादेवि ! दीपदानं समाचरेत् ।
न तिथिर्न च नक्षत्रं न योगो [illegible] कारणम् ॥

इत्यादि ।

दीपदान का स्वतन्त्र विधान भी है। यहाँ हम कामना-विशेष से सम्बद्ध प्रयोग की विधि दे रहे हैं।

२. दीपदान-काल—

(क) ऋतु—वसन्त, हेमन्त, शिशिर, वर्षा और शरद् ये ऋतुएँ दीपदान के लिए उत्तम मानी गई हैं।

(ख) मास—वैशाख, श्रावण, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ और फाल्गुन मास दीपदान के लिए उत्तम हैं।

(ग) पक्ष—शुक्ल पक्ष उत्तम है। कृष्णपक्ष मध्यम।

(घ) तिथि—प्रतिपदा, द्वितीया, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, द्वादशी, त्रयोदशी और पूर्णिमा उत्तम हैं।

(ङ) नक्षत्र—रोहिणी, आर्द्रा, पुष्य, तीनों उत्तरा, हस्त, स्वाती, विशाखा, ज्येष्ठा और श्रवण उत्तम हैं।

(च) योग—सौभाग्य, शोभन, प्रीति, सुकर्म, धृति, वृद्धि, हर्षण, व्यतीपात और वैधृत उत्तम हैं।

(छ) विशेष—सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, संक्रान्ति, कृष्ण पक्ष की अष्टमी, दुर्गोत्सव नवरात्रि एवं महापर्व पर विशेष लाभप्रद।

(ज) समय—प्रातः, सायं, मध्यरात्रि तथा अन्य यज्ञ कर्म की पूर्णाहुति से पूर्व।

३. दीपदान-सामग्री—

(१) कपिला गौ का गोमय, (२) इमली और आँवले का चूर्ण, (३) कामना के अनुसार दीपपात्र, (४) कामना के अनुसार घृत अथवा तैल, (५) संकल्पानुसार वत्तियाँ, (६) आधार यन्त्र, (७) अखण्ड चावल, (८) रक्त चन्दन, (९) करवीर, (५ पत्ती वाले) लाल फूल, (१०) रेशमी लाल-वस्त्र, (११) पञ्चगव्य, (१२) शलाका (वत्ती चलाने के लिये), (१३) एक जोड़ा वस्त्र, (१४) नारियल, (१५) विल्वफल, (१६) चन्दन, (१७) ताँबे का कलश, (१८) सुपारी, (१९) अष्टगन्ध, (२०) ऋतु फल, (२१) पंच पल्लव, (२२) कुंकुम, सिन्दूर आदि पूजन सामग्री, (२३) ब्राह्मणवरण सामग्री, (२४) दक्षिणा और (२५) नैवेद्य आदि, (२६) खदिर (खैर) की लकड़ी के बने ८ कीले, (२७) एक हाथ लम्बा भैरव दण्ड, (२८) माष एवं चावल पकाए हुए तथा (२९) छुरी-कटार।

दीपक सम्बन्धी कुछ शास्त्रीय प्रमाण—

अष्टपलं घृतदीपं यात्राकाले प्रकल्पयेत्।
तस्य मार्गे भयं नास्ति स्वस्थश्च गृहमाप्नुयात् ॥१॥

८ पल घृत का ८ पल के धातुपात्र में दीपदान करने से यात्रा में किसी प्रकार का भय नहीं होता है तथा दीपदान कर्त्ता सकुशल अपने घर लौट आता है। (एक पल ४ तोले का होता है।)

दशपलमितं तैलं प्रत्यहं सप्तवासरे।
राजवश्यकरं क्षिप्रं यदि साक्षाज्जगत्पतिः ॥२॥

दस पल तेल से प्रतिदिन दस पल के पात्र में में सात दिन तक (रात्रि में) दीपदान करने से यदि राजा साक्षात् जगत्पति हो, तब भी वह वश में हो जाता है।

दशपलमिते पात्रे बुध्नोच्छ्राये तु त्रिंशवत्।

इस दस पल मान वाले पात्र की ऊँचाई ६ अंगुल होनी चाहिये तथा (तीस तन्तुओं से बनी हुई बत्ती का प्रयोग करना चाहिये)।

एकादशपले पात्रे बुध्नोच्छ्रायं तु पूर्ववत् ॥३॥
नृपपलमिते तैले ग्रहपीडानिवारणम् ॥ (पूर्ववदिति षडङ्गुलम्) ॥४॥

६ अंगुल की ऊँचाई वाले ११ पल के पात्र में १६ पल तैल से दीपदान करने पर ग्रहपीडा का निवारण होता है।

द्वाविंशत्पलसङ्ख्याकं तैलं तत्र तदर्धकम्।
चतुर्विंशतिसङ्ख्याकैस्तन्तुभिर्वर्त्तिका भवेत् ॥४॥
मारणोच्चाटने चैव मानमेतत् प्रकीर्त्तितम्।

३२ पल के पात्र में १६ पल तैल से २४ तन्तुओं की बत्ती बनाकर दीपदान करने से मारण, उच्चाटन आदि कार्य होते हैं।

नृपपलमिते पात्रे उच्छ्रायं च रसाङ्गुलम् ॥५॥
विंशतिपलमिते दीपे प्रत्यहं विंशतिर्दिनम्।
सर्वरोगविनाशाय क्षयापस्मार-दारणे ॥६॥

२० पल घृत से १६ पल के पात्र में, जिसकी ऊँचाई पर ६ अंगुल की हो, ऐसा दीप २० दिन तक अर्पित करने से क्षय एवं अपस्मार जैसे अति दारुण रोग भी नष्ट हो जाते हैं।

एकादशपले पात्रे उच्छ्रायं चैव पूर्ववत्।
पञ्चविंशत्पले तैले दीपे भूतादिनाशनम्[1] ॥७॥

---

१. यहीं एक पंक्ति और है—

एकादशपलैः पात्रे भूतोपद्रव-नाशनम्।

ग्यारह पल से बनाये गए पात्र में दीपदान करने से भूतादि के उपद्रव नष्ट होते हैं। (सर्वजन-वशीकरण के लिए भी इसकी सूचना है।)

६ अंगुल की ऊँचाई वाले ११ पल के पात्र में २५ पले तैल का दीप समर्पित करने से भूतवाधा नष्ट होती है।

त्रिशत्पलमिते पात्रे वुध्नोच्छ्राये तु पूर्ववत्।
त्रिशत्पलमिते तैले क्षुद्ररोगविनाशकृत् ॥८॥

६ अंगुल की ऊँचाई वाले २० पल के पात्र में ३० पल तैल का दीप अर्पित करने से क्षुद्र रोग नष्ट होते हैं।

त्रिशत्पलमिते पात्रे मानं चैव तु पूर्ववत्।
पञ्चाशत्पलं गव्यं (?) वश्ये चौर्य्यादिकर्मणि ॥९॥

६ अंगुल की ऊँचाई वाले ३० पल के पात्र में ५० पल घृत का दीपदान करने से राजवश्य एवं चोरी की शान्ति होती है।

त्रिशत्पलमिते पात्रे दिनान्येकोनविंशति।
कन्याभिकांक्षी तैलेन प्रत्यहं दीपमाचरेत् ॥१०॥
ईप्सितां लभते कन्यां भैरवस्य प्रसादतः।

३० पल के पात्र में १९ दिन तक प्रतिदिन तैल का दीपदान करने से कन्याप्राप्ति के इच्छुक को श्रीभैरव की कृपा से इच्छित कन्या प्राप्त होती है।

षष्टिपलमिते पात्रे वुध्नोच्छ्राये नवाङ्गुलम् ॥११॥
अङ्गुलानि चतुर्विंशत्यायामे परिकल्पयेत्।
पञ्चसप्तमिते तैले सर्वशत्रुविनाशनम् ॥१२॥

९ अंगुल की ऊँचाई वाले ६० पल के तथा २४ अंगुल चौड़े पात्र में ७५ बत्तियों वाला दीपक जलाने से सर्वशत्रुओं का नाश होता है।

द्विपञ्चाशत्पले पात्रे बुध्नोच्छ्राये तु षष्टिवत्।
शतपलमिते तैले दीपाद् वैरिविनाशनम् ॥१३॥

९ अंगुल की ऊँचाई वाले, ५२ पल के पात्र में १०० पल तैल भरकर दीपदान करने से शत्रुनाश होता है।

शतपलमिते पात्रे बुध्नोच्छ्राये तु षोडश।
आयामं तु भवेत् सार्द्धं चतुर्विंशतिरङ्गुलैः ॥१४॥
तन्मध्ये तु प्रकर्तव्यो दीपः शतत्रयात्मकः।
सिंहव्याघ्रादिसर्पाणां भयं नैव प्रजायते ॥१५॥

१६ अंगुल की ऊँचाई, २४ १/२ अंगुल चौड़े तथा सौ पल के भारवाले पात्र में ३०० वत्तियों का दीपक करने से सिंह, वाघ और सर्पादि का भय नष्ट होता है।

शतपलमिते पात्रे उच्छ्रायो द्वादशाङ्गुलम्।
द्वात्रिंशच्चैव आयामे तन्मध्ये च सहस्रकम् ॥१६॥
शतपलमिते दीपे मेधाऽऽरोग्यविवर्धनम्।

१२ अंगुल की ऊँचाई, ३२ अंगुल की चौड़ाई तथा १०० पल के भारवाले दीप में १००० वत्तियाँ जला कर दीपदान करने से उत्तम बुद्धि और आरोग्य की वृद्धि होती है।

सहस्रपलदीपे तु पात्रं शतपलं स्मृतम् ॥१७॥
शत्रुगृहीतराज्यस्य पुनः प्राप्तिश्च सुन्दरि !।
सर्वकर्मणि सिद्धिः स्याद् दीपे पलसहस्रके ॥१८॥

१०० पल के पात्र में १००० पल घृत से दीपदान करने पर हे सुन्दरि ! शत्रु के द्वारा छीने गए राज्य की पुनः प्राप्ति होती है तथा सब कार्यों में सिद्धि प्राप्त होती है।

सपादशतपात्रे च पञ्चोत्तरशताधिके।
पञ्चदशाङ्गुलोच्छ्राय आयामे षट्त्रिंशके ॥१६॥
अयुतपलदीपश्च निगडाद् वन्दिमुक्तये।

१५ अंगुल ऊँचाई तथा १०५ पल के भारवाले पात्र में दस हजार पल तैल से दीपदान करने पर कारागार से मुक्ति होती है।

शतमष्टोत्तरं चाथ पलानि प्रथमे विधौ ॥२०॥
अष्टाशीतिर्द्वितीये च तथाष्टाविंशतिः प्रिये।
सर्वकार्येषु देवेशि ! संख्या प्रोक्ता त्रिधाऽत्र वै ॥२१॥

हे देवेशि ! यहाँ सब कार्य की सिद्धि के लिए २०८, ८८ अथवा २८ इस प्रकार तीन तरह की वत्तियों की संख्या वताई गई है।

नित्य दीप करने के लिए ३ पल का पात्र, १ पल अथवा ३ पल घृत २१ तन्तुओं की वत्ती उत्तम मानी गई है।

उपर्युक्त सभी वातों को सूत्ररूप में अन्यत्र इस प्रकार बतलाया है—

दीपपात्र निर्माण वस्तु-विचार—

महत्कार्ये सौवर्णम्। वश्ये राजतम्। क्वचित् ताम्रमपि। विद्वेषणे कांस्यम्।

मारणे लोहम्। उच्चाटने मृण्मयम्। विवादे गोधूमपिष्टजम्। मुखस्तम्भे माषपिष्टजम्। शान्तौ मौद्गम्। सन्धौ नदीकूलद्वयमृदा। सर्वालाभे ताम्रमेव वा कुर्यात्।

महान् कार्य की सिद्धि के लिए सुवर्ण का, वशीकरण में चांदी का अथवा ताम्र का, विद्वेष में कांसे का, मारण में लोहे का, उच्चाटन में मिट्टी का, विवाद में गेहूं के आटे का, मुख-स्तम्भन में माष के चूर्ण का, शान्ति में मूंग के चूर्ण का, सन्धि में नदी के दोनों किनारों की मिट्टी का तथा उपर्युक्त वस्तुओं का अभाव रहने पर ताम्र का दीपपात्र बनाना चाहिये।

पात्र-रचना-प्रकार—

पात्रघट्टने तु द्रव्यमानेन गौरवलाघवो न्याय्यः। कञ्चन एकमंशं परिकल्प्य तदादि षड्भिस्तैस्तन्मूलं रचयेत् षोडशभिरायतं वर्तुलं कुर्यात्। षड्भिर्भूमेरुन्नतम्। तच्च मूलेन षडङ्गुलं विस्तृतं षडङ्गुलोच्चम् उपरि षोडशाङ्गुलाऽऽयामं दीपपात्रं कुर्यात्। मूले द्वादशदशाष्टषट्पञ्चचतुस्त्र्यङ्गुलमिति केचित्।

पात्र की रचना में उसमें द्रव्य के मान से गुरुता और लघुता का निर्णय करना चाहिये। (अपनी अपेक्षा के अनुसार) किसी एक अंश की कल्पना करके उसके छह अंश की गहराई, १६ अंश की गोलाई, छह अंगुल की ऊँचाई और ऊपर से १६ अंगुल की चौड़ाई वाला दीपपात्र बनाना चाहिए। कुछ आचार्यों का मत है कि मूल की गहराई क्रमशः १२, १०, ८, ६, ५, ४ और ३ अंगुल के आधार पर होनी चाहिए।

घृत-तैल के तौल की दृष्टि से पात्र का भार

तच्चाऽयुतपलघृते पञ्चशतपलम्। सहस्रत्रयपले सपादशतपलम् (१२५)। सहस्रद्वये पंचदशाधिकशतपलं (११५)। सहस्रे शतपलं (१००)। शतत्रयेऽपि शतपलमेव। शते पले द्विपंचाशत्पलम् (५२)। पादोनशतपले षष्टिपलम् (६०)। शतार्धपले त्रिंशत्पलं (३०)। त्रिंशत्पले विंशत्पलम् (२०)। विंशतिपले षोडशपलम् (१६) दशपले दशपलम् (१०)। प्रमाणाऽनुक्तौ एकादशपलम् (११)। नित्यदीपे तु त्रिपलम्।

घृत अथवा तैल यदि १०,००० पल हो तो ५०० पल का पात्र, ३००० पल हो तो १२५ पल, २००० पल होने पर ११५ पल, १००० अथवा ३०० पल होने पर १०० पल, १०० पल होने पर ५२ पल, ७५ पल होने पर ६० पल, ५० पल होने पर ३० पल, ३० पल होने पर २० पल, २० पल होने पर १६ पल, १० पल होने पर २ पल, जहाँ प्रमाण नहीं बताया हो वहाँ ११ पल तथा नित्य पूजन में ३ पल का दीपपात्र होना चाहिए।

घृत एवं तैल के दीपक का फल तथा तौल का विचार

तत्र गोघृते सर्वसिद्धिः। मारणे माहिषम्। विद्वेषणे औष्ट्रम्। शान्तिके आविकम्।

उच्चाटने आजम्। सर्वार्थसिद्धौ तिलतैलम्। मारणे सार्षपम्। मुखरोगे मुखदुर्गन्धे वा पुष्पवासिततैलम्॥ कामनाभेदेन द्रव्यमानम्॥ राज्यप्राप्त्यै दशसहस्रपलानि। निगडबन्ध-मोक्षे त्रिसहस्रम्। द्विसहस्रमेकसहस्रं वा। नष्टवस्तुप्राप्त्यै एक सहस्रम्। सर्वकार्यसिद्धौ च एकसहस्रम्। सिंहव्याघ्रसर्पादिशान्त्यै त्रिशतम्। शत्रुपराजये पादोनशतम्। वश्ये सन्धौ चौरभयशान्त्यै च पंचाशत्पलम्। कन्याप्राप्त्यै एक-विंशतिदिन-पर्यन्तं प्रत्यहं त्रि-शत्पलम्। रोगनिवृत्तये चतुर्दशदिनपर्यन्तं प्रत्यहं त्रिशत्पलम्। क्षुद्ररोगे सकृदेव त्रिशत्-पलम्। ग्रहपीडायां षोडशपलम्। राजवश्ये सप्तदिवसपर्यन्तं प्रत्यहं दशपलम्। प्रयाण-कालेऽष्टपलम्। नित्यदीपे पलं पलार्धं वा गव्यं माहिषं वा ग्राह्यम्। न न्यूनम्। तैलेप्येवम्। धनप्राप्त्यादौ अनुक्तमाने सर्वत्र शतपलं ज्ञेयम्। कृते दीपे नं सिध्येत् चेत् वारत्रयं कुर्यात्।

गौ का घृत सर्व सिद्धिकारक है। मारण में भैंस के दूध का घृत। विद्वेषण में ऊँटनी के दूध का। शान्ति में भेड़ के दूध का, उच्चाटन में बकरी के दूध का, सर्वार्थ सिद्धि में तिल का तैल, मारण में सरसों का तथा मुखरोग अथवा मुख की दुर्गन्ध होने पर फूलों से बने हुए तैल का दीप जलाना चाहिए।

कामना के भेद से घी-तैल का तौल—राज्य प्राप्ति के लिए दस हजार पल। कैद से छूटने के लिए तीन हजार पल अथवा २ हजार पल। नष्ट वस्तु प्राप्ति के लिए १००० पल। सर्वकार्य सिद्धि के लिए १००० पल। सिंह, बाघ और सर्पादि की शान्ति के लिए ३०० पल। शत्रुनाश के लिए २०० पल। शत्रुपराजय के लिए ७५ पल। वश्य, संधि और चोर के भय की शान्ति के लिए ५० पल। कन्याप्राप्ति के लिए २१ दिन तक प्रति-दिन ३० पल। रोगनिवृत्ति के लिए १४ दिन तक प्रतिदिन ३० पल। सामान्य रोग-नाश के लिये एक बार ही में ३० पल। चौरनाश में २० पल। भूत, प्रेत एवं पिशाच-निवृत्ति के लिये २५ पल। ग्रहपीड़ा निवृत्ति के लिये १६ पल। राजवशीकरण के लिये सात दिन तक प्रतिदिन १० पल। कहीं प्रस्थान करना हो तो ८ पल तथा नित्य पूजा के दीप में १ पल अथवा आधा पल गौ या भैंस का घी लेना चाहिये। इससे कम न हो। तैल का दीपक हो, तो उसका भी यही विधान है। धन प्राप्ति आदि अन्य कार्यों के लिये जिसका तौल नहीं बताया गया है वहाँ १०० पल जानना चाहिये। इस प्रकार दीपदान करने पर भी सिद्धि न हो तो तीन बार दीपदान करे।

बत्ती बनाने की विधि —

तत्र त्रिः प्रक्षालितेन सूत्रेण वश्य-विद्वेषण-मारणोच्चाटन-स्तम्भन-शान्तिषु क्रमेण सितपीत-माञ्जिष्ठ-कौसुम्भ-कृष्ण-कर्बुर-वर्णेन तदलाभे सर्वत्र श्वेतेनैव सूत्रेण कार्या। तत्र पञ्च-दश-विंशत्-त्रिंशच्चत्वारिंशत्पञ्चाशदष्टोत्तरशताष्टोत्तरसहस्रान्यतम-संख्यकास्तन्तुकाः। एक-त्रि-पञ्च सप्ताद्येकोत्तरशतपर्यन्तम् विषमसंख्यावर्तीः पात्रे क्षिपेत्। नित्यदीपे तु द्विचत्वारिंशदेकविंशतितन्तुभिर्वा विषमसंख्यावर्त्तीः पात्रे क्षिपेत्।

ये दीपक की बत्तियाँ सूत या डोरे की बनती हैं। डोरे को तीन बार धोकर क्रमशः वशीकरण में श्वेत, विद्वेषण में पीत, मारण में हरा (मजीठ के समान), उच्चाटन में कुसुम्बी (केसरिया लाल), स्तम्भन में काला और शान्ति में चितकबरा रंग ले तथा ये रंग न मिलें तो सफेद सूत से बत्ती बनाएँ। फिर उन सूत के १५, २०, ३०, ४०, ५०, १०८ अथवा १००० तन्तुओं की बत्ती बनाए। ये तन्तु इकाई की संख्या में होने चाहिये। नित्यदीप में ४२, २१ अथवा विषम संख्या वाली बत्ती होनी चाहिये।

बत्ती चलाने के लिए शलाका

षोडशाङ्गुलमाना च सौवर्णी तु शलाकिका।
राजतौदुम्बरी वाऽपि सुलक्षा बुध्नका तथा॥
तीक्ष्णाग्रा सरला मध्ये त्रिशूलेनाङ्किता तथा।

१६ अंगुल लम्बी सुवर्ण, चाँदी अथवा उदुम्बर (उमर) की उत्तम दिखनेवाली, सीधी, आगे से तीखी, मध्य में त्रिशूल से अंकित तथा मूल में स्थूल बत्ती चलाने की सलाई बनाये। (कहीं-कहीं ८ अंगुल का भी सूचन है।) इस शलाका को पात्र के दाहिने भाग में रखे।

दीपस्थापना के लिये घटार्गल यन्त्र[1]

इस यन्त्र का स्वरूप वर्णमाला एवं कुछ बीज मन्त्रों के लेखन से चक्राकार में तैयार किया जाता है और यही कलश के नीचे भी रखा जाता है। इसके अभाव में दीपक के नीचे त्रिकोण, वृत्त और षट्कोण बनाकर उस पर अक्षत चढ़ाकर दीपस्थापन करे।

४. दीपक का मुख विचार—

पूर्वाभिमुखे तु सर्वाप्तिः स्तम्भोच्चाटनयोस्तथा।
रक्षाविद्वेषयोः कार्यं पश्चिमास्यं प्रदीपकम्॥
लक्ष्मीप्राप्तावुत्तरास्यं मारणे दक्षिणामुखम्॥

पूर्वदिशा में दीपक का मुख रखने से सर्वसुख प्राप्ति होती है। स्तम्भन, उच्चाटन, रक्षण तथा विद्वेषण में पश्चिम दिशा की ओर दीपक का मुख रखना चाहिए। लक्ष्मी-प्राप्ति के लिये उत्तराभिमुख तथा मारण में दक्षिणाभिमुख दीपक रखना चाहिये।

---

१. इस यन्त्र का स्वरूप-परिचय 'शारदातिलक' के ९ वें पटल के ९५ वें श्लोक में देखिये।

५. दीपशकुन विचार—

डामरतन्त्र में दीपस्थापना के समय विविध रूप से शकुनों का ज्ञान दिया गया है, जिनमें कहा गया है कि—दीपस्थापना के समय अशुभ न बोलें। ब्राह्मण का आगमन शुभ है। म्लेच्छ का आना, बिल्ली या चूहे का आना अशुभ है। इसी प्रकार दीप की ज्वाला यदि सीधी एवं शुद्ध हो तो उत्तम। तिरछी, धुएँ से युक्त, काली, चटचट करने वाली, तत्काल बुझ जाने पर तथा दीप-पात्र के ढुलक जाने पर अथवा घृत या तैल के झरने को अशुभ कहा गया है। अतः सावधानी से यह कार्य करे। यदि उपर्युक्त अशुभ फलदायी बात हो तो उसकी शान्ति के लिए जप अथवा होम करना भी बतलाया है।

६. दीपदान विधि

दीपदान कर्म के आरम्भ दिन से पूर्ववाले दिन सभी सामग्री जुटाकर आचार्यादि को निमन्त्रित करे तथा आचार्य एवं यजमान एक बार ही भोजन करे। दूसरे दिन प्रातः नित्यक्रिया से निवृत्त हो शुद्ध आसन पर बैठकर गणपति-पूजन से आचार्यादि वरण तक कर्म करे। तदनन्तर बटुक-स्मरण पूर्वक नीचे लिखे अनुसार सङ्कल्प करे—

अद्य···मम (यजमानस्य वा) सकलमनोरथसिद्धये ग्रयोगानुसारेण अमुकदिन-पर्यन्तं, अमुकसंख्यामानेन पात्रेण घृते नतैलेन वा, अमुकसंख्याभिर्वर्तिकाभिर्दीपदानमहं करिष्ये।

दीपवेदी-विचार

जहाँ दीपक की स्थापना करनी हो उस स्थान को शुद्ध कर सवा हाथ की सम-चोरस चार अंगुल की ऊँचाई वाली दीपवेदी बनाये तथा उस पर कपिला गाय के गोबर से लीप कर लाल चन्दन से पद्धति में बताये अनुसार पूजायन्त्र बनाए। फिर दीपवेदिका के आगे कलश की स्थापना करने के लिये चावल का अष्टदल कमल बनाकर उस पर कलश की स्थापना करे। तदनन्तर दीपक की स्थापना कर उसमें तैल और वत्तियां स्थापित करे।

तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कोटिसूर्यसमप्रभ।
भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातुमर्हसि॥

इस पद्य को बोलकर श्री भैरव को प्रणाम कर दीपदान की आज्ञा प्राप्त करे।

विघ्ननिवारण के लिये अन्य दीपदान

इसके पश्चात् दीपविघ्न निवारण के लिये आगे बताये अनुसार क्रमशः गणपति, दुर्गा, कार्तिकेय और क्षेत्रपाल की वैदिक मन्त्रों द्वारा आवाहन से पुष्पांजलि तक पूजा कर बलि-प्रदान करे।

श्रीगणेश-बलिः

ॐ गणानां त्वा गणपतिं हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिं हवामहे। निधीनां त्वा निधिपतिं हवामहे वसो मम। आहमजा निगर्भधमा त्वमजासिगर्भधम् ॥

ॐ विघ्नेशायामुं सदीप-माष-भक्त-बलिं समर्पयामि।

ऐसा कहकर गणपति के सामने दीपक, माष और चावल सहित बलि चढ़ाएँ। फिर प्रार्थना करें—भो विघ्नेश ! अमुं सदीप-माष-भक्त-बलिं गृहाण। मया क्रियमाणे दीपकर्मणि च वर्तमान-वर्तिष्यमाण-विघ्ननिवारको भव। श्रीविघ्नेशाय नमः।

श्रीदुर्गा-बलिः —

ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममराती यतो निदहाति वेदः। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ॥

ॐ दुर्गाभगवत्यै अमुं सदीप-माष-भक्त-बलिं समर्पयामि।

ऐसा कहकर पूर्ववत् दुर्गा के सामने बलि चढ़ाए। फिर प्रार्थना करे—हे दुर्गा-भगवति ! अमुं सदीपमाषभक्त-बलिं गृहाण मया क्रियमाणे दीपकर्मणि च वर्तमान-वर्तिष्यमाणविघ्ननिवारिका भव। श्रीदुर्गाभगवत्यै नमः।

श्रीकार्तिकेय-बलि :—

ॐ कुमारं माता युवतिः समृद्धं गुहा बिभर्ति न ददाति पित्रे। अनीकमस्य न पिनज्जनासः पुरः पश्यति निहितमरतौ ॥

ॐ कार्तिकेयायामुं सदीप-समाष-भक्त-बलिं समर्पयामि।

(ऐसा कहकर पूर्ववत् बलि चढ़ाएँ। फिर प्रार्थना करें)—भो कार्तिकेय ! अमुं सदीप-माष-भक्त-बलिं गृहाण। मया क्रियमाणे दीपकर्मणि च वर्तमान-वर्तिष्यमाण-विघ्ननिवारको भव। श्रीकार्तिकेयाय नमः।

श्रीक्षेत्रपालबलिः —

ॐ क्षेत्रस्य पतिना वयं हि ते नेव जयामसि। गामश्वं पोषयित्वा स नो मृडातीदृशे ॥

ॐ क्षेत्रपालायामुं सदीप-माष-भक्त-बलिं समर्पयामि।

(ऐसा कहकर पूर्ववत् बलि अर्पित करें; फिर प्रार्थना करें)—भो क्षेत्रपाल ! अमुं सदीप-माष-भक्त-बलिं गृहाण। मया क्रियामाणे दीपकर्मणि च वर्तमान-वर्तिष्यमाण-विघ्ननिवारको भव। श्रीक्षेत्रपालाय नमः।

श्रीभैरव के लिये दीपदान-मालामन्त्र—

दीपदान से पूर्व नीचे बताये अनुसार विनियोग तथा न्यास करें—

ॐ अस्य श्रीबटुकभैरव-दीपदान-माला-मन्त्रस्य मन्मथ ऋषिः पङ्क्तिश्छन्द आपदुद्धारकबटुकभैरवो देवता वं बीज ह्रीं शक्तिः प्रणवः कीलकं मम सर्वमनोरथसिद्धये दीपदाने विनियोगः।

ऋष्यादिन्यासः —

मन्मथऋषये नमः (शिरसि)।
पङ्क्तिच्छन्दसे नमः (मुखे)।
आपदुद्धारकबटुकभैरवदेवतायै नमः (हृदये)।
वं बीजाय नमः (गुह्ये)।
ह्रीं शक्तये नमः (पादयोः)।
ॐ कीलकाय नमः (नाभौ)।
विनियोगाय नमः (सर्वाङ्गे)।

इसके पश्चात् करन्यास, अंगन्यास तथा मूलमन्त्रन्यास (पृ० १८-१९) के समान करें तथा कार्य के अनुसार ध्यान करें।

तदनन्तर पूर्वोक्त दीपवेदी पर लिखित यन्त्र एवं दीप की पूजा कर वेदी की आठों दिशाओं में खेर की लकड़ी के बने हुए कीले गाड़ कर पूजा करें। आठों दिशाओं की पूजा विधि इस प्रकार है—

पहले आठों कीलों पर या उनके पास पूर्व दिशा से आरम्भ कर क्रम से माष, चने और दही में सिन्दूर डालकर थोड़ा सा वह अंश तथा पकोड़े का नैवेद्य बलि के रूप में अर्पित करे। फिर वहां दीपक जलाकर रखे और लाल चन्दन से मिले हुए अक्षत एवं करवीर के पुष्पों से 'अस्त्राय फट्' बोलते हुए गन्धादि द्वारा नीचे लिखे अनुसार पूजन करें।

१. पूर्व दिशा में—

(जयन्त की पूजा करके) ॐ ह्रीं जयन्तभैरव ! एहि एहि ! इमं सदीप-माषान्न-भक्तबलिं गृह्ण २ मां रक्ष२ अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ॥ ॐ ह्रीं जयन्तभैरवाय नमः ॥

२. आग्नेय कोण में—

(अघोर की पूजा करके) ॐ ह्रीं अघोरभैरव ! एहि एहि इमं सदीप-माषान्न-भक्तबलिं गृह्ण २ मां रक्ष२ अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ॥ ॐ ह्रीं अघोरभैरवाय नमः ॥

३. नैर्ऋत्य कोण में—

(असितांग की पूजा करके) ॐ ह्रीं असिताङ्गभैरव ! एहि एहि । इमं सदीप-माषान्न-भक्तबलिं गृह्‌ण २ मां रक्ष २, अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ।। ॐ ह्रीं असिताङ्ग-भैरवाय नमः ।

४. पश्चिम दिशा मे—

(भीषण की पूजा करके) ॐ ह्रीं भीषण-भैरव ! एहि एहि । इमं सदीप-माषान्न-भक्त-बलिं गृह्‌ण २ मां रक्ष २ अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ।। ॐ ह्रीं भीषणभैरवाय नमः ।।

५. वायव्य कोण में—

(प्रचण्ड की पूजा करके) ॐ ह्रीं प्रचण्डभैरव ! एहि एहि । इमं सदीप-माषान्न-भक्त-बलिं गृह्‌ण २ मां रक्ष २, अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ।। ॐ ह्रीं प्रचण्ड-भैरवाय नमः ।।

६. उत्तर दिशा में—

(कराल की पूजा करके) ॐ ह्रीं करालभैरव ! एहि एहि । इमं सदीप-माषान्न-भक्त-बलिं गृहण २ मां रक्ष २ अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ।। ॐ ह्रीं करालभैरवाय नमः ।।

७. ईशान कोण में—

(कपाल की पूजा करके) ॐ ह्रीं कपालभैरव ! एहि एहि । इमं सदीप-माषान्न-भक्त-बलिं गृह्‌ण २ मां रक्ष २, अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा ।। ॐ ह्रीं कपालभैरवाय नमः ।

८. दक्षिण दिशा में—

(श्री चामीकर की पूजा करके) ॐ ह्रीं चामीकरभैरव एहि एहि । इमं सदीप-माषान्न-भक्त-बलिं गृह्‌ण २ मां रक्ष २, अभीष्टं कुरु कुरु स्वाहा । ॐ ह्रीं श्रीचामी-करभैरवाय नमः ।

इस प्रकार दीपक सहित बलि समर्पण करके—गुरुभ्यो नमः । परमगुरुभ्यो नमः । परात्परगुरुभ्यो नमः । परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः ।[1] ग्लौं गणपतये नमः । क्षौं क्षेत्रपालाय नमः । इस प्रकार बोलते हुए नमस्कार करे ।

---

१. यदि दीक्षित हो तो वह गुरुपादुका मन्त्रोच्चारण-पूर्वक गुरुत्रय की अर्चना करके प्रणाम करे ।

दीपपात्र में गायत्री मन्त्र से गोघृत अथवा तैल भरकर वर्तिका रखकर जितनी बत्तियाँ हों उतनी ही मन्त्र की आवृत्ति करे। फिर मूलमन्त्र बोलकर दीपक के अनुरूप शलाका रखे और दक्षिण की ओर धारवाली छुरी पास में रखकर अथवा गाड़कर "ॐ ह्लीं छ्रीं छुरिके मम शत्रुच्छेदिनि रिपून् निर्द्दलय २ मां पाहि २ स्वाहा" इस मन्त्र से छुरी की पूजा करे। "ॐ ह्लीं ह्लीं सर्वाङ्गसुन्दर्यै शलाकायै नमः" इस मन्त्र से शलाका की पूजा करके मूलमन्त्र अथवा गायत्री-मन्त्र से दीपक प्रज्वालित करे। तदनन्तर प्राण-प्रतिष्ठा मन्त्र "ॐ आं ह्लीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हं सः ह्लीं ॐ आं ह्लीं क्रों प्राणा इह प्राणाः ॐ आं ह्लीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हं सः ह्लीं ॐ आं ह्लीं क्रों जीव इह स्थितः ॐ आं ह्लीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों ॐ क्षं सं हं सः ह्लीं ॐ आं ह्लीं क्रों अस्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणिपादपायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा" से दीपक में अंगसहित देव की प्राणप्रतिष्ठा करके पूर्वोक्त (भैरव नामावली में बताये अनुसार) पद्धति से आवाहनादि बिल्वपत्रसमर्पणान्त पूजा करे।

दीपपूजनमन्त्र—

ॐ ह्रीं ऐं श्रीं क्लीं ऐं ह्रीं श्रीं सर्वज्ञाय प्रचण्ड-पराक्रमाय बटुकाय इमं दीपं गृहाण सर्वकार्याणि साधय २, दुष्टान् नाशय २, त्रासय २, सर्वतो मम रक्षां कुरु २ हुं फट् स्वाहा।

इस मन्त्र से अक्षत, चन्दन और पुष्प-सहित जल दीपक के समक्ष छोड़े और प्रार्थना करे—

गृहाण दीपं देवेश ! बटुकेश महाप्रभो।
ममाभीष्टं कुरु क्षिप्रमापद्भ्यो मां समुद्धर॥

मूलमन्त्र बोलकर "बटुकाय इमं दीपं निवेदयामि नमः" ऐसा कहते हुए जल छोड़े।

"भो बटुक ! मम सम्मुखो भव, मम कार्यं कुरु २, इच्छितं देहि २, मम सर्वविघ्नान् नाशय २ स्वाहा" (इस मन्त्र से प्रणाम करे।)

श्री भैरवदण्ड पूजा—

दीपपात्र के दाहिने भाग में चार अंगुल ऊपर के स्थान पर एक हाथ लम्बा दण्ड नीचे लिखा मन्त्र पढ़कर पूजन करके स्थापित करे।

"ॐ ह्रीं भैरवदण्डाय नमः।"

प्रार्थना—

येन दण्डेन भो नाथ ! कम्पते भुवनत्रयम्।
तं गृहीत्वाऽथ भो स्वामिन् ! शीघ्रं कार्यं कुरुष्व मे॥

इतना कहकर पुष्पांजलि अर्पित करे।

इसके पश्चात् संकल्पानुसार दीप जलाता रहे और यथाशक्ति जप करे। इस कर्म के निमित्त स्तोत्रपाठादि करे।

दीप-विसर्जन—

श्री भैरव ! नमस्तुभ्यं सत्वरं कार्यसाधक।
उत्सर्जयामि ते दीपं त्रायस्व भवसागरात्॥
मन्त्रेणाक्षर-हीनेन पुष्पेण विकलेन वा।
पूजितोऽसि मया देव ! तत्क्षमस्व मम प्रभो॥

इस प्रकार क्षमा प्रार्थना करके दण्डवत् प्रणाम कर आसन के नीचे की मृत्तिका पर जल छिड़ककर उससे ललाट पर तिलक करे और फिर यथेच्छ कार्य करे।

श्रीभैरव-क्षमाप्रार्थना—

यदुक्तं देवभावेन पत्रं पुष्पं फलं जलम्।
निवेदितं च नैवेद्यं गृहाण कृपया प्रभो॥१॥
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्।
पूजां चैव न जानामि त्वं गतिः परमेश्वर॥२॥
अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया।
दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वर॥३॥
यदक्षरं पदं भ्रष्टं मात्राहीनं च यद् भवेत्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव ! प्रसीद परमेश्वर॥४॥
क्षमस्व देवदेवेश ! क्षमस्व भुवनेश्वर।
तव पादाम्बुजे नित्यं निश्चला भक्तिरस्तु मे॥५॥

उपर्युक्त पद्य बोलते हुए मन में भावना करे कि—हे भैरवनाथ ! मैंने भावपूर्वक जो स्तुति की और पत्र, पुष्प, फल, जल नैवेद्य अर्पित किया है उसे ग्रहण करो। मैं आपके आवाहन, विसर्जन और पूजनविधान को नहीं जानता हूँ। अतः हे परमेश्वर आप ही मेरी गति हैं मेरे द्वारा प्रतिदिन हजारों अपराध किये जाते हैं किन्तु हे परमेश्वर ! 'यह मेरा दास है' ऐसा मानकर क्षमा करें। मेरे इस कार्य में जो अक्षर, पद या मात्रा सम्बन्धी त्रुटि हुई हो, उन सब को क्षमा करो तथा हे परमेश्वर ! मुझ पर कृपा करो। हे देवदेवेश ! क्षमा करो। हे भुवनेश्वर ! क्षमा करो। आपके चरण-कमलों में मेरी अटल भक्ति बनी रहे। यही मेरी प्रार्थना है।

श्रीस्वर्णाकर्षण-भैरव-साधना

श्रीभैरव के अनन्त रूपों में स्वर्णाकर्पण-भैरव का स्वरूप भी परम उपास्य वतलाया गया है। इनकी साधना शान्तिक, पौष्टिक आदि सभी कर्मों में अत्यन्त सफल मानी गई है। अपने भक्तों की दरिद्रता को नष्ट करने तथा उसे धन-धान्य से समृद्ध बनाने के कारण ही आपका नाम 'स्वर्णाकर्पण-भैरव' के रूप में प्रसिद्ध है। तन्त्रशास्त्रों में इनकी साधना के लिए मन्त्रमय स्तोत्र, नामावली रूप स्तोत्र, कवच, सहस्रनाम एवं मन्त्र-जप का विधान विस्तार है वर्णित है।

रुद्रयामल में इनका वर्णन करते हुए जो ध्यान वतलाया है उसके अनुसार ये स्वर्ण के समान आकृतिवाले, मन्दार के वृक्ष के नीचे माणिक्य के सिंहासन पर विराजमान भक्तों को रत्न के पात्र में भरी हुई स्वर्णमुद्राओं को प्रदान करने वाले अत्यन्त दयालु देव हैं। अज नामक राक्षस का संहार इनके द्वारा हुआ था। ये त्रिनेत्र, चतुर्भुज, पाश, अंकुश, वर और अभयधारी, चन्द्रखण्ड, जटाजूट एवं स्वर्णाभरणों से विभूषित एवं सिद्ध विद्या-धरों से सेवित वतलाये गए हैं।

इनके मन्त्र-विधान, स्तोत्र एवं कवच, सहस्रनाम, पूजायन्त्र आदि बहुत विस्तार से प्राप्त होते हैं। यन्त्रपूजा में पात्रासादन एवं आवरण-पूजा का भी पूरा विधान है। हम यहां एक मन्त्र-विधान तथा एक स्तोत्र साधकों की सुविधा के लिये प्रकाशित कर रहे हैं।

श्रीस्वर्णाकर्षण भैरव-मन्त्र-विधान एवं स्तोत्र

'चिदम्बर-रहस्य' के अनुसार श्रीस्वर्णाकर्षण भैरव की उपासना के लिये हम यहां संक्षेप में मन्त्र-विधान एवं पाठ के लिये एक स्तोत्र दे रहे हैं, जो इस प्रकार है—

मन्त्र-विधान

१. विनियोग—ॐ अस्य श्रीस्वर्णाकर्पण-भैरवमहामन्त्रस्य महाभैरव-ब्रह्मा ऋपिः त्रिष्टुप्छन्दः त्रिमूर्तिरूपी[1] भगवान् स्वर्णाकर्पणभैरवो देवता ह्रीं बीजं सः शक्तिः वं कीलकं मम दारिद्र्यनाशार्थे जपे विनियोगः।

२. ऋष्यादिन्यास—ॐ महाभैरवब्रह्मर्षये नमः (शिरसि), त्रिष्टुप्छन्दसे नमः (मुखे) त्रिमूर्तिरूपि-भगवत्स्वर्णाकर्षणभैरवदेवतायै नमः (हृदये), ह्रीं बीजाय नमः (गुह्ये), सः शक्तये नमः (पादयोः), वं[2] कीलकाय नमः (नाभौ), विनियोगाय नमः (सर्वाङ्गे)।

कर-न्यास—

ॐ (अंगुष्ठाभ्यां नमः)। ऐं (तर्जनीभ्यां नमः)। क्लां ह्रां (मध्यमाभ्यां नमः)। क्लीं ह्रीं (अनामिकाभ्यां नमः)। क्लूं ह्रूं (कनिष्ठिकाभ्यां नमः)। सं वं (करतलकर-पृष्ठाभ्यां नमः)।[3]

४. हृदयादि न्यास—

आपदुद्धारणाय (हृदयाय नमः), अजामलवद्धाय[4] (शिरसे स्वाहा), लोकेश्वराय (शिखायै वषट्)। स्वर्णाकर्षणभैरवाय (कवचाय हुम्), मम दरिद्र्यविद्वेषणाय (नेत्रत्रयाय वौषट्), श्रीमहाभैरवाय नमः (अस्त्राय फट्)।

५. ध्यानम्—

ॐ पीतवर्णं चतुर्बाहुं त्रिनेत्रं पीतवाससम्।
अक्षयं स्वर्णमाणिक्य-तडित्पूरितपात्रकम् ॥१॥
अभिलसन् महाशूलं चामरं तोमरोद्वहम्।
सततं चिन्तये देवं भैरवं सर्वसिद्धिदम् ॥२॥

---

१. हरिहरब्रह्मात्मक, यह पाठान्तर है। २. भैरवायेति पाठा० ३. क्लीं क्लीं मध्य०। क्लीं ह्रीं अना०, ह्रीं हीं कनि० ये सभी पाठ सम्भव हैं। अन्यत्र १० बीजमन्त्र एवं मूलमन्त्र के ६ खण्डों से करन्यास करने का भी निर्देश है। ४. यहां अजावलि और अजामिल पाठ भी हैं।

मन्दारद्रुमकल्पमूलमहिते माणिक्य-सिंहासने,
संविष्टोदरभिन्नचम्पकरुचा देव्या समालिङ्गितः।
भक्तेभ्यः कररत्नपात्रभरितं स्वर्णं ददानो भृशं,
स्वर्णाकर्षण-भैरवो विजयते स्वर्णाकृतिः सर्वदा ॥३॥

इन पद्यों से ध्यान तथा मानसिक उपचारों से पूजा करके मन्त्र जप करें।

६. मूलमन्त्र—

ॐ ऐं क्लीं क्लीं क्लूं ह्रां ह्रीं ह्रूं सः वं आपदुद्धारणाय अजामलबद्धाय लोकेश्वराय स्वर्णाकर्षणभैरवाय मम दारिद्र्यविद्वेषणाय ॐ ह्रीं महाभैरवाय नमः।

इस मन्त्र का जप करें। १० हजार जप करके दशांश, हवन, तर्पण, मार्जन और ब्राह्मण भोजन कराने से दरिद्रता का नाश, ऋण का निवारण तथा सर्वविध सुख की प्राप्ति होती है। पायस तथा बिल्व से हवन करें। कृष्णपक्ष की अष्टमी से चतुर्दशी तक जप का विशेष महत्त्व है।

श्रीस्वर्णाकर्षण-भैरव-स्तोत्रम्

यह स्तोत्र 'रुद्रयामल' तन्त्र में ईश्वर और दत्तात्रेय के संवादरूप में कहा गया है। इसके आरम्भ में श्रीमार्कण्डेय ऋषि ने इस स्तोत्र के लिए पूछा है तथा श्रीनन्दिकेश्वर ने लोकोपकार की दृष्टि से इसका कथन किया है। वहीं इसका फल कहा गया है कि—यह दुर्लभ स्तोत्र है, सर्वपापों का नाशक है। सर्वविध सम्पत्ति का दाता, दरिद्रता को मिटानेवाला, आपत्ति निवारक, अष्टविध ऐश्वर्यदाता, विजयप्रद, कीर्तिकारी, सौन्दर्यंकर, स्वर्णादि अष्टसिद्धि का दाता सर्वोत्तम एवं भुक्ति-मुक्ति को देने वाला है। महाभैरव के भक्त, सेवाभावी, निर्धन तथा गुरुभक्त को यह स्तोत्र देना चाहिए। इतना कहकर ब्रह्मा, विष्णु और शिवरूप श्रीभैरव का यह स्तोत्र सुनाया गया है।

इस स्तोत्र का विनियोग, ऋष्यादिन्यास, करन्यास, हृदयादिन्यास, ध्यान और मुद्राप्रदर्शन करके भक्तिपूर्वक पाठ करना चाहिए।

पूरा स्तोत्र तीन अंशों में है, जिनमें पहला अंश स्तोत्र की प्राप्ति के उपक्रम और महत्त्व का सूचक है। दूसरा अंश मूल स्तोत्ररूप है, जिसमें श्रीस्वर्णाकर्षण भैरव के प्रस्तुत स्तोत्र के विनियोग, ऋष्यादिन्यास, करन्यास, हृदयादिन्यास, ध्यान एवं मुद्रा-प्रदर्शन का निर्देश करके नमस्कार सहित नामावलीरूप स्तोत्र का पाठ दिया है। तीसरा अंश स्तोत्र की 'फलश्रुति' का है जिसमें स्तोत्र-पाठ के फल और पाठ-विधि के संकेत हैं।

स्तोत्र-प्रारम्भिका

[स्तोत्र-प्राप्ति का उपक्रम एवं महत्त्व]

भगवन् प्रमथाधीश शिवतुल्य-पराक्रम।
पूर्वमुक्तस्त्वया मन्त्रो भैरवस्य महात्मनः ॥१॥
इदानीं श्रोतुमिच्छामि तस्य स्तोत्रमनुत्तमम्।
तत्केनोक्तं पुरा स्तोत्रं पठनात् तस्य किं फलम् ॥२॥
तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि ब्रूहि मे नन्दिकेश्वर।

नन्दिकेश्वर उवाच

अयं प्रश्नो महाभाग! लोकानामुपकारकः ॥३॥
स्तोत्रं बटुकनाथस्य दुर्लभं भुवनत्रये।
सर्वपाप-प्रशमनं सर्वसम्पत्-प्रदायकम् ॥४॥
दारिद्र्यनाशनं पुंसामापदामपहारकम्।
अष्टैश्वर्यप्रदं नृणां पराजय-विनाशनम् ॥५॥
महाकीर्त्तिप्रदं पुंसामसौन्दर्य-विनाशनम्।
स्वर्णाद्यष्ट - महासिद्धि - प्रदायकमनुत्तमम् ॥६॥
भुक्तिमुक्तिप्रदं स्तोत्रं भैरवस्य महात्मनः।
महाभैरवभक्ताय सेविने निर्धनाय च ॥७॥
निजभक्ताय वक्तव्यमन्यथा शापमाप्नुयात्।
स्तोत्रमेतद् भैरवस्य ब्रह्म-विष्णु-शिवात्मकम् ॥८॥
शृणुष्व रुचितो ब्रह्मन्! सर्वकाम - प्रदायकम्।

विनियोगः —

ॐ अस्य श्रीस्वर्णाकर्षणभैरव-स्तोत्रमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः स्वर्णाकर्षणभैरव-परमात्मा देवता ह्रीं बीजं क्लीं शक्तिः सः कीलकं मम सर्वकामसिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यासः —

ब्रह्मर्षये नमः (शिरसि), अनुष्टुप्छन्दसे नमः (मुखे), स्वर्णाकर्षणभैरवपरमात्मने नमः (हृदये), ह्रीं बीजाय नमः (गुह्ये), क्लीं शक्तये नमः (पादयो), सः कीलकाय नमः (नाभौ), विनियोगाय नमः (सर्वाङ्गे)।

कर-हृदयादिन्यासाः —

प्रथम बार	द्वितीय बार
ह्रां—अंगुष्ठाभ्यां नमः।	हृदयाय नमः।
ह्रीं—तर्जनीभ्यां नमः।	शिरसे स्वाहा।
ह्रूं—मध्यमाभ्यां नमः।	शिखायै वषट्।
ह्रैं—अनामिकाभ्यां नमः।	कवचाय हुम्।

ह्रौं—कनिष्ठिकाभ्यां नमः। नेत्रत्रयाय वौषट्।
ह्रः—करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः। अस्त्राय फट्।

ध्यानम् —

पारिजातद्रुकान्तारे, स्थिते माणिक्य-मण्डपे।
सिंहासनगतं वन्दे, भैरवं स्वर्णदायकम्॥
गाङ्गेयपात्रं डमरुं त्रिशूलं, वरं करैः सन्दधतं त्रिनेत्रम्।
देव्या युतं तप्तसुवर्णवर्णं, स्वर्णाकृषं भैरवमाश्रयामि॥

मुद्रा—कमण्डलु-डमरु-त्रिशूल-वर-मुद्रा दर्शयेत्।

मूल-स्तोत्र-पाठः

ॐ नमस्ते भैरवाय ब्रह्मविष्णु - शिवात्मने।
नमस्त्रैलोक्यवन्द्याय वरदाय वरात्मने॥१॥
रत्नसिंहासनस्थाय दिव्याभरणशोभिने।
दिव्यमाल्य-विभूषाय नमस्ते दिव्यमूर्तये॥२॥
नमस्तेऽनेकहस्ताय अनेकशिरसे नमः।
नमस्तेऽनेकनेत्राय अनेकविभवे नमः॥३॥
नमस्तेऽनेककण्ठाय अनेकांसाय ते नमः।
नमस्तेऽनेकपार्श्वाय नमस्ते दिव्यतेजसे॥४॥
अनेकायुधयुक्ताय अनेक — सुरसेविने।
अनेक — गुणयुक्ताय महादेवाय ते नमः॥५॥
नमो दारिद्र्यकालाय महासम्पत्प्रदायिने।
श्रीभैरवी-संयुक्ताय त्रिलोकेशाय ते नमः॥६॥
दिगम्बर नमस्तुभ्यं दिव्याङ्गाय नमो नमः।
नमोऽस्तु दैत्यकालाय पापकालाय ते नमः॥७॥
सर्वज्ञाय नमस्तुभ्यं नमस्ते दिव्यचक्षुषे।
अजिताय नमस्तुभ्यं जितामित्राय ते नमः॥८॥
नमस्ते रुद्ररूपाय महावीराय ते नमः।
नमोऽस्त्वनन्तवीर्याय महाघोराय ते नमः॥९॥
नमस्ते घोरघोराय विश्वघोराय ते नमः।
नम उग्राय शान्ताय भक्तानां शान्तिदायिने॥१०॥
गुरवे सर्वलोकानां नमः प्रणवरूपिणे।
नमस्ते वाग्भवाख्याय दीर्घकामाय ते नमः॥११॥
नमस्ते कामराजाय योषित्कामाय ते नमः।
दीर्घमायास्वरूपाय महामायाय ते नमः॥१२॥

सृष्टिमाया-स्वरूपाय विसर्गसमयाय ते
सुरलोक-सुपूज्याय आपदुद्धारणाय च ।।१३।।
नमो नमो भैरवाय महादारिद्र्यनाशिने।
उन्मूलने कर्मठाय अलक्ष्म्याः सर्वदा नमः ।।१४।।
नमोऽजामलबद्धाय नमो लोकेश्वराय ते।
स्वर्णाकर्षणशीलाय भैरवाय नमो नमः ।।१५।।
मम दारिद्र्य-विद्वेषणाय लक्ष्याय ते नमः।
नमो लोकत्रयेशाय स्वानन्द — निहिताय ते ।।१६।।
नमः श्रीबीजरूपाय सर्वकामप्रदायिने।
नमो महाभैरवाय श्रीभैरव नमो नमः ।।१७।।
धनाध्यक्ष नमस्तुभ्यं शरण्याय नमो नमः।
नमः प्रसन्नरूपाय आदिदेवाय ते नमः ।।१८।।
नमस्ते मन्त्ररूपाय नमस्ते रत्नरूपिणे।
नमस्ते स्वर्णरूपाय सुवर्णाय नमो नमः ।।१९।।
नमः सुवर्णवर्णाय महापुण्याय ते नमः।
नमः शुद्धाय वुद्धाय नमः संसारतारिणे ।।२०।।
नमो देवाय गुह्याय प्रचलाय नमो नमः।
नमस्ते वालरूपाय परेषां बलनाशिने ।।२१।।
नमस्ते स्वर्णसंस्थाय नमो भूतलवासिने।
नमः पातालवासाय अनाधाराय ते नमः ।।२२।।
नमो नमस्ते शान्ताय अनन्ताय नमो नमः।
द्विभुजाय नमस्तुभ्यं भुजत्रयसुशोभिने ।।२३।।
नमोऽणिमादि — सिद्धाय स्वर्णहस्ताय ते नमः।
पूर्णचन्द्र-प्रतीकाशवदनाम्भोज — शोभिने ।।२४।।
नमस्तेऽस्तु स्वरूपाय स्वर्णालङ्कारशोभिने।
नमः स्वर्णाकर्षणाय स्वर्णाभाय नमो नमः ।।२५।।
नमस्ते स्वर्णकण्ठाय स्वर्णाभाम्वरधारिणे।
स्वर्णसिंहासनस्थाय स्वर्णपादाय ते नमः ।।२६।।
नमः स्वर्णभपादाय स्वर्णकाञ्चीसुशोभिने।
नमस्ते स्वर्णजङ्घाय भक्तकामदुघात्मने ।।२७।।
नमस्ते स्वर्णभक्ताय कल्पवृक्षस्वरूपिणे।
चिन्तामणिस्वरूपाय नमो व्रह्मादि—सेविने ।।२८।।
कल्पद्रुमाधःसंस्थाय बहुस्वर्ण — प्रदायिने।
नमो हेमाकर्षणाय भैरवाय नमो नमः ।।२९।।

स्तवेनानेन सन्तुष्टो भव लोकेश भैरव।
पश्य मां करुणादृष्ट्या शरणागतवत्सल ॥३०॥

फलश्रुतिः

श्रीमहाभैरवस्येदं स्तोत्रमुक्तं सुदुर्लभम्।
मन्त्रात्मकं महापुण्यं सर्वैश्वर्य-प्रदायकम् ॥३१॥
यः पठेन्नित्यमेकाग्रं पातकैः स प्रमुच्यते।
लभते महतीं लक्ष्मीमष्टैश्वर्यमवाप्नुयात् ॥३२॥
चिन्तामणिमवाप्नोति धेनुं कल्पतरुं ध्रुवम्।
स्वर्णराशिमवाप्नोति शीघ्रमेव स मानवः ॥३३॥
त्रिसन्ध्यं यः पठेत् स्तोत्रं दशावृत्त्या नरोत्तमः।
स्वप्ने श्रीभैरवस्तस्य साक्षाद् भूत्वा जगद्गुरुः ॥३४॥
स्वर्णराशिं ददात्यस्मै तत्क्षणं नास्ति संशयः।
अष्टावृत्त्या पठेद् यस्तु सन्ध्यायां वा नरोत्तमः ॥३५॥
लभते सकलान् कामान् सप्ताहान्नात्र संशयः।
सर्वदा यः पठेत् स्तोत्रं भैरवस्य महात्मनः ॥३६॥
लोकत्रयं वशीकुर्यादचलां श्रियमाप्नुयात्।
न भयं विद्यते क्वापि विषभूतादि-सम्भवम् ॥३७॥
म्रियन्ते शत्रवस्तस्य ह्यलक्ष्मी नाशमाप्नुयात्।
अक्षयं लभते सौख्यं सर्वदा मानवोत्तमः ॥३८॥
अष्टपञ्चाद् वर्णाढ्यो मन्त्रराजः प्रकीर्तितः।
दारिद्र्यदुःखशमनः स्वर्णाकर्षण — कारकः ॥३९॥
य एनं सञ्जपेद् धीमान् स्तोत्रं वा प्रपठेत् सदा।
महाभैरव-सायुज्यं सोऽन्तकाले लभेद् ध्रुवम् ॥४०॥

इति श्रीरुद्रयामले तन्त्रे ईश्वर-दत्तात्रेयसंवादे 'स्वर्णाकर्षण-भैरवस्तोत्रं' सम्पूर्णम्।

इस फलश्रुति का सार यह है कि—महाभैरव का यह स्तोत्र अति दुर्लभ है, मन्त्रात्मक, महापुण्य एवं सर्वैश्वर्य का दाता है। इसके एकाग्र-एकान्त में पाठ से पाप-मुक्ति, महान् लक्ष्मी, चिन्तामणि-कामधेनु-कल्पतरु के समान अष्ट ऐश्वर्य तथा शीघ्र ही स्वर्णराशि की प्राप्ति होती है। त्रिकाल दस पाठ करने से स्वप्न में साक्षाद् भैरवभगवान् जगद्गुरु पधारकर तत्काल स्वर्णराशि-प्रदान करते हैं। प्रतिदिन आठ आवृत्ति करने से साधक एक सप्ताह में ही इच्छित फल प्राप्त करता है। नित्य पाठ से सर्व वशीकरण, अचल लक्ष्मीप्राप्ति, भयनाश, शत्रुनाश, दरिद्रय नाश तथा अक्षयसौख्य प्राप्त होते हैं। इसका मन्त्र अठावन अक्षरों का है जो दारिद्रयनिवारक तथा स्वर्णाकर्पण कारक है। इस मन्त्र का जप तथा स्तोत्रपाठ अन्त में सायुज्य प्रदान करते हैं।

———

श्रीपक्षिराज-शरभेश्वर-आकाश-भैरव-साधना

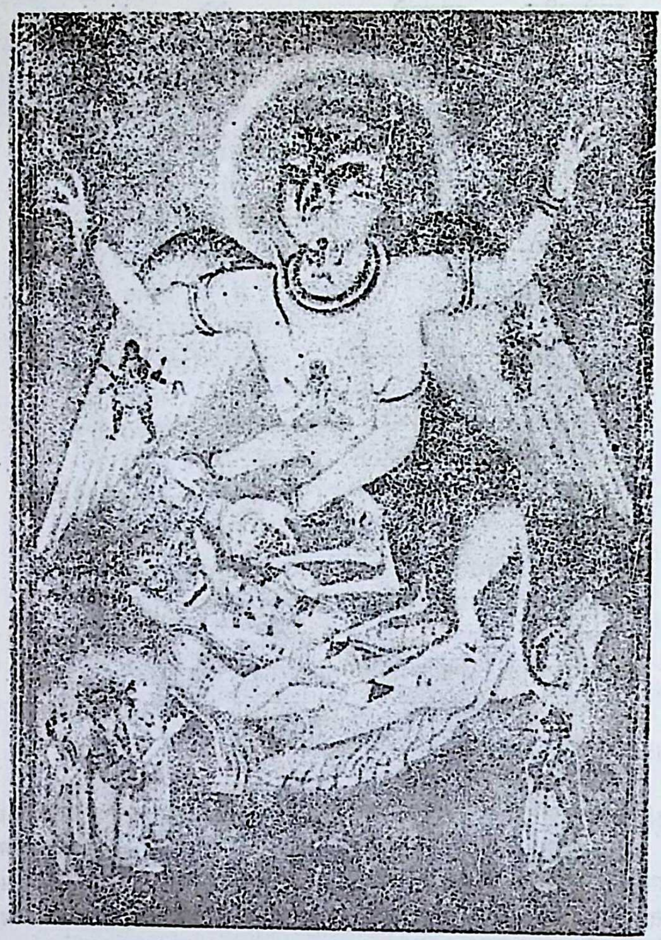

पुराणों में यह प्रसिद्ध है कि—'ब्रह्मा, विष्णु और शिव' आदि देवताओं के समय-समय पर अनेक अवतार होते रहते हैं। इन अवतारों में ब्रह्मा और शिव के अवतारों की संख्या कम है जबकि भगवान् विष्णु के अवतारों की संख्या अधिक है। इसी प्रकार भगवती के अवतारों की संख्या भी बहुत अधिक प्रतीत होती है।

भगवान् विष्णु के अवतारों में हिरण्यकशिपु के वध और भक्तवर प्रह्लाद की सुरक्षा के लिए 'श्रीनृसिंह' का अवतार अपने ढंग का अनूठा अवतार है। श्रीमद्भागवत के सप्तम स्कन्ध के आठवें अध्याय में वर्णन आता है कि—

सत्यं विधातुं निजभृत्यभाषितं, व्याप्तिं च भूतेष्वखिलेषु चात्मनः।
अदृश्यताद्भुतरूपमुद्वहन्, स्तम्भे सभायां न मृगं न मानुषम् ॥१८॥
स सत्त्वमेनं परितोऽपि पश्यन्, स्तम्भस्य मध्यादनु निर्जिहानम्।
नायं मृगो नापि नरो विचित्रमहो किमेतन्मृगेन्द्ररूपम् ॥१९॥
मीमांसमानस्य समुत्थितोऽग्रतो, नृसिंहरूपस्तदलं भयानकम्।
प्रतप्तचामीकरचण्डलोचनं, स्फुरत्सटाकेसरजृम्भिताननम् ॥२०॥
करालदंष्ट्रं करवालचञ्चलक्षुरान्तजिह्वं भ्रुकुटीमुखोल्बणम्।
स्तब्धोर्ध्वकर्णं गिरिकन्दराद्भुतव्यात्तास्यनासं हनुभेदभीषणम् ॥२१॥
दिविस्पृशत्कायमदीर्घ-पीवर-ग्रीवोरुवक्षः-स्थलमल्पमध्यम्।
चन्द्रांशुगौरैश्छुरितं तनूरुहैर्विष्वग्भुजानीकशतं नखायुधम् ॥२२॥

"अपने भक्त के कथन—'मेरा प्रभु सर्वत्र व्याप्त है'—को सत्य सिद्ध करने के लिए अत्यन्त अद्भुत रूप को धारण किये हुए नरसिंह और न पुरुष अपितु नरसिंह के रूप में, सभा में स्थित स्तम्भ में प्रभु दिखाई दिये। जिसे देखकर सभी आश्चर्य में डूब गये। यह कैसा विचित्र रूप है, न सिंह है न पुरुष। इस प्रकार विचार ही कर रहे थे कि अत्यन्त भयानक, तपे हुए सोने के समान चमकीली आंखों वाले, सुनहरी रोमावली से युक्त मुँह फैलाये हुए, कराल दाढ़ें, तीक्ष्ण जिह्वा, भयंकर भौंहें, कान खड़े किये हुए, पर्वत की गुफा के समान गहरी नासिका से युक्त, भीषण ठोड़ी, आकाश को स्पर्श करते हुए विशाल शरीर, छोटी किन्तु सुदृढ़ ग्रीवावाला विशाल वक्षःस्थल, कृश कटि, भूरे-भूरे वालों वाले तथा अत्यन्त कठोर नखों से युक्त भगवान् नरसिंह प्रकट हुए।"

इस प्रकार का अपूर्व अवतार लेने के कारण तथा परम पराक्रमी राक्षसराज का विनाश करने के कारण भी विष्णु के मन में अहम्भाव जागा। साथ ही क्रोध का आवेग भी पराकाष्ठा पर पहुंच चुका था। अनेकविध स्तुतियां हो रही थीं। सभी देवगण चिन्तित थे कि क्रोध का शमन कैसे हो? अन्ततः भगवान् शिव ने इसका समाधान सोच लिया और उसी समय एक विचित्र पक्षी का रूप धारण किया और अपने पंजों से भगवान् नृसिंह को उठाकर उड़ गये। आकाश में उड़ते हुए उन्होंने इतना भीषण चक्कर लगाया कि सारा ब्रह्माण्ड प्रलयकाल के समान डोलता प्रतीत हुआ। नृसिंह अपने क्रोध को भूलकर स्वयं आश्चर्य में पड़ गये कि यह क्या हुआ? कैसे हुआ? और कुछ समय वाद उन्हें पृथ्वी पर सव देवताओं के समक्ष लाकर छोड़ दिया और भगवान् नृसिंह का क्रोध धीरे-धीरे शान्त हो गया।

इस असामयिक घटना से वातावरण ही वदल गया। तभी देवताओं ने भगवान् शरभ को देखा। उनका स्वरूप उस समय कैसा था, यह निम्नलिखित ध्यान से ज्ञातव्य है—

चन्द्रार्काग्निस्त्रिदृष्टिः कुलिशवरनखश्चञ्चलोऽत्युग्रजिह्वः,
काली दुर्गा च पक्षौ हृदयजठरगो भैरवो वाडवाग्निः।
ऊरुस्थौ व्याधिमृत्यू शरभवरखगश्चण्डवातातिवेगः,
संहर्ता सर्वशत्रून् स जयति शरभः सालुवः पक्षिराजः ॥[1]

---

१. आकाश भैरव-कल्प १६ अध्याय तथा निग्रह-दारुण-सप्तक-स्तोत्र।

चन्द्र, सूर्य और अग्निरूप तीन नेत्रवाले, वज्र के समान नखवाले, अत्यन्त उग्र एवं चञ्चल जीभवाले, जिसके दोनों पंख काली और दुर्गा से युक्त हैं, हृदय और उदर भाग में प्रलयकाल की अग्नि व्याप्त है, दोनों जङ्घाओं पर व्याधि और मृत्यु बैठे हुए हैं, जिसके उड़ने की गति प्रचण्ड वायु के वेगवाली है, ऐसा सर्व शत्रुओं का संहारक श्रेष्ठ शरभ-पक्षीरूप, 'शरभ, सालुव और पक्षिराज' नाम से अभिहित सर्वोत्कर्षशाली है—उसकी जय हो।

अन्य स्तुति-पद्यों में भी—"ज्वलनकुटिलकेश, रक्तपानोन्मद, पञ्चानन, कलंकि-चूड, भुजङ्गभूषण, दिगम्बर, वज्रदंष्ट्र, वज्रनख, अनेकभुज, अष्टचरण, चतुर्थशुक, मृगाङ्गलाङ्गूल, सुचञ्चु, सहस्रांशुशतप्रकाश, सपक्षिसिंहाकृति, प्रेतवाहन, शङ्खध्वनि तथा अप्रतिहतगति" आदि विशेषणों से इनकी स्तुति की गई है। तन्त्रशास्त्रों में श्रीशरभ का स्वरूप वर्णन करते हुए स्थान-स्थान पर इन्हें—"श्मशानरुद्र, प्रलयकालाग्निरुद्र, नील-भैरव, उग्रभैरव, महाभैरव" आदि नामों से व्यक्त करते हुए सर्वकर्मसाधक तथा रिपुदर्प-दमन के लिये पूज्य बताया गया है।

नृसिंहक्षोभनिवारणरूप कर्म का स्मरण दिलाते हुए प्रार्थना में कहा गया है—कि—

कनक-जठरगोद्यद् रक्तपानोन्मदेन,
प्रथित-निखिल-पीडा नारसिंहेन जाता।
शरभवर शिवेश! त्राहि नः सर्वपापा—
दनिशमिह कृपाब्धे सालुवेश-प्रभो त्वम्॥

तथा—

दंष्ट्रानखाढ्यः शरभः सपक्षश्चतुर्भुजश्चाष्टपदः सहेतिः।
कटीर-गङ्गेन्दुधरो नृसिंहक्षोभापहो मद् रिपुहास्तु शम्भुः॥

हङ्कारी शरभेश्वरोऽष्टचरणः पक्षी चतुर्थः शुकः,
पादाकृष्ट-नृसिंहविग्रहधरः कालाग्निकोटिर्यती।
विश्वक्षोभकरः सहेतिरनिशं ब्रह्मेन्द्रमुख्यैः स्तुतो,
गङ्गा-चन्द्रधरः पुरत्रयहरः सद्योरिहन्ताऽस्तु नः॥

नृसिंहमृत्यून्नतदिव्यतेजःप्रकाशितं दानव-भङ्ग-दक्षम्।
प्रशान्तिमन्तं विदधाति योमं सोऽस्मानपायाच्छरभेश्वरोऽव्यात्॥
योऽभूत् सहस्रांशु-शत-प्रकाशः, सपक्षिसिंहाकृतिरष्टपादः।
नृसिंहसंक्षोभ-शमात्तरूपः पायादपायाच्छरभेश्वरो माम्॥

'आकाश भैरव-कल्प' में कहा गया है कि—भगवान् भैरव ने लोकरक्षा के लिये अपने स्वरूप को ही यथासमय तीन रूपों में क्रमशः प्रकट किया।

—श्रीश्वर उवाच—

रहस्यं श्रृणु वक्ष्यामि भैरवस्य महात्मनः।
सर्वलोकैकरक्षार्थं तव देवेशि ! तत्त्वतः ॥
कदाचिल्लोकरक्षार्थं लीलयाकाश-भैरवः।
त्रिधा विभज्य स्वात्मानमधिष्ठाय जगत् स्थितः ॥
आकाशभैरवं पूर्वं द्वितीयं त्वाशुगारुडम्।
शारभं तु तृतीयं स्यादिति रूपत्रयं क्रमात् ॥२।१-३॥

इस प्रकार १—आकाश भैरव, २—आशुगरुड़ तथा ३—शरभ ये तीनों रूप श्रीभैरव के ही हैं तथा इनमें भी तीसरे स्वरूप शरभेश्वर के पुनः तीन रूप व्यक्त हुए—

तत्र तार्तीयरूपस्य त्रिधारूपं विशेषतः।
शरभं सालुवं चैव पक्षिराजमतः परम् ॥४॥ वही।

भगवान् शरभ-भैरव परम दयालु हैं। ये अपने भक्त की ही नहीं, अपितु अन्य देवताओं के भक्तों को कष्ट पहुंचाने वाले जो शत्रु हैं, उनका भी नाश करने के लिए तत्पर रहते हैं। 'ललितासहस्रनाम' की फलश्रुति में कहा गया है—

यस्त्विदं नामसाहस्रं सकृत् पठति भक्तिमान्।
तस्य ये शत्रवस्तेषां निहन्ता शरभेश्वरः ॥२६७॥

ऐसे अद्‌भुत पराक्रमी श्रीशरभेश्वर की उपासना यद्यपि विरले भक्त ही कर पाते हैं तथापि इनके उपासक की आकांक्षाओं की पूर्ति सभी देव पहले ही कर देते हैं। वाराणसी में एक ब्राह्मण श्रीशरभ के उपासक थे। उनकी प्रतिज्ञा थी कि वे किसी से न तो कुछ मांगते थे और न दान ही लेते थे और सदा उपासना में ही लगे रहते थे। इस कारण दरिद्रता का उनके यहां साम्राज्य था। एक बार दुःखित होकर उनकी पत्नी ने उनसे भला-बुरा कहा और साथ ही यह भी कह दिया कि—'तुम्हारा इष्टदेव कैसा है कि मेरे बालकों की भूख भी नहीं मिटा सकता ?" इस कथन से खिन्न होकर ब्राह्मणदेव घर से निकले और सोचा भगवान् विष्णु लक्ष्मीपति हैं, अतः उनसे प्रार्थना करूं। पास ही लक्ष्मी-नृसिंह भगवान् का मन्दिर था, वहां वे गये और मूर्ति के सामने खड़े हो गये। अपनी अयाचक-वृत्ति के कारण वे कुछ बोल नहीं पाये। किन्तु उनके तेजोमय भक्तिभाव से शालिग्रामजी की शिलामूर्ति पर स्वयं पानी बहने लगा, जो कि भय के कारण पसीना बह रहा था। और तत्काल नृसिंह भगवान् ने पुजारी को आज्ञा दी कि "इस ब्राह्मण को मेरे सामने से हटाओ, इसके घर ५०० मुद्राएँ अभी पहुंचाओ तथा भविष्य के लिए इनकी पूरी व्यवस्था करो।" इत्यादि। यह कुछ वर्ष पूर्व की ही सत्य घटना है जिसे हमने वहीं के परम साधक महानुभाव श्री अमृतवाग्भवचार्यजी महाराज से सुनी है।

श्रीशरभेश्वर-मन्त्र-विधान एवं स्तोत्र

श्रीशरभेश्वर भैरव की उपासना के लिए हम यहां संक्षेप में मन्त्र-विधान एवं पाठ के लिए एक स्तोत्र दे रहे हैं जो इस प्रकार हैं—

मन्त्र-विधान—

विनियोग—अस्य श्रीशरभेश्वर-मन्त्रस्य वामदेवऋषिः अतिजगतीछन्दः श्रीशरभो देवता ॐ खं वीजं स्वाहा शक्तिः मम कार्यसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यासः—

ॐ वामदेवऋषये नमः (शिरसि), ॐ अतिजगतीच्छन्दसे नमः (मुखे), ॐ श्रीशरभेश्वरदेवतायै नमः (हृदये), ॐ खं बीजाय नमः (गुह्ये), स्वाहा शक्तये नमः (पादयोः), विनियोगाय नमः (सर्वाङ्गे)।

करहृदयादिन्यासा: —

	(पहलीवार)	(दूसरीवार)
ॐ खें खां खं फट्—	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
प्राणग्रहसि प्राणग्रहसि हुं फट्	तर्जनीभ्यां नमः	शिरसे स्वाहा
सर्वशत्रुसंहारकाय	मध्यमाभ्यां नमः	शिखायै वषट्
शरभसालुवाय	अनामिकाभ्यां नमः	कवचाय हुम्
पक्षिराजाय	कनिष्ठिकाभ्यां नमः	नेत्रत्रयाय वौषट्
हुं फट् स्वाहा	करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः	अस्त्राय फट्

ध्यानम्— मृगस्त्वर्धशरीरेण पक्षाभ्यां चञ्चुना द्विजः।
घोरवक्त्रश्चतुष्पाद ऊर्ध्वनेत्रश्चतुर्भुजः॥
कालान्तदहनः पुण्यो नीलजीमूतनिस्वनः।
अरिस्तद्दर्शनादेव विनष्टबलविक्रमः॥
सटाछटोग्ररूपाय पक्षविक्षिप्तभूभृते।
अष्टपादाय रुद्राय नमः शरभमूर्तये॥

अथवा—

चन्द्रार्काग्निस्त्रिदृष्टिः कुलिशवरनखश्चञ्चलोत्युग्रजिह्वः,
काली दुर्गा च पक्षौ हृदयजठरगौ भैरवो जाठराग्निः।
ऊरुस्थौ व्याधिमृत्यू शरभवरखगश्चण्डवातातिवेगः,
संहर्त्ता सर्वशत्रून् स जयति शरभः सालुवः पक्षिराजः॥

इस प्रकार ध्यान करके निम्नलिखित मन्त्र का जप करें—

ॐ खें खां खं फट् प्राणग्रहसि प्राणग्रहसि हुं फट् सर्वशत्रुसंहारकाय शरभसालुवाय पक्षिराजाय हुं फट् स्वाहा।

एक अन्य मन्त्र इस प्रकार भी है—

ॐ नमोऽष्टपादाय सहस्त्रवाहवे द्विशिरसे त्रिनेत्राय द्विपक्षायाग्निवर्णाय मृगविहङ्गरूपाय वीरशरभेश्वराय ॐ ।

स्तोत्र-पाठ निम्नलिखित है। जप के पश्चात् अथवा केवल स्तोत्र का पाठ भी किया जा सकता है।

निग्रह-दारुण-सप्तकम्

कोपोद्रेकाति-निर्यन् निखिलपरिचरत् ताम्रभारप्रभूतं,
ज्वालामालाग्रदग्धस्मरतनुसकलं त्वामहं शालुवेश !
याचे त्वत्पादपद्मप्रणिहितमनसं द्वेष्टि मां यः क्रियाभि—
स्तस्य प्राणप्रयाणं परशिव भवतः शूलभिन्नस्य तूर्णम् ॥१॥
शम्भो ! त्वद्धस्तकान्तक्षतरिपुहृदयान्निःस्रवल्लोहितौघं,
पीत्वा पीत्वातिदीर्घा दिशि-दिशि विचरास्त्वद्गणाश्चण्डमुख्याः।
गर्जन्तु क्षिप्रवेगा निखिलजयकरा भीकराः खेललोलाः,
सन्त्रस्ता ब्रह्मदेवाः शरभ खगपते ! त्राहि नः शालुवेश ॥२॥
सर्वाद्यं सर्वनिष्ठं सकलभयहरं त्वत्स्वरूपं हिरण्यं,
याचेऽहं त्वाममोघं परिकरसहितं द्वेष्टि मां यः क्रियाभिः।
श्रीशम्भो त्वत्कराब्जस्थितकुलिशवराघातवक्षःस्थलस्य,
प्राणाः प्रेतेशदूत ग्रहगणपरिखाः क्रोशपूर्वं प्रयान्तु ॥३॥
द्विष्मः क्षोण्यां वयं याँस्तव पदकमलध्याननिर्धूतापाः,
कृत्याकृत्यैर्विमुक्ता विहगकुलपते ! खेलया बद्धमूर्ते।
तूर्णं त्वत्पादपद्मप्रधृतपरशुना तुण्डखण्डी-कृताङ्ग—
स्तद्द्वेषी यातु याम्यं पुरमतिकुलषं कालपाशाग्रबद्धः ॥४॥
भीमश्रीशालुवेश ! प्रणतभयहर प्राणजिद् दुर्मदानां,
याचेऽहं चास्य वर्गप्रशमनमिह ते स्वेच्छया बद्धमूर्ते।
त्वामेवाशु त्वदङ्घ्र्यष्टकनखविलसद्ग्रीवजिह्वोदरस्य,
प्राणा यान्तु प्रयाणं प्रकटितहृदयस्यायुरल्पायतेश ॥५॥
श्रीशूलं ते कराग्रस्थितमुसलगदावृत्तवात्याभिघाताद्,
यातायातारियूथं त्रिदशरविघनोद्धूतरक्तच्छटार्द्रम्।
सद्दृष्ट्वाऽऽयोधने ज्यामखिलसुरगणाश्चाशु नन्दन्तु नाना—
भूता वेतालपूगः पिबतु तदखिलं प्रीतचित्तः प्रमत्तः ॥६॥

अल्पं दोर्दण्डवाहुप्रकटितविनमच्चण्डकोदण्डमुक्तै —
वर्णैर्दिव्यैरनेकैः शिथिलितवपुषः क्षीणकोलाहलस्य।
तस्य प्राणावसानं परशरभ विभोऽहं त्वदिज्या-प्रभावै—
स्तूर्णं पश्यामि यो मां परिहसति सदा त्वादिमध्यान्तहेतोः ॥७॥
इति निशि प्रयतस्तु निरासनो ममभुखः शिवभावमनुस्मरन्।
प्रतिदिनं दशवारदिनत्रयं जपति निग्रह-दारुणसप्तकम् ॥८॥
इति गुह्यं महाबीजं परमं रिपुनाशनम्।
भानुवारं समारभ्य मङ्गलान्तं जपेत् सुधीः ॥९॥

इत्याकाशभैरव-कल्पे प्रत्यक्षसिद्धिप्रदे नरसिंहकृता शरभस्तुतिः॥

—×—

पायाद् श्रीशरभेश्वरः

रुद्रः पिङ्गल-कुन्तलस्त्रिनयनोऽत्युग्रः सपक्षो हरिः,
सर्पालङ्करणस्तथाऽष्टचरणस्तुर्यः शुकः सालुवः।
क्षोभं श्रीनरसिंहजं शमयितुं नीतावतारो हरः
पायाद् श्रीशरभेश्वरो विहगराट् सर्वार्थदः शङ्करः॥
काली दुर्गा पक्षयोर्यस्य संस्थे, स्वान्ते साक्षात् सुन्दरीराजमाना।
क्षोभं यातः श्रीनृसिंहो यतस्तं, देवं भीमं सालुवाख्यं नमामः॥
—रुद्रस्य

श्रीशरभ-सालुव-पक्षिराज के इन मन्त्रों के अतिरिक्त अन्य अनेक मन्त्र प्राप्त होते हैं। जिनमें पूजामन्त्र पूजा के लिए हैं, जबकि अन्य मन्त्र तान्त्रिक प्रयोगों की दृष्टि से बनाकर उपयोग में लाये जाते हैं और उनसे सभी कार्यों की सिद्धि प्राप्त होती है। विस्तार अधिक होजाने के कारण हमने यहां संक्षिप्त सूचन ही किया है। विशेष के लिए 'प्रपञ्चसारसारसङ्ग्रह' तथा 'आकाशभैरवकल्प' देखें।

———

अपराधक्षमापनस्तोत्रम्[1]

गुरोः सेवां त्यक्त्वा गुरुवचनशक्तोऽपि न भवे,
भवत्पूजा — ध्यानाज्जप - हवन - यागाद्विरहितः ।
त्वदर्चानिर्माणे क्वचिदपि न यत्नं च कृतवान्,
जगज्जालग्रस्तो झटिति कुरु हार्दं मयि विभो ॥१॥
प्रभो दुर्गासूनो तव शरणतां सोऽधिगतवान्-
कृपालो दुःखार्तः कमपि भवदन्यं प्रकथये ।
सुहृत्सम्पत्तेऽहं सरलविरलः साधकजन—
स्त्वदन्यः कस्त्राता भवदहनदाहं शमयति ॥२॥
वदान्यो मान्यस्त्वं विविधजनपालो भवसि वं,
दयालुर्दीनार्तान् भवजलधिपारं गमयसि ।
अतस्त्वत्तो याचे नतिनियमतोऽकिञ्चनधनः,
सदा भूयाद् भावः पदनलिनयोस्ते तिमिरहा ॥३॥
अजापूर्वो विप्रो मिलपदपरो योऽतिपतितो,
महामूर्खो दुष्टो वृजिननिरतः पामरनृपः ।
असत्यानासक्तो यवनयुवतीव्रातरमणः,
प्रभावात्त्वन्नाम्नः परमपदवीं सोऽप्यधिगतः ॥४॥
दयां दीर्घां दीने वटुक कुरु विश्वम्भर मयि,
न चान्यस्सन्त्राता परमशिव मां पालय विभो ।
महाश्चर्यं प्राप्तस्तव सरलदृष्ट्या विरहितः,
कृपापूर्णैर्नेत्रैः कमलदलतुल्यैरवतु माम् ॥५॥
सहस्ये किं हंसो नहि तपति दीनं जलमयं,
घनान्ते किं चन्द्रोऽसमकरनिपातो भुवितले ।
कृपादृष्टेस्तेऽहं भयहर विभो किं विरहितो,
जले वा हर्म्ये वा घनरससुपातो न विषमः ॥६॥

---

१. श्रीभैरव नामावली पाठ, जप, दीपदान आदि किसी भी विधि की पूर्ति के पश्चात् इस स्तोत्र का पाठ करना चाहिये। इससे त्रुटियों का अपराध क्षमा हो जाता है तथा कृपा प्राप्त होती है।

त्रिमूर्त्तिस्त्वं गीतो हरिहर विधातात्मक-गुणो,
निराकारः शुद्धः परतरपरः सोऽप्यविषयः।
दयारूपं शान्तं मुनिगणनुतं भक्तदयितं,
कदा पश्यामि त्वां कुटिलकचशोभित्रिनयनयम् ॥७॥
तपो योगं साङ्ख्यं यमनियमचेतःप्रयजनं.
न कौलार्च्चा-चक्रं हरिहरविधीनां प्रियतमम्।
न जाने ते भक्तिं परममुनिमार्गं मधुविधिं,
तथाप्येषा वाणी परिरटति नित्यं तव यशः ॥८॥
न मे काङ्क्षा धर्मे न वसुनिचये राज्यनिवहे,
न मे स्त्रीणां भोगे सखिसुतकुटुम्बेषु न च मे।
यदा यद्यद्भाव्यं भवतु भगवन् पूर्वसुकृतान्,
ममैतत्तु प्रार्थ्यं तव विमलभक्तिः प्रभवतात् ॥९॥
कियांस्तेऽस्मद्भारः पतितपतितांस्तारयसि भो,
मदन्यः कः पापी यजनविमुखः पाठरहितः।
दृढो मे विश्वासस्तव नियतिरुद्धारविषया,
सदा स्याद्विश्रम्भः क्वचिदपि मृषा मा च भवतात् ॥१०॥
भवद्भावाभिन्नो व्यसन-निरतः को मदपरो,
मदान्धः पापात्मा बटुकशिव ते नामरहितः।
उदारात्मन् बन्धो नहि तवक-तुल्यः कलुषहा,
पुनः सञ्चिन्त्यैवं कुरु हृदि यथा चेच्छसि तथा ॥११॥
जपान्ते स्नानान्ते ह्युषसि च निशीथे पठति यो,
महत्सौख्यं देवो वितरति तु तस्मै प्रमुदितः।
अहोरात्रं पार्श्वे परिवसति भक्तानुगमनो,
वयोऽन्ते संहृष्टः परिनयति भक्तान् स्वभुवनम् ॥१२॥

इति श्रीसिद्धयोगीश्वरश्रीघनैयालालशिष्येणात्मारामेण रचितं
श्रीबटुकप्रार्थनापराधक्षमापनस्तोत्रं समाप्तम्

॥ शुभमस्तु ॥

इस पुस्तक को पढ़ने पर आपको कैसा लगा? आपके सुझाव हमारे लिए बहुत महत्त्वपूर्ण हैं इससे भविष्य में हम आपकी अधिक सेवा कर सकेंगे। यदि आप चाहते हैं कि हमारे प्रकाशनों की सूचना नियमित रूप से आपके पास पहुंचती रहे तो हमें एक कार्ड पर अपना पता लिख भेजिये।

—मेघ प्रकाशन

बी-५/२६३ यमुना विहार, दिल्ली-११००५३

आपकी कोई भी समस्या है,
हमें लिखें
और उसके समाधान के लिए
पढ़े, एक अनोखी मासिक पत्रिका

आपकी
समस्या
हमारा
समाधान

हर परिवार के लिए
एक आवश्यक मासिक पत्रिका

एक प्रति : 10 रु. वार्षिक : 100 रु.

प्राप्ति स्थान :

मेघ प्रकाशन

239, गली कुंजस, दरीबाकलाँ, दिल्ली-110 006
दूरभाष : 3278761